**TEXT** DARK **WITHIN THE BOOK ONLY**

UNIVERSAL
LIBRARY
OU_186012
UNIVERSAL
LIBRARY

**OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY**

Call No. H83 D28 A Accession No. H3555

Author देवलसिंह

Title अन्याय का प्रतिकार १९५०

This book should be returned on or before the date last marked below.

ऐतिहासिक-ग्रन्थमाला का छठा ग्रन्थ

# अन्यायका प्रतिकार

( रहस्यमय ऐतिहासिक उपन्यास )

लेखक :

ठाकुर देवबलीसिंह

प्रकाशक :

श्रीकृष्णचन्द्र बेरी,

हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय,

पो० बक्स नं० ७०

ज्ञानवापी, बनारस सिटी

१९५०

[ मूल्य ४)

प्रकाशक :
श्रीकृष्णचन्द्र बेरी,
हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय,
ज्ञानवापी, बनारस सिटी

मुद्रक :
आर. एस. धवन,
कमर्शियल प्रिंटिंग वर्क्स,
गायघाट, बनारस

# अन्यायका प्रतिकार

## पहला परिच्छेद

"बबुई ! ओ बबुई !"

युवतीने चौंककर सिर उठाया और धीरेसे बोली—"क्या है, जगिया ?"

बाहरसे फिर आवाज आई—"जल्दी दौड़ आओ, तमाशा देखो।"

युवती माला गूंथना बन्द करके और कपड़े सम्हाल कर उठ खड़ी हुई और लपकी हुई घरके बाहरी बरामदेमें आकर जगियाके पास खड़ी हुई। वहां खड़ी होते ही उसने नीचे विस्तीर्ण राजपथपर जो दृश्य देखा उससे भौंचकसी रह गयी, रास्तेके दोनों किनारे मनुष्योंका ठठ लगा हुआ था। बीच रास्तेमें पुलिस और पल्टनकी फौज कतार बांधकर परेट करती हुई जा रही थी। खड़ी जनताके भीतरसे रह-रहकर गोलमालकी आवाज सुनाई पड़ रही थी। यह सब देखकर युवतीने अपने पास खड़ी हुई अपनी दासी जगिया, उर्फ जगरानीसे पूछा —"जगिया ! यह क्या बात है ?"

जगियाने भर गाल हंसी भरकर कहा—"देखती नहीं हो, तमाशा है।"

युवती—देखती तो हूं, पर कुछ भी नहीं समझती, कैसा तमाशा है ?

जगिया—जाननेकी जरूरत नहीं, सिर्फ देख लो।

युवतीने क्रोध भरे स्वरमें कहा—दुर मुहँजली ! बताती क्यों नहीं, मेरी जरूरत बेजरूरत क्या तू ही सब जानती है ?

जगिया रोनी सूरत बनाकर कहने लगी—हे राम ! मैं कहाँ जाऊँ। बात बातमें तड़पन झिड़कन ! निर्धन हूं, इसलिये क्या पशुसे भी नीच समझना चाहिये।

युवती—अरी तुझे नीच कौन कहता है ? तू तो अपने ही सब कुछ कहती और बनती है। एक बात पूछनेपर दस बार बकाये बिना कोई ठीक जवाब ही न देगी, जा यहांसे दूर हो।

जगिया—तुमलोग बड़े आदमी हो, चाहे दुरदुराओ चाहे घरसे निकाल दो, तुम्हें सभी सुहाता है। तुम पूछती थी क्या बात है, मैंने कहा तमाशा है, क्या झूठ बात है, दिन दहाड़े रास्तेमें लड़ाई करके गला काट लेना क्या यह कम तमाशा है।

युवतीने जरा चौंककर कहा—"गला काट लेना ? अरे किसने किसका गला काट लिया है ?"

जगिया—तुम्हारे उदयसिंहने।

दर्पणको फूंकनेसे जैसे वह पसीज जाता है वैसे ही युवती का मुख उदयसिंहका नाम सुनतेही पसीज उठा। उसने अधिकतर आश्चर्य्यसे पूछा—उदयसिंहने ! उदयसिंहने किसका गला काट लिया है ?

जगिया—सेनापति हसन साहबको जानती हो, उन्हींके भाईका गला उदयसिंहने काट लिया है। उन्हींको पकड़नेके

लिये किलेसे फौज आई थी, अभी थोड़ी ही देर हुई उन्हें हथ-कड़ी बेड़ी पहनाकर ले गई है।

नरम केलेके पत्तेको आगपर सेकनेसे जैसे वह क्षण भरमें पीला होकर सूख जाता है, वैसे ही युवतीका मुख भी शुष्क और विवर्ण हो गया, उदयसिंहने खून किया है, जैसे तैसे आदमीका खून नहीं, खुद बादशाहके प्रधान सेनापतिके छोटे भाई का। इसका परिणाम क्या होगा, यह तो सभी जानते हैं, सिंहके बच्चेको मारकर क्या कोई कुशलसे रह सकता है, हाय! हतभाग्य उदय!

युवतीने सिर उठाकर कहा—"जगिया तुझे कुछ मालूम हुआ है क्यों उन्होंने ऐसा किया है?"

जगिया—नहीं बबुई! मैं क्या घरसे बाहर निकलने पाती हूं, कि यह सब खबर रखती। मुझे जो कुछ यहाँ बैठे बैठे मालूम हुआ है सो तो तुम्हें बता ही दिया है।

थोड़ी देरतक चुप रहकर युवतीने कहा—"एक काम कर सकती है, जगिया?"

जगिया—जगिया कौन काम नहीं कर सकती, कहो न।

युवती—तू अभी उदयसिंहके घर जाकर खबर ले आ कि क्या बात है।

जगिया—अच्छा, जाती हूं।

युवती—और जाते समय लक्ष्मीके घर होती जा, उसे अभी मेरे पास भेज दे।

"अच्छा जाऊँगी" कहकर गहनोंको झनझनाती हुई जगिया मन्थर गतिसे चल पड़ी।

जगिया चली गई, इधर युवती उदास नेत्रोंसे सूनेमें देखती

हुई सोचने लगी। वह सोचने लगी कि उदयसिंहने यदि सचमुच हसन साहबके भाईका खून किया हो, तो उनकी क्या गति होगी। इस समय हसन साहबका ही प्रचण्ड प्रताप विराज रहा है, वह सम्राट्के प्रधान सेनापति हैं। उनके भाईकी हत्या करके क्या कोई निस्तार पा सकता है, यदि स्वयं ब्रह्मा आकर उन्हें सहाय हों तो वे भी उनका अनिष्ट नहीं कर सकते। दण्ड ? दण्ड विचार उठते ही युवती सिहर उठी और तुरन्त उसकी आँखोंसे आँसुओंकी धारा बहने लगी।

इसी समय पीछेसे एक अनिन्द्य सुन्दरी युवतीने वीणा विनिन्दित स्वरमें पुकारा—"तारा ! तुम रोती हो ?"

पाठकोंको अब मालूम होगया कि प्रथमा युवतीका नाम तारा या ताराबाई है। इसलिये अब ताराबाईके नामसे ही उसका उल्लेख किया जायगा। दूसरी युवती जो आयी, उसका नाम लक्ष्मीबाई है, वह भी पास ही के दूसरे महल्लेमें रहने वाली ताराकी सहेली है।

लक्ष्मीकी बात पहले तो तारा सुन ही न पायी फिर दुहरा कर पुकारने पर उसने सिर उठाकर देखा और जल्दीसे आँखें पोंछ कर बोली—"लक्ष्मी सुना है ?"

लक्ष्मीने दुःखके साथ कहा—"सुनती तो हूं, परन्तु अभी ठीक खबर मालूम नहीं हुई है। भैया दरबार गये हैं उनके आनेपर सब हाल मालूम होगा।"

तारा—यदि यही बात ठीक हो तो मेरी क्या गति होगी ?

लक्ष्मी—डरो मत, ईश्वर हैं न ?

तारा—यदि हसन साहबके भाईको उन्होने मारा हो तो

भगवानका सुदर्शन भी उनकी रक्षा नहीं कर सकता। सो तो जानती हो न ?

लक्ष्मी—पहले देखो बात भी ठीक है या नहीं।

तारा—बुरी बात सच होती ही है।

लक्ष्मी—अच्छा, यदि ईश्वर न करें, उदयका कोई मङ्गल नहीं हो तो तुम क्या करोगी ? तुमसे तो अभी उनका विवाह नहीं हुआ है।

तारा—विवाह नहीं हुआ है और होनेकी आशा भी नहीं है।

लक्ष्मी—क्यों ?

तारा—वहलोग गोत्रमें हमलोगोंसे नीच हैं। हमलोग राजपूतानाके राठौर क्षत्रिय होते हैं और वेलोग वहींके कोई अन्य क्षत्रिय हैं। इसलिये मेरे बाबूजी उनके साथ मेरा विवाह करना नहीं चाहते।

लक्ष्मी—तब रोकर क्यों मरती हो ?

तारा—तुमसे यह बात सुननेकी आशा नहीं करती, बहन ! जिसको जानेमें या अनजानमें एक बार हृदय दे दिया जाता है, वही हृदयका सर्वस्व हो जाता है। उसके लिये यदि कोई न रोये तो किसके लिये रोयेगा।

इसी समय मन्द-मन्द मुसकुराती हुई मँथर गतिसे हिलती डुलती हुई जगरानी आ पहुँची। मुस्कराहटको तो उसने खरीद रखा है। सुखमें हो या दुःखमें, हँसी उसके मुख पर लगी ही रहती है। हर वक्त हँसते रहनेके कारण यदि कोई घुड़की धमकी देता है तब भी वह हँसकर ही उसका जवाब दे देती है।

उसे देखते ही ताराने घबराकर पूछा—"जगिया, क्या खबर है ?"

जगिया—खबर और क्या है उदयसिंह हवालातमें हैं।

ताराकी आँखें भर आईं। उसने गला साफ करके कहा—"तो क्या सब बातें सच हैं?"

जगिया—सच नहीं तो क्या झूठ हैं। कल रातको यह घटना हुई है।

तारा—क्यों खून किया है, सुना है?

जगिया—हाँ, गई थी तो, सब सुने बिना कैसे आती। हसन साहबके भाईने एक गरीब ब्राह्मणकी लड़कीको जबर्दस्ती पकड़ लानेके लिये दस लठैतोंको भेजा था। उस महल्लेके विश्वनाथ-को यह बात मालूम होनेपर उसने अपने नौकर चाकरोंको लेकर ब्राह्मण परिवारकी रक्षा की थी और लठैतोंको मार भगाया था। यह बात मालूम होनेपर हसन साहबके भाईने बहुतसे लठैतोंके साथ विश्वनाथके मकान पर चढ़ाई की थी। विश्व-नाथ अभी लड़का ठहरा, बेचारा क्या करता, इस विपदमें उदयसिंहकी शरण आया। उदयके यहां बहुत आदमी नहीं थे, परन्तु पांच ही जवानोंके साथ वह वीर युवक सैकड़ों जवानों के बीच कूद पड़ा। उनके समान क्या यहाँ कोई दस बीस कोसमें जवान हैं? अकेले ही वह गाजर मूलीकी तरह मुसल-मान लठैतोंको काट काट कर गिराने लगे। लोग कहते हैं कि उस समय उनकी लड़ाई और पैंतरा बदल-बदलकर वार करना देखने ही लायक था। थोड़ी ही देरमें सभी जवान तितर-बितर होगये, परन्तु हसनका भाई किसी तरह भी न मानता था, वह आगे बढ़कर उदयसिंहसे लड़ने आया, परन्तु सिंहके सामने गीदड़ कब तक टिक सकता था। थोड़ी ही देरमें उन्होंने अपने वीर दर्पसे उसे टुकड़े-टुकड़ेकर डाला।

नई पनपती हुई दूबपर जैसे शिशिर-कण पड़नेसे वह एक बारगी चमकने लगती है और अधिक कनोंसे उज्जल हो जाती है, उसी प्रकार ताराका चेहरा उत्साहसे चमक उठा और नेत्रोंमें आनन्दाश्रु उमड़ आये; परन्तु दूसरे ही क्षण गंभीर और निरुत्साह पूर्ण स्वरमें उसने कहा —"फिर ?"

जगिया—फिर उदयसिंह घर लौट आये। उन्हें जरा हल्कीसी चोट भी लगने नहीं पायी थी। सभी लोग उनको धन्य धन्य कहने लगे थे।

तारा—इसके बाद ?

जगिया—इसके बाद सबेरा होते न होते पल्टनके अनेक सिपाहियोंने उनके मकानपर धावा मारा है। उदयसिंह अपनी शक्तिभर उनसे भी लड़े थे। अन्तमें हार मानकर उनके हाथ बन्दी हो गये थे।

तारा—विचारका दिन कब है, जानती है ?

जगिया—उदयसिंहके घरके लोग कहते थे, आज ही रातको विचार होनेवाला है। खास दरबारमें होगा।

तारा—अच्छा, तो तू अब जा अपना काम कर।

जगिया चली गई। ताराने कातर कण्ठसे कहा—"बहन, सब सुना तो ?"

लक्ष्मी—सब तो सुना। इसका क्या परिणाम होगा सो समझती हूं; परन्तु तुम्हारा ही परिणाम सोच-सोचकर मैं विकल हो रही हूं।

"अच्छा तो मैं अब जाती हूं।" कहकर वह चली गयी।

*

# दूसरा परिच्छेद

शाहंशाह शाहजहां जिस समय दिल्लीका सम्राट था उस समय गोलकुण्डा एक स्वाधीन राज्य था परन्तु उसका भी शासक उस समय एक मुसलमान नवाब ही था, जिसका नाम कुतुबशाह था। कुतुबशाहकी उमर ढल चुकनेपर भी उसकी विलास-लालसा नवयुवकोंसे किसी प्रकार कम न थी। इसके सिवा ऐयाशी, आराम तलबी और बेपरवाही आदि गुण जो नवाबी जैसे उच्च पदके लिये अत्यन्त आवश्यक समझे जाते हैं, नवाब बहादुर-शाह कुतुबमें वे सभी गुण वर्तमान थे! नवाब लोगोंका सब कार्य्य नौकर-चाकरों और कर्मचारियोंके द्वारा ही होता था। इसलिये कुतुबशाहकी नवाबीमें भी प्रजाकी जान-माल और इज्जत-आबरू नवाब बहादुरके कर्मचारियोंकी इच्छा और अनुकम्पापर ही निर्भर करती थी। यह कहनेकी विशेष आवश्यकता नहीं कि सभी कर्मचारी अपना उत्तरदायित्व नहीं समझते थे! और न वे न्यायान्यायकी कोई हस्ती ही मानते थे! शासन और शृंखलाके नामपर दोषी सोहनके बदले निर्दोषी मोहनको फाँसी होना एक आम बात थी! यह नवाबी प्रजापालन अपनी न्यायकी पराकाष्ठापर पहुँचा हुआ था; क्योंकि रामकी सम्पत्ति श्यामको अक्सर मिल जाती। कर्मचारी गण—कोई स्वार्थसे, कोई अर्थलोभसे, कोई इन्द्रिय-परितृप्तिके लिये, कोई अनुगत जनोंके अनुरोधसे, कोई स्वजनोंके प्रेमसे—प्रजाके ऊपर नाना प्रकारके अत्याचार और अनाचार किया करते थे। उनकी

पसीनेकी कमाई लेते, घरका गड़ा धन उखाड़ लाते और सुन्दरी युवती स्त्री, कन्या, बहन आदिको लेकर गृहस्थी चलाना तो एक प्रकारसे असम्भव ही था। जहाँ किसी बड़े मियाँकी नजर पड़ी कि उत्पात मचा। सम्राट्लोग इस प्रकारके उत्पातों और अनाचारोंसे बिल्कुल निर्लिप्त रहते थे बल्कि सच्ची बात मालूम होनेपर वे लोग कभी कभी कड़ा दण्ड भी अत्याचारीको दिया करते थे! परन्तु उनके कानोंतक सभी बातें पहुँचें तब तो! यदि कोई मनुष्य सम्राट्के पास उसकी निम्न अदालतोंके न्यायकी प्रार्थना करता भी था तो कर्मचारियोंकी कूटचालसे इसका उल्टा ही नतीजा होता था। इसलिये अकारण और बिना दोषके ही, सम्राट् और शासक गण भी दोषी समझे जाने लगे थे और प्रजा उनके भी विरुद्ध होती जाती थी। जिस राज्यमें न्याय नहीं मिलता वहांकी प्रजा कभी सन्तुष्ट नहीं रह सकती।

गोलकुण्डा एक समृद्धिशाली नगर है--वहां कितनी ही हीरेकी खाने हैं। दूर दूरके विदेशी व्यापारी यहाँ आकर खानें ठीकापर ले लेकर बहुत लाभ उठाते हैं। जहाँ जितना ही अधिक धन उत्पन्न होता है वहाँ चोर, डाकुओं और अर्थ पिपासुओंका भी उतना ही प्रादुर्भाव होता है। गोलकुण्डाके भाग्यमें भी यही हुआ था। सिर्फ धनियोंपर ही चोर डाकुओंकी नजर नहीं रहती थी, गरीबोंकी थाली, लोटिया चुरा लेनेमें भी उन्हें आनाकानी न थी। कई एक राजकर्मचारी भी कितने ही डाकुओंसे मिले हुए थे। प्रजाका धन लुटवाकर वे अपना घर भरते थे। ठीकेदारोंको बादशाहकी सनद लेकर खानकी रक्षाके लिये थोड़ी थोड़ी सेना भी रखनी पड़ती थी।

पहर भर रात बीत चुकी है। चारों ओर बहुमूल्य मखमली आसनोंपर कर्मचारी वृन्द और अमीर उमरावगण बैठे हैं। बीचमें मणिमुक्ता रचित रत्न-सिंहासनपर नवाब कुतुबशाह आसीन हैं। दोनों तरफ ही सुन्दर बालक चँवर डुला रहे हैं, वीर पोशाकमें लैश चालीस शरीररक्षक सन्तरी एक किनारे अदबसे खड़े हैं। असंख्य दर्शक इधर उधर खड़े हैं, चारों ओर निस्तब्धता और गम्भीरता छा रही है।

शृंखला-बद्ध अवस्थामें ही यथासम्भव कोर्निश आदि करके आसामी उदयसिंह कठघरेपर खड़े किये गये। एक शान्ति रक्षक मुकदमेका सारांशमें आभास देकर उससे भी अधिक कोर्निश करके अपनी जगहपर बैठ गया।

अब एक जवान मुसलमान उठा। उसकी सुन्दरता अवर्णनीय, ललाट ऊँचा, देह बलिष्ठ और दीर्घ, रेशमकीसी छोटी छोटी दाढ़ी, युवक सारे अंगसे ही सुन्दर सुहावना था। उसका नाम अबुल हसन था। परन्तु सब लोग हसन साहब ही कहा करते थे, हसनसाहब वर्तमान नवाब कुतुबशाहके प्रधान सेनापति हैं।

हसन साहबने उठकर यथायोग्य अभिवादन करके जल्द गम्भीर स्वरमें कहा—इस अभागे बन्दीने मेरे निर्दोष भाईको पशुकी तरह निर्दयतापूर्वक मार डाला है। इसलिये जहाँपनाह हुक्म दें कि इसको पींजरेमें बन्द करके बाघसे जीते जी फड़वा डाला जाय। दर्शक मण्डली कौतूहलपूर्वक कुतुबशाहकी ओर देखने लगी। यद्यपि यह सभीको विश्वास था कि यहाँ न्यायकी आशा दुराशा मात्र है, परन्तु बिल्कुल आशाका निर्मूल हुए तक मनुष्यका कौतूहल बना ही रहता है। खैर, कुतुबशाहने गम्भीर

स्वरमें कहा—इस बन्दीने जितना बड़ा अपराध किया है, उसके अनुसार उसका दण्ड और भी कड़ा होना चाहिये। परन्तु हमारे दयालु सेनापतिने यह जो छोटासा दण्ड निर्धारित किया है वही कायम रहता है। कल सबेरे इस युवकको लोहेके पींजड़ेमें बन्द करके खुले मैदानमें दो भूखे बाघोंको छोड़कर फड़वा डाला जाय, जिसे देख-सुनकर दूसरा कोई ऐसी शरारत करनेका साहस न कर सके। किसीको भी इस विचारपर आश्चर्य न हुआ, क्योंकि सबने पहलेसे यह अनुमानकर रखा था, अब सब लोग उदयसिंहके भाग्यको रोते और कलपते हुए अपने घरको चले। लक्ष्मीबाईके भैयाने भी सब हाल जाकर लक्ष्मीसे सुनाया, वह शाही दरबारके पुलिस विभागके प्रधान कर्मचारी थे, उनका भी बड़ा रोब दाब था।

लक्ष्मीके द्वारा यह दुःसम्वाद ताराको भी मालूम हो गया, उसने सारी रात रो रोकर काटी।

# तीसरा परिच्छेद

दूसरे दिन भोर होते ही गोलकुण्डाके किलेके सामनेकी विस्तीर्ण वध्यभूमि विपुल जनतासे भर गयी। गाड़ी घोड़ोंका चलाचल एकबारगी नष्ट हो गया, जनताकी धक्का-धुक्की और ठेल-मठेलसे गर्दनें छिलने लगीं। यह सारा जन समुदाय एक उदयसिंहकी मृत्युका अभिनय दृश्य देखनेके लिये उत्सुक होकर खड़ा है। विलम्बके कारण सभी लोग बेचैन हो रहे हैं।

देखते देखते पहर भर दिन चढ़ आया, सूर्य्यकी प्रखर किरणोंसे सबका बदन तपने लगा, मुखसे पसीना छूटने लगा, परन्तु किसीका यह अभिनय दृश्य देखनेका हौसला न दूर हुआ। व्याघ्र जुलूसके आनेमें देर होती देख सबने आपसमें ही ठेल मठेल आरम्भ कर दिया। आगेके लोग पीछे ठेलने लगे और पीछेके लोग आगे बढ़नेकी चेष्टा करने लगे। जो शक्तिमान् थे, बलवान् थे वे दुर्बलोंको कुछ चीज ही न समझते थे, जो दुर्बल थे वे जान बचाकर पीछे हटते जाते थे, उन्हींपर पुलिसकी भी कृपा थी। कमजोर देख देखकर ही उनकी बेतोंसे धूल झाड़ी जाती थी।

देखते देखते बन्दीका जुलूस आता हुआ दिखाई देने लगा, सब लोग उत्सुक दृष्टिसे उधर ही देखने लगे। कहारोंने दो पिंजरोंको लाकर एक दूसरेसे सटाकर रख दिया, एकमें बाघ बन्द था और दूसरेमें उदयसिंह थे। एक राज-कर्मचारीके हुक्मसे एक साहसी जवान मनुष्यने कौशलसे भिड़ाये हुए, उदयसिंह और व्याघ्रके बीच लगाया हुआ दरवाजा खोल दिया।

भूखे बाघने सामने मनुष्यको देखा। घुटने टेककर वह बैठ गया और अपने लोहित नेत्रोंको फाड़-फाड़कर उदयसिंहकी तरफ देखने लगा। उदयसिंह भी उठ खड़े हुए।

क्षण भरमें बाघ कूदकर उदयसिंहके ऊपर जा ही तो पड़ा। परन्तु दूसरे ही क्षण दर्शक मण्डली यह देखकर स्तम्भित हो गयी कि नाकके ऊपर उदयसिंहका एक जबर्दस्त घूसा खाकर बाघ दुम हिलाता हुआ पीछे हट आया है! और दूसरी बार पूरे क्रोधसे आक्रमण करनेकी तैयारी कर रहा है। दर्शक-मण्डली फिर उत्सुक होकर बाघकी बाट देखने लगी फिर बाघने कूदकर उदयसिंह पर वार किया, फिर उदयसिंहने उसको इस तरह झटका देकर दूर हटा दिया जैसे किसी बिल्लीको हटा दिया जाय। यह दृश्य देखकर सारी दर्शक-मण्डली जयकारकर उठी।

परन्तु राज-कर्मचारियोंको इससे बड़ी लज्जा मालूम हुई उन्होंने बार बार बाघको खोद खोदकर उसकाया परन्तु बाघने अब आगे बढ़नेका नाम भी न लिया। अन्तमें लाचार होकर बाघका दरवाजा बन्द करके उसके पालकोंने उसको अलग कर लिया। कर्मचारीने दरबारमें इसकी खबर भेजी। प्रधान अमात्यने तुरत ही उसके उत्तरमें लिख भेजा कि—"अभी इससे अधिक जबर्दस्त बाघ व्याघ्रशालामें एक भी नहीं है। इसी लिये कैदीको कारागारमें भेज दिया जाय। इसी बीचमें अच्छा बाघ लाकर नवाबसाहबका आदेश पालन किया जायेगा।"

प्रधान अमात्यके आज्ञानुसार उदयसिंह फिर पिंजरेमें बन्द होकर कैदखानेमें भेज दिये गये।

दर्शक-मण्डली उपसंहार तक न देख सकनेके कारण उदास चित्तसे अपने अपने घरको चली गयी।

---

# चौथा परिच्छेद

घनघोर अमावस्याकी रात है। आधी रातका समय है। गोलकुण्डाके कारागारके बाहर और भीतर पूरी निर्जनता और सन्नाटा छाया हुआ है। कारागारके भीतर सभी कैदी सोये पड़े हैं सिर्फ अकेले उदयसिंह जगे हैं। आज बाघसे लड़ाई करनेसे उन्हें कठिन थकावट हुई थी, इसलिये कैदखानेमें आते ही कुछ जलपान करके तुरत सो गये। दो चार घन्टेकी नींदसे उनकी थकावट कुछ दूर हुई है। अब वह बैठे हुए अपना अदृष्ट चिन्तन कर रहे हैं! अपने पिता, माता और आत्मीय स्वजनोंकी दुर्दशाका चिन्तन करके वह उदास हो रहे हैं!

सोचते ही सोचते सहसा उन्हें मालूम हुआ मानों कोई दरवाजेकी सीकलको तेज रेतीसे घस-घस कर काट रहा है। वह उठकर देखना ही चाहते थे कि सहसा दरवाजेको हटाकर एक आदमी भीतर घुस आया और आते ही उसने भीतरसे दरवाजा भिड़ा दिया। उस आदमीने भीतर प्रवेश करते ही शीघ्रतासे दरवाजा भिड़ा दिया और धीमी परन्तु गम्भीर आवाज में पूछा—"कैदियों! तुममें कोई जगा है?"

उस कालकोठरीमें अकेले उदयसिंह जाग रहे थे। उन्होंने उत्तर दिया "मैं जगा हूं, आप कौन हैं जो इस प्रकार छिपकर कैदखानेमें प्रवेश कर रहे हैं! आश्चर्य्यकी बात है! आपने ड्योढ़ीदारोंकी आंखोंमें धूल कैसे झोंकी!"

उदयसिंह—इसमें जीव-हत्या होनेकी सम्भावना है। मेरी एक जानके लिये इतने निर्दोष लोगोंको मारना मैं उचित नहीं समझता।

आगन्तुक—जीवहत्या करना यदि इतना ही पाप है तो हसन साहबके भाईको क्यों मारा था?

उदयसिंह—अपने आश्रितकी रक्षाके लिये।

आगन्तुक—यह हत्या भी तो आश्रितकी रक्षाके लिये ही है।

उदयसिंह—इस समय मेरा आश्रित कौन है?

आगन्तुक—तुम हिन्दू हो—हिन्दू धर्म तुम्हारा आश्रित है। तुम प्रजा हो—प्रजामण्डल तुम्हारा आश्रित है। तुम सबल हो—निर्बल तुम्हारे आश्रित हैं। इसके सिवा तुम्हारे माता पिता आत्मीय कुटुम्ब तुम्हारे आश्रित हैं। तुम्हारे मरनेपर उन्हें देखने सुननेवाला कोई नहीं रहेगा।

माता पिताका स्मरण होते ही उदयसिंहकी आँखोंमें आँसू भर आये। उन्होंने कहा—"मेरे लिये आप इतनी फिक्रमें क्यों पड़े हैं? आप डाकू हैं—डाकूके हृदयमें इतनी दया क्योंकर हुई? साफ कहिये, आप मुझे छुड़ाने क्यों आये हैं?

आगन्तुक—अभी यह जाननेकी तुम्हें जरूरत नहीं।

उदयसिंह—अच्छा मान लेता हूं कि पहरेदारोंको हमलोग मार सकते हैं; परन्तु हमलोगोंके भागनेके पहले ही यदि किलेसे फौज आ पहुँचे? तब आप क्या करेंगे?

आगन्तुक—मैंने इसका भी प्रबंधकर लिया है।

उदयसिंह—मैं कैदी हूं, मेरे पास कोई हथियार नहीं है, सो तो आप जानते ही हैं।

आगन्तुक—हाँ, जानता हूं। इसीलिये अपने साथ पाँच बंदूकें और दस तलवारें लाया हूं।

उदयसिंह—इतनेकी क्या जरूरत है ?

आगन्तुक—यदि और कोई कैदी मेरे साथ चलना चाहे तो चल सकता है। उन्हें भी उठाओ।

उदयसिंह—क्या आप सभीको ले जा सकेंगे ?

आगंतुक—मैं उन्हें ले चलनेका भरोसा नहीं दे सकता हूं, परन्तु वे मेरे साथ चल सकते हैं। इसके बाद उदयसिंहने धीरे धीरे सभी कैदियोंको जगाकर पूछा—तुमलोग बाहर चलोगे ?

प्रथम कैदी—कैदी हूं, बाहर कैसे जाऊँगा ?

आगन्तुक—यदि जरा साहस करो तो जा सकते हो।

कैदी—हममें साहसकी क्या कमी है। जिसे आज या कल मरना ही है। उसे साहस करनेसे कोई अधिक दण्ड क्या दे सकता है ?

आगन्तुक—अच्छा तो सभीको उठाओ और मेरे साथ निकल चलो।

कैदी—आप कौन हैं ?

आगन्तुक—भास्करतीर्थ।

कैदी—डाकू भास्कर ! जानता हूं। उनके लिए असम्भव कुछ भी नहीं है। परन्तु हमलोग बाहर निकलकर ही क्या करेंगे ! फिर जब पकड़े जाकर दस गुना दण्ड ही भोगना पड़ेगा।

आगन्तुक—अभी निकलतो चलो। कुछ दिन मेरे अड्डे पर रहना। फिर देखा जायगा।

अब उस कैदीने एक एक करके सभी साथियोंको जगा दिया। उदयसिंहने जोरदार शब्दोंमें कहा—भाइयो ! स्त्रियों की तरह चुप चाप बैठे रहनेकी अपेक्षा एकबार चेष्टा करके देखना अच्छा है। विख्यात डाकुओंके सरदार भास्करतीर्थ हमें अत्याचारीके हाथसे छुड़ानेके लिये स्वयं यहाँ आये हैं। चलो, हमलोग इनके साथ बाहर निकल चलें। तुममेंसे जो जो हथियार चलाना जानते हों एक एक हथियार ले लें, हमें पहरेदारोंको मार काटकर निकल भागना होगा। परन्तु खबरदार ! कोई दलसे बाहर न निकलना, नहीं तो बचना कठिन हो जायगा।

सभी कैदी उठ खड़े हुए। सबोंने प्रतिज्ञा कर ली कि शरीरमें एक बूंद खून रहते, फिर इस कैदखानेमें लौटकर न आयेंगे। फाटक पर पहरेदारोंके हाथसे मरना पड़े वह भी अच्छा।

भास्करतीर्थने उदयसिंहसे कहा—तुम आगे रहो और मैं पीछे रहता हूं, इन कैदियोंको बीचमें कर लो पिछले भागपर अधिक झोंक आनेका डर है। इसलिये मेरे पीछे न रहनेसे न चलेगा।

उदय०—आप ही आगे रहिये, क्या क्या करना होगा, मैं क्या जानूं ?

भास्कर—नहीं पीछेका आक्रमण सम्हालना तुम्हारे लिए कठिन होगा, तुम आगे ही रहो।

उदय०—आपको कोई चिन्ता न करें, मैं पीछेका भार लेता हूं।

"अच्छा तुम जानो, मैं आगे चलता हूं।"

इतना कहकर भास्करतीर्थ कैदी दलके आगे आगे चले, और उनके पीछे सभी कैदी एक एक हथियार लेकर चल पड़े। पीछे उदयसिंह रहे।

भास्करके एक हाथमें दो नली बन्दूक और दूसरेमें चमकती हुई तलवार थी। कितनेही कैदियोंके हाथोंमें तलवार और कितनेहीके हाथोंमें बन्दूकें थीं, उदयसिंहके हाथोंमें तलवार और बन्दूक दोनोंही थीं।

सदर फाटकपर पहुँचकर भास्करतीर्थने अपने तेज चाकूसे सीकलको सहजही काट डाला। सीकल काटते समय दो एकबार "घस घस" "खस खस" की आवाज हुई थी जिसे सुनकर झेंपते हुए पांडेजीने चौंककर अपने साथी वरकन्दाज खांकी तरफ देखकर पूछा—"भइया! यह कैसी आवाज होती है?"

खाँ साहब कान खड़ेकर उस आवाजको सुननेकी चेष्टा कर रहे थे, कि इतनेमें ही बंधे हुए सोतेकी तरह सभी कैदी बाहर निकल पड़े। "या सुभान्नल्ला क्या मुश्किल हुआ" कहकर खाँ साहबने जैसे ही अपनी सङ्गीन सीधी की और पांडेजीने अपनी तलवार म्यानमेंसे निकाली वैसेही भास्करतीर्थने भीषण वेगसे उनपर आक्रमण किया और खाँजीका बायाँ हाथ और पांडेजीके कन्धेको उनके शरीरसे जुदा कर दिया। पहरेदारोंने विकट चिंघार करके दरवाजे पर लटकाये हुए घण्टेको जोरसे हिला दिया और तुरत बेहोश होकर वहीं गिर पड़े।

कैदियोंको बाधा देने वाला अब कोई न रहा, एक गलीसे होकर सभी लोग एक तरफ भाग चले।

बहुत दूर चलकर सबलोग एक पीपलके पेड़के नीचे जा कर खड़े हुए। उदयसिंहने भास्करकी ओर देखकर कहा—

"कैदखानेकी तरफसे बन्दूककी आवाज अब भी सुनाई पड़ रही है। मालूम होता है किलेसे फौज आ पहुँची है, परन्तु हमलोग तो यहाँ हैं, वे लोग बन्दूक किस पर छोड़ रहे हैं।

भास्कर—हाँ, किलेसे फौज आ पहुँची है, और उन्हें बन्दूक छोड़नेके लिए आदमी भी मिल गये जान पड़ता है। मेरा एक दल उन्हें रोकनेके लिये वहीं छिपा हुआ था, उसीके साथ सिपाहियोंकी लड़ाई हो रही है। यदि ऐसा प्रबंध न किया गया होता तो हमलोग यहाँतक निर्विघ्न न पहुँच सकते। इस समय दोनों दलोंमें खूब घमासान लड़ाई हो रही है, परन्तु अभीतक वे लोग लड़ रहे हैं। इसलिये आशङ्का होती है कि उन पर किसी प्रकारकी नई विपद न आ पड़े।

उदय०—नई विपद कैसी आ सकती है?

भास्कर—किलेसे दूसरी सेना आकर उन्हें पकड़ सकती है।

उदय०—चलिये न, हमलोग भी उनका साथ दें।

भास्कर—जरा ठहरो, जब जरूरत मालूम होगी तो जरूर चलना पड़ेगा।

उदय०—यहाँ से आप जरूरत कैसे मालूम कर सकेंगे?

भास्करने इस बातका कोई उत्तर न दिया, वह बहुत देर तक निस्तब्ध भावसे कान खड़े करके वहीं ठहरे रहे। फिर एकाएक बोल उठे—नहीं, हमलोगोंके जानेकी जरूरत नहीं; चलो हमलोग अड्डे पर चलें।

उदयसिंहने आश्चर्यसे उनकी तरफ देखकर पूछा—अब भी तो बन्दूकोंकी आवाजें सुनाई पड़ रही हैं। फिर आपको

मालूम कैसे हुआ कि उनके विपद्में पड़नेकी सम्भावना नहीं है।

भास्कर—मेरा दल भाग गया है।

उदय०—आपको कैसे मालूम हुआ।

भास्कर—हमारी बन्दूकोंकी आवाजें नहीं सुनाई पड़तीं।

उदय०—आपलोगोंकी बन्दूकें क्या भिन्न प्रकारकी होती हैं।

भास्कर—हाँ, हमलोग अपनी बन्दूकें अपने ही बना लेते हैं, उनकी आवाज साधारण बन्दूकोंसे भिन्न प्रकारकी होती है।

उदय०—परन्तु यह भी तो हो सकता है, कि आपके साथी पराजित होकर पकड़े गये हों।

भास्कर—यदि ऐसा होता तो सिपाहियोंकी बन्दूकोंकी आवाजें अब भी सुनाई न पड़तीं।

उदय०—यदि आपके साथी भाग ही गये हों तब भी तो उनकी बन्दूकोंकी आवाजें सुनाई नहीं पड़नी चाहिये। क्या वे वृक्षोंसे लड़ रहे हैं?

भास्कर—मेरे साथियोंका पीछा करते हुए सिपाही बन्दूक छोड़ रहे हैं।

उदय०—तब कहिये कि आपके साथी भाग नहीं सके हैं।

भास्कर—मेरे साथी जैसे लड़नेमें पक्के हैं वैसेही भागनेमें भी पक्के हैं। भागते समय वे लोग ऐसे तितर बितर हो भाग जाते हैं, कि उन्हें कोई नहीं पाता।

उदयसिंह—ऐसा ही मालूम होता है। सिपाही भी अब लौट पड़े।

# पांचवां परिच्छेद

दूसरे दिन गोलकुण्डापति शाह कुतुबुद्दीनको मालूम हुआ कि डाकू भास्कर कैदखानेमें प्रवेश करके कैदियोंको छुड़ा ले गया है। उसे बाधा देनेमें बहुत सिपाही मरे और घायल हुए हैं, परंतु वे डाकुओंमें किसीको भी धर पकड़ नहीं सके हैं।

नवाबका क्रोध, तिसपर जेलखानेसे कैदियोंको भगाने और सिपाहियोंको मारनेके कड़े अपराधके कारण, उष्णताकी ऊँची चोटीतक पहुँच गया। उन्होंने तुरत अपने सेनापति हसन साहबको बुलाकर कहा—"जेलखानेपर और भी कड़ा पहरा बैठाओ और जिस प्रकार हो सके डाकू भास्करको गिरफ्तार करनेकी चेष्टा करो। उसको गिरफ्तार करनेके लिये चाहो तो अपनी सारी फौज लेकर जा सकते हो। उसके समान मेरा विद्रोही दूसरा कोई भी नहीं है। वह जब चाहता है, तभी जेलखाना और किला तोड़ डालता है। उसने इस बार कितने ही सिपाहियोंको मार डाला है। एक डाकूके हाथसे नवाबको इस प्रकार हार खानी पड़े, इससे बढ़कर अपमानकी बात और क्या हो सकती है? यदि इस विद्रोहीको पकड़कर जल्दी दण्ड न दिया जायगा तो मेरी नवाबीके संभ्रम और सम्मानकी कोई हस्ती ही नहीं रह जायगी। उसके लक्षण भी अब दीखने लगे हैं। अभी हाल हीमें तुम्हारे भाईकी भी मृत्यु हुई है, उससे क्या प्रजाके विद्रोहका भाव नहीं टपकता।

भाईकी हत्याकी याद दिला देनेसे हसन साहबका भ्रातृप्रेम उबल उठा। उन्होंने तुरत प्रतिज्ञाकी कि मैं अवश्य ही भास्कर तीर्थको पकड़कर दरबारमें हाजिर करूँगा। यदि ऐसा न कर सकूँ तो मेरा नाम हसनइमाम अली नहीं।

नवाब साहबकी आज्ञा पाकर सेनापति हसन उसी दिन एक बड़ी फौज लेकर भास्करतीर्थको पकड़ने जानेका आश्वासन देकर घर आये।

# छठा परिच्छेद

थर्मापोलीके पहाड़ पर भास्करतीर्थके अड्डे हैं। पहाड़ की श्रेणियाँ बहुत दूरतक फैली हुई हैं। और उनके भीतर असंख्यों निर्जन और निस्तब्ध गुफायें हैं, जिन्हें खोजकर पता लगाना बहुत ही कठिन है। भास्करके दलके डाकू इन्ही गुफाओंमें रहते हैं। सभी एक स्थानपर बहुत दिनतक नहीं रहते। दूर-दूर पर एक घाटीके मुहाने पर बहुतसे डाकू दल बाँध कर रहते हैं। परन्तु वे लोग इतने सतर्क और सावधान रहते हैं, कि बाहरसे किसीको आते हुए देखते ही उसका पता पा जाते हैं! एक जगह पर एक आदमी यदि कोई संकेत करता है तो क्षण भरमें सभी घाटियों और सभी अड्डोंपर बातकी बातमें उस संकेतकी खबर लग जाती है। जिससे सभी लोग सावधान हो जाते हैं। इन डाकुओंका दल कितना बड़ा है, यह किसीको मालूम नहीं हो पाता, बहुत लोग अनुमान करते हैं कि भास्करके अधीन हजारों डाकू हैं। और बहुतोंका ऐसा भी विश्वास है कि वे संख्यामें बहुत नहीं हैं; परन्तु जो हैं वे चुने हुए जवान हैं।

भास्करतीर्थका अपना एक अलग कारखाना है, जिसमें पुरानी पद्धतिके अनुसार तलवार, बन्दूक और कमान बनाये जाते हैं। गोला बारूद और भाला बर्च्छा आदि छोटे बड़े सभी प्रकारके अस्त्र यहीं बना लिये जाते हैं।

हेमन्तकी चाँदनी रात है, पार्वतीय प्रदेशपर शीतलमंद

सुगंध वायु बह रही है। भास्करतीर्थ एक पहाड़की सबसे ऊँची चोटीपर एक विशाल शिलाखण्डके ऊपर बैठे हुए हैं। उनकी बगलमें उदयसिंह बैठे हुए बातचीत कर रहे हैं, दोनों ओर पहाड़ है, बीचमें कल-कल ध्वनि करता हुआ एक पहाड़ी सोता बह रहा है। चंद्रमाकी किरणें उसके स्वच्छ जलपर पड़कर मोतियोंकी तरह चमक रही हैं।

कुछ देरतक चुपचाप बैठे रहकर उदयसिंहने भास्करकी तरफ देखकर पूछा—अब मुझे क्या करना होगा? मैं शहरमें लौटकर क्या करूँगा, वहाँ जाते ही राज-कर्मचारियों द्वारा पकड़ा जाऊँगा और फिर बाघसे लड़ाई करनी पड़ेगी।

भास्कर—तुम्हें नगरमें जाने देनेके लिये इतना कष्ट सह-कर नहीं लाया हूं, तुम्हें अपने दलमें भर्ती करनेके लिये ही लाया हूं। तुम जब गोलकुण्डाके प्रधान धनी हीरक व्यव-सायी सत्यरामकी हीरेकी खानमें सेनाध्यक्षका काम करते थे, तभीसे मैं तुम्हारी वीरताकी बात जानता था। उसदिन तुम्हारी बाघकी लड़ाई भी मैंने देखी थी, वह दृश्य देखकर मुझे पूरा विश्वास हो गया है कि तुम हमारे दलके एक अच्छे सेनापति हो सकते हो। इसलिये मैंने इतनी तकलीफ सहकर अपनी जानको विपत्तिमें डालकर तुम्हें कारागारसे छुड़ानेके लिये उस दुर्गम और दुरारोह कारागारमें प्रवेश किया था।

उदय०—तो क्या आपकी इच्छा है कि मैं आपके दलमें भर्ती होकर डकैती करूँ?

भास्कर—हाँ, मेरी यही इच्छा है।

उदय०—मुझसे यह हीनवृत्ति कभी नहीं हो सकती। एक सभ्रान्त जमीन्दार वंशमें जन्म ग्रहण करके मैं डकैती करूँगा, इसकी आप कल्पना भी नहीं कर सकते। इसकी अपेक्षा मैं बनके बाघोंसे फाड़ा जाना हजारों बार अच्छा समझता हूं।

भास्कर—घर लूटनेसे चोर, गाँव लूटनेसे डाकू और राज्य लूटनेसे सम्राटकी पदवी मिलती है। तब क्या, लूटनेमें सचमुच इतना पाप है?

उदय०—आपकी विचित्र दलील है, इन कई दिनोंकी बातचीतसे मैंने समझा था, कि आप बड़े शास्त्रज्ञ और विद्वान हैं। परन्तु अब देखता हूं कि पहाड़पर अण्डेसे सांपका बच्चा पैदा होनेपर भी पक्षियोंकी तरह उड़ नहीं सकता, वह अपने जाति स्वभावके कारण नीचेही उतरता है। आप शास्त्रज्ञ पण्डित होते हुए भी अपने क्रूर स्वभावके कारण अपनी बुद्धि-विद्याको हीन कार्यमें लगाते हैं।

भास्कर—राज्य लूटकर क्या राजा नरकमें ही जाते हैं? यदि यही बात है तो युधिष्ठिर किस पुण्यके प्रभावसे सशरीर स्वर्ग गये थे? राजसूय अश्वमेध आदि यज्ञोंके समय तो उन्होंने देश विदेशके राजाओंका राज्य, धन लूटा था। कौरवोंको जो राज्य मिलना चाहिये था उसे लूटनेके लिये उन्होंने १८ अक्षौहिणी सेनाओंका संहार कराया था।

उदयसिंह—आप तार्किक विद्वान् हैं। आपसे बातोंमें मैं जीत नहीं सकता; परंतु इतना मैं अच्छी तरह जानता हूं कि चोर डाकूसे बढ़कर पापी दूसरा कोई भी नहीं है।

भास्कर—यह ठीक है। परंतु यदि राजा अपने विलास-

की सामग्री एकत्र करनेके लिये लूट न करके प्रजाके हितके लिये डकैती करे तो उसके समान दूसरा धर्मात्मा भी नहीं है। तुम कार्य्य पर ही ध्यान देते हो कारण की चिन्ता नहीं करते, इसीलिये डकैतीका नाम सुनते ही चौंक उठते हो, कोई भी कार्य्य हीन नहीं हो सकता यदि उसका उद्देश्य महान् हो! जीव-हत्यासे बढ़कर दूसरा पाप कौन हो सकता है? परंतु जब रामने रावणकी और कृष्णने कंस आदि दैत्योंकी हत्या करके प्रजाका दुःख दूर किया तब वे दोनों नरहंता समाजके आदर्श क्यों हो गये? इसी लिये हुए कि देश-समाजकी रक्षाके लिये उन्होंने पापीको उचित दण्ड दिया था। इसी प्रकार यदि डाकू भी सदुद्देश्यसे प्रेरित होकर डकैती करे तो उन्हें तुम घृणित कैसे कह सकते हो?

उदयसिंह—आपकी बातोंसे मेरे सारे जीवनका अनुभव उलटना चाहता है।

भास्कर—अच्छा बताओ तो सही कर्म किसे कहते हैं?

उदय०—जो किया जाता है, उसे ही कर्म कहते हैं।

भास्कर—वह स्थूल कर्म है। सूक्ष्म कर्म मनमें होता है। मनमें काम करनेकी जो इच्छा हो वह भी कर्म ही है। हाथ पैर बाँधकर बैठ रहने पर भी कोई कर्मसे विरत नहीं रह सकता। जीवन और कर्म घनिष्ठ भावसे एक दूसरेसे जुड़े हुए हैं! स्थूल कर्मको तुम देख सकते हो, परंतु सूक्ष्म कर्मको तुम देख नहीं सकते। इस लिये तुम सूक्ष्म कर्मके अस्तित्वको अस्वीकार नहीं कर सकते और न तो उन्हें तुम तुच्छ ही समझ सकते हो। यही वस्तु तो एक सूक्ष्म तत्त्व है, उसे कोई देख

नहीं सकता, परंतु उसका अस्तित्व इतना व्यापक और इतना प्रबल है कि उसी पर सबका जीवन निर्भर करता है, उसीसे समय पर बड़े वृक्ष भूतल शायी हो जाते हैं! विद्युत सूक्ष्म है। परंतु उसका भी प्रभाव कितना अधिक है, यह कहनेकी आवश्यकता नहीं। सारांश यह कि कार्य सभी करते हैं, कोई आसक्त होकर कर्म करता है और कोई अनासक्त भावसे कर्म करता है।

उदय०—क्या डाकू भी धर्मात्मा हो सकता है?

भास्करने ठहाका मारकर हँसते हुए कहा—हाँ, डाकू भी धर्मात्मा हो सकता है। जो मनुष्य देशके लिये, धर्मके लिये डकैती करता है, जो मनुष्य अत्याचारीके हाथसे दुर्बलकी रक्षा करता है, जो मनुष्य भूखेको अन्न और निराश्रयको आश्रय देनेके लिये डकैती करता है, वह डाकू होते हुए भी धर्मात्मा और पुण्यात्मा है—एक शब्दमें, स्वदेश, स्वजाति और स्वधर्मकी रक्षा करनेके लिये अनासक्त भावसे डकैती करना भी धर्मका अंग है। यदि ऐसा नहीं हो तो भूपति (राजा) त्रिभुवन पति (ईश्वर) का अंश नहीं समझा जाता।

उदयसिंह—आपकी इन बातोंसे मेरी दिलजमई नहीं होती।

भास्कर—दिलजमई इसलिये नहीं होती कि तुम इनका महत्त्वही नहीं समझते। इसके लिये सबसे पहले त्याग और परोपकारका आदर्श सामने रखनेकी आवश्यकता है। जो मनुष्य निर्लिप्त और निःस्वार्थ भावसे दूसरेका उपकार करना ही अपने जीवनका व्रत बना लेता है, वह इस पाप पुण्यका विचार नहीं करता। जिससे दूसरेका उपकार हो वही काम करता है—चाहे वह डकैती हो या चोरी।

उदयसिंह—हिन्दू धर्म-शास्त्रोंका यदि ऐसा ही आदेश हो, तो उसे पवित्र शास्त्र कहते हुए भी मुझे आशंका होती है।

भास्करतीर्थ ठहाका मारकर फिर हँस पड़े और हँसते हुए ही कहने लगे—"बालक! हिमालयके समान ऊँचा पहाड़ जैसे संसारमें दूसरा नहीं है, वैसे ही हिन्दूधर्मके समान महान् और उदार धर्म भी पृथ्वीपर दूसरा नहीं है। हिमालयपर जैसे चोटियोंपर चोटियाँ, शिखरोंपर शिखर, चूड़ाओंपर चूड़ायें और श्रेणियोंपर श्रेणियाँ हैं इसी प्रकार हिन्दू-धर्मकी स्तर—परम्पराओंसे भारतवर्षका आकाश पाताल भरा हुआ है। हिमालयकी कंदरायें, जैसे गहरी से गहरी अंधियारीसे अंधियारी और डरावनीसे डरावनी हैं, उसी प्रकार हिंदू-धर्म भी गंभीर, दुर्भेद्य और रहस्य पूर्ण है। हिमालय जैसे सर्वदा ही हिम-आलय है, उसमें किसी प्रकारका परिवर्तन, किसी प्रकारका आवर्तन नहीं होनेवाला है, सर्वदा ही शांत, स्वच्छ और उन्नत रहनेवाला है, उसी प्रकार हिंदू धर्मकी पवित्रता उज्ज्वलता और महानता अपरिवर्तनीय है। बालक! यदि हिंदूधर्ममें पवित्रता नहीं है तो समझना चाहियेकी पवित्रता नामकी कोई चीज संसारमें है ही नहीं।

उदय०—चोरी-डकैती और लूटत राज करना धर्म है, यह किस शास्त्रमें लिखा है?

भास्कर—मैंने तो पहले ही कह दिया है अपने लिये चोरी डकैती करनेमें ही पाप है। और लोभ-रहित होकर देश-हितके लिये जो डकैती की जाती है, वह पुण्यमें गिनी जा सकती है देशमें उत्पात हो ऊधम मचे, प्रजा अत्याचारीके अत्याचारसे जर्जर हो जाय, देशराजाकी विलासाग्निमें जलकर भस्म हो

जाय, मैं बैठे-बैठे आँख मूंदकर माला फेरता रहूं--यह हिंदू धर्मका सिद्धांत नहीं है,—सिद्धांत नहीं है इसलिये परशुरामजी को हाथमें फरसा लेना पड़ा था, ब्राह्मणोंको राजा पृथुकी भुजा मथनी पड़ी थी और कृष्णको अपने मामाके खूनसे अपना हाथ रंगना पड़ा था।

उदय०--तब तो परोपकारका जाल फैलाकर डकैती करना भी धर्मका अंग गिना जा सकता है ?

भास्करा—कपट और ढकोसला किसी भी बातका अच्छा नहीं है। इसी डकैतीको पेशा मान लेना ही उचित नहीं है। यदि कोई प्रबल किसी दुर्बलपर अत्याचार करता हो तो इस श्रेणीके डाकूओंका प्रधान कर्त्तव्य है कि अत्याचारीको दण्ड देकर गरीबोंकी सहायता करें यदि किसी गांवमें दुर्भिक्ष पड़ा है लोग खाने बिना भूखों मर रहे हैं, और निकट ही कोई धनी विलास-सागरमें गोते लगा रहा है, तो ऐसी अवस्थामें आदर्श डाकूका कर्त्तव्य है कि वह धनीके धनको लूटकर गरीबोंमें बाँट दे। क्योंकि धनकी अपेक्षा मनुष्योंका मूल्य अधिक है।

उदय०—परन्तु यदि राजा ही अत्याचार करे तो उसीके राज्यमें रहनेवाले थोड़ेसे ही डाकू उसका प्रतिकार क्या कर सकते हैं ?

भास्कर—थोड़ेसे ही बहुत होते हैं ! जब कोई कार्य्य आरम्भ किया जाता है, तब बहुत लोग उस कार्य्यसे सहानुभूति नहीं रखते ; परन्तु समयका अनुभव सभीको अन्तमें श्रद्धावान कर देता है। जो राजा अत्याचारी है, क्या वह सर्वदाके लिये अपनी प्रजाको बशमें रख सकता है ? किसी न किसी दिन विद्रोहकी

आग फूट ही पड़ती है। हमलोगोंने भी कार्य्य आरम्भ किया है भविष्यकी तरफ देखकर ही। हमलोग अपना कर्त्तव्य करते हुए उसी दिन की अपेक्षा कर रहे हैं जिस दिन राजाके अत्याचारसे तंग आकर देशका सारा प्रजा मण्डल क्या धनी, क्या गरीब, क्या पुरुष, क्या स्त्री, एक तन एक मनसे त्राहि त्राहि करके पुकार उठेंगे, उस दिन जो उनका त्राण करनेके लिये अग्रसर होगा, वही धर्मात्मा समझा जायगा, उसीका बात सुनी जायगी। युगोंसे यही बात होती चली आ रही है। अत्याचारका इतिहास भी इसी बातकी साक्षी देता है। क्या तुम अवतारकी बात जानते हो ?

उदय०—तो क्या आप कहना चाहते हैं कि छोटे छोटे अत्याचारी राजाओंको दण्ड देनेके लिये भी इश्वरको अवतार ग्रहण करना पड़ेगा ?

भास्कर—अत्याचारीकी जैसी शक्ति होती है, उसकी उपयुक्त शक्ति लेकर कोई महात्मा पुरुष आगे बढ़ सकते हैं। शक्तिका पूर्ण विकाश ही मनुष्यको अवतारमें परिणत कर देता है। या यों कह सकते हैं कि प्रत्येक मनुष्य ही ईश्वरकी शक्ति है। किसीमें उस शक्तिका अधिक विकास होता है और किसीमें कम।

इसी समय कुछ दूर पर आते हुए एक आदमीको देखकर उदयसिंहने पूछा—'वह कौन आ रहा है ?"

भास्कर— मालूम होता है, मेरे ही दलका कोई है।

उदय०—गुप्तचर भी तो हो सकता है ?

भास्कर—मेरे साथियोंकी चाल कुछ भिन्न प्रकारकी होती है। वे लोग लम्बे लम्बे डेग डालकर उछलते हुए चलते हैं, तुम्हे

भी तो यह चाल सीखनी पड़ेगी। नहीं तो शत्रु समझकर कोई डाकू तुम्हें गोलीका निशाना बना डालेगा।

उदय०—और आपने मेरे हाथके पहुंचे पर त्रिशूलका जो चिन्ह बना दिया है, वह क्या सभी डाकुओंके हाथोंमें है?

भास्कर—हाँ, वही मेरे दलका चिन्ह है, उसीसे मेरे साथी समझ सकते हैं कि अमुक अपने दलका आदमी है।

इसी समय वह आदमी निकट आ पहुंचा और भास्कर-तीर्थको प्रणाम करके खड़ा हो गया।

भास्करने पूछा—भगवान! क्या खबर है।

जो आया था उसका नाम भगवान था। वह हृष्ट पुष्ट और लम्बे कदका सुन्दर सुपुरुष जवान था, उसने सरदारके प्रश्नके उत्तरमें कहा—"यहाँ से छः कोस दूर सीतारामपुर नामका एक गाँव है। इस समय वहाँ महामारीकी बीमारी फूट पड़ी है। रोज अनेकों आदमी मर रहे हैं, इसके लिये वहाँकी प्रजा बहुत व्याकुल हो उठी है। इसी समय जमींदार बहादुरकी भी उनके ऊपर नेक नजर हुई है, वह मालगुजारी वसूल करनेके लिये उनके ऊपर बहुत जोर जुल्म कर रहे हैं। जो लोग इस दुर्दिनमें मालगुजारी नहीं दे सकते, वे लोग कुछ समयके लिये मोहलत मांगते हैं; परन्तु जमींदारके कर्मचारी उनके अरण्य रोदनपर कान ही नहीं देते। गाय, बैल, जौ-गेहूं गहने-पत्र आदि सभी प्रकारके माल असबाब एक प्रकारसे लूट कर ही लेजा रहे हैं। जिनके पास माल असबाब भी नहीं है, उनकी पीठके चमड़े छुड़ाये जा रहे हैं, स्त्रियोंको घरसे बाहर निकाल कर निर्ल्लज भावसे उनके ऊपर अत्याचार किया जा रहा है।

भास्करतीर्थ उत्तेजित होकर बोल उठे—तुमलोगोंने ठीक समयपर वहाँ जाकर इसका प्रतिकार क्यों नहीं किया है ?

भगवान—मुझे पहले इसकी खबर नहीं मिली थी।

भास्कर—यदि इन्हीं बातोंकी ही खबर नहीं रखोगे तो तुम्हारे सेवा व्रतका मूल्य ही क्या रहेगा। जमींदार कहाँका है, उसका नाम मालूम है ?

भगवान—हनुमानगढ़का जनार्दन झा। उसे दण्ड देनेको एक अच्छा मौका भी मिल गया है। राज-करसे लदी हुई उसकी दो गाड़ियाँ राजधानीमें जा रहीं हैं, इस रुपयेको यदि हमलोग लूट लें तो एक ढेलेसे कई चिड़ियाँ मरेंगी जमींदार की गर्मी भी जरा ठण्डी होगी, कुतुबशाह भी थोड़ी देरतक आँखें फाड़कर देखेंगे और उस रुपयेसे हमलोग सीतारामपुरके गरीब दुःखियोंकी सहायता भी कर सकेंगे, कहिये आप क्या कहते हैं ?

भास्कर—हाँ, यह मौका हाथसे जाने नहीं देना चाहिये। तुमलोग कब आक्रमण करना चाहते हो ?

भगवान—पाँचबीबी पहाड़के पास गाड़ियोंके पहुंचते बहुत रात चली जायगी, वहीं आक्रमण करनेका विचार कर रहा हूं।

उदय०—आज मुझे भी डकैती करनेकी साध होती है। ओः ! क्या ही भीषण अत्याचार है ? अभागे रोगी बिना औषधि पथ्यके रोज मर रहे हैं। तिसपर जमींदारकी मालगुजारी वसूल करनेके लिये इतनी कड़ाई, फिर रय्यितोंके ऊपर अत्याचार। भगवानजी ! जल्दी चलिये ; आज मैं जानपर खेलकर गाड़ियोंपर छापा मारूँगा और सारा धन लूटकर उन गरीबों के घर घर पहुंचा दूंगा।

भास्करतीर्थने मुस्कुराते हुए कहा—"हमलोग भी इसी प्रकारकी डकैती करते हैं।"

उदयसिंह उठ खड़े हुए और बोले—चलिये आजसे मैं आपका चेला हुआ, मैं डकैतीमें ही अपना जीवन बिताऊँगा।

भास्कर—जिन्दगी भर हमें यह काम करनेकी जरूरत नहीं है, यह काम राजाका है। जब राजा देशमें शांति और शृङ्खला बनाये रखना अपना कर्तव्य समझेंगे तब हमलोग भी घर लौट चलेंगे।

# सातवां परिच्छेद

भास्करतीर्थने आकाशकी तरफ देखकर कहा—"अच्छा, तो चलो अब अधिक देर नहीं है।"

उदय०—क्या मैं भी आऊँ?

"आ सकते हो।" इतना कहकर भास्करतीर्थ भगवान और उदयको लेकर चल पड़े।

भास्करतीर्थ आगे आगे चले। बड़े रास्तेसे न चलकर वे लोग मैदानके भीतरसे होकर चलने लगे। कुछ दूर जाने पर शामको एक गाँव मिला। गाँव बहुत छोटा था। दो चार झोपड़ियोंकी एक छोटी सी बस्ती थी। चारों ओर आम खजूर, और नारियलके वृक्षोंसे गाँव ढका हुआ था। गाँवको पारकर के भास्कर एक वृक्षके नीचे खड़े होगये। वहाँ पाँच कसे कसाये घोड़े बँधे हुए थे। दो सईस भी उनके पास ही खड़े हुए थे। भास्कर एक घोड़ेकी लगाम पकड़कर चढ़ बैठा, भगवानने भी दूसरे पर आसन जमाया। भास्करके संकेतसे उदयसिंह को भी एक घोड़ेके ऊपर अपना भार रखना पड़ा। तीनों अश्वारोही अब बिल्कुल चुप चाप घोड़ोंको हाँकर चलते बने। इस बार भगवानजी ही आगे चले। और दोनों अश्वारोही उनके पीछे पीछे घोड़ा दौड़ाते हुए चले!

हवासे बातें करते हुए तीनों घोड़े जा रहे हैं। कितने ही मैदान गाँव और बावली, पोखड़ेके पास से होते हुए तीनों घोड़े आगे पीछे तीर-वेगसे दौड़ते जा रहे हैं। इस प्रकार बहुत देरतक

चलने बाद अगले घुड़सवारने एकाएक अपने घोड़ेकी लगाम खींच ली, इस लिये पिछले घुड़सवारोंको भी अपने घोड़े खड़े करने पड़े। उदयसिंहने देखा कि सामने ही जलके भीतर पुराने मन्दिरका एक खण्ड द्वार है।

मन्दिरके भीतर एक चिराग जल रहा था; और पचास जवान अस्त्र शस्त्रसे सुसज्जित होकर वहाँ बैठे हुए थे। मन्दिर के एक कोने में बहुत सी तलवारें रखी हुई थीं। भास्करने उनमेंसे एक तलवार उठाकर आप ली और एक उदयसिंहको दी। भगवानने भी एक तलवार लेली।

घोड़े लेकर तीन डाकू चले गये।

भास्कर पैदल ही बाहर निकले।

उदयसिंह और भगवानने भी उनका अनुसरण किया।

मन्दिरके भीतरसे एक आदमीने कहा—"सात बन्दूकें ली गयी हैं, क्या और लेना होगा?"

भास्करने खड़े होकर कहा—"बन्दूक पिस्तौलकी कोई जरूरत नहीं, सिर्फ तलवारें ले लो।

इसके बाद सभी लोग तलवारें लेकर मंदिरसे बाहर निकल पड़े। कई एक अनुचर बन्दूकें ले और चिराग बुझाकर दूसरी तरफ चले गये।

भास्कर अपने पचासों सशस्त्र जवानोंको लेकर शीघ्रता पूर्वक एक तरफको चल पड़े और मिनटोंमें आधे कोसका रास्ता तय करके एक बड़े रास्तेके पास आ पहुँचे। यहीं आकर भास्करने अपने साथियोंको दो भागोंमें बाँटकर रास्तेके दोनों किनारे छिपाकर खड़ा कर दिया!

एक तो आधीरात दूसरे पहाड़िया स्थान चारों ओर अखण्ड निस्तब्धता विराज रही थी, एकाएक कुछ दूरसे बैलगाड़ियोंके आनेकी आवाजें सुनाई पड़ने लगीं। शब्द क्रमशः निकटवर्ती होरहा था। अब सिपाहियोंके जूतोंकी आवाजें भी सुनाई पड़ने लगीं। उस शब्दको सुनकर डाकू अपनी अपनी तलवारें खोल तैयार होकर खड़े हो गये।

अब बैलगाड़ियाँ सामने आ पहुँचीं। तीन गाड़ियाँ एक दूसरेसे बिलकुल सटकर आगे पीछे चल रही थीं। गाड़ियोंके पीछे सैकड़ों जवान तलवार और बन्दूक लिये हुए धीरे-धीरे चल रहे थे। भास्करका संकेत पाते ही डाकुओंने भीषण हुंकार रव करके आगे और पीछेसे सिपाहियों पर आक्रमण किया। उनमेंसे कई एकने दौड़कर बैलोंको गाड़ीके जुएसे छिरका दिया, और अपने ही तीनों गाड़ियोंको एक तरफको खींच ले गये। इधर दोनों दलोंमें भीषण युद्ध होने लगा!

इस प्रकार एकाएक आक्रमणके लिये शकट रक्षी सिपाही बिल्कुल ही तैयार न थे। इसलिये पहले तो वे कि कर्त्तव्य-विमूढ़ हो गये, परंतु थोड़ी ही देरमें वे सम्हल गये और अब जमकर लड़ने लगे। परन्तु भास्करके सभी साथी बल और कौशलमें उनकी अपेक्षा बहुत बढ़े चढ़े थे। उन्होंने थोड़ी ही देरमें सिपाहियोंको तितर बितर कर दिया।

इतनी देरमें डाकू गाड़ियाँ लेकर किसी तरफ जा छिपे थे इसलिये सिपाहियोंसे अधिक छेड़-छाड़ करना निरर्थक समझकर भास्करने अपने साथियोंको भगा दिया।

उदयसिंहको साथ लेकर भास्करतीर्थ भी लौट चले। रास्ते

चलते चलते उन्होंने उदयसिंहसे कहा--"आज तुम्हारी बहादुरी देखकर मैं बहुत सन्तुष्ट हुआ हूं। तुमने तो अकेले हो शत्रुसे मैदान खाली कर दिया है। मुझे अब बड़ी आशा हो रही है कि तुम्हारी सहायतासे मैं देशकी बहुत कुछ सेवा कर सकता हूं।

उदय०--हमें अब कहाँ जाना होगा ?

भास्कर--अड्डेपर।

उदय०--सीतारामपुर नहीं चलेंगे ?

भगवान--रुपये और कुछ आदमियोंको लेकर जाना। सबके वहाँ जानेकी जरूरत नहीं है।

उदय०--मुझे वहाँ जानेकी बड़ी इच्छा हो रही है। मैं अपनी आँखोंसे उनकी दुर्दशा देखकर अपना मन कड़ा करना चाहता हूं।

भास्करने भगवानको बुलाकर उदयको भी साथ जानेका हुक्म दिया।

बहुत दूर जाकर अन्तमें सबलोग एक बड़के वृक्षके नीचे जाकर खड़े हुए। भास्करके तुरही बजाते ही डाकू मार्च करके एक तरफ चले गये और तुरत ही तीन घोड़े लेकर तीन साईस वहाँ आ पहुँचे।

भास्कर, भगवान और उदयसिंहने एक एक घोड़ेपर सवारी करली ?

उदयसिंहने भगवानसे पूछा—क्या हमलोग अभी सीतारामपुर जा रहे हैं ?

भगवान—हाँ, चलो।

उदय०—रुपये तो हमारे साथ नहीं हैं।

भगवान—रुपये लेकर हमलोगोंके आदमी पहले ही चले गये हैं। उन रुपयोंमेंसे चौथाई हिस्सा हमलोगोंके खास भण्डारमें जायगा और तीन हिस्सा सीतारामपुरमें बाँट दिया जायगा।

उदय०—चौथाई हिस्सा लेकर आपलोग क्या करेंगे ?

भग०—इन साथियोंके भरण-पोषणका खर्च इसी "चौथ" से चलता है।

उदय०—सरदार इसमेंसे कुछ भी नहीं लेंगे ?

भग०—नहीं, वह कुछ भी नहीं लेते। वे रुपये लेकर क्या करेंगे। उनकी अपनी ही सम्पत्तिसे अपना काम चल जाता है।

इस प्रकार बात-चीत करते हुए भगवान और उदयसिंह सीतारामपुरकी ओर चले गये ?

# आठवां-परिच्छेद

उदयसिंहके साथ भगवानने जिस समय सीतारामपुरमें प्रवेश किया उस समय सबेरा हो गया था। सभी गृहस्थ उठ-उठकर अपने अपने काम काजमें लग गये थे। कोई गाय-बैलोंको छाँटी दे रहा था, कोई नित्य नैमित्तिक कार्योंसे ही निपट रहा था! दो जवान सवारोंको गाँवमें प्रवेश करते देखकर ग्रामीणोंका कलेजा धकसे हो गया। सबने समझा कि जमींदारके आदमी हैं फिर कोई उत्पात मचानेके लिये आये हैं। उनलोगोंके लिये सबसे बड़े हौवा जमींदारके प्यादे ही थे।

एक जगह आगके सामने बहुतसे बूढे हुक्का पी रहे थे। इन घुड़सवारोंको देखते ही वे अपमानके भयसे लुक छिपकर घरमें घुस गये। जवान एक जगह इकट्ठे होकर अपनी अपनी दुःख सुखकी बातें कर रहे थे। वे भी बेगारके डरसे इधर उधर भाग गये। घरकी स्त्रियाँ भी दरवाजा बन्द करके ईश्वरका नाम जपने लगीं। इस प्रकार दो घुड़सवारोंको देखते ही सारे गाँवमें भगदड़ मच गयी। थोड़ी ही देरमें सारे गाँवमें सन्नाटा छा गया। बाहर कोई भी आदमी न रहा जिससे वे लोग कोई बात पूछ सकते थे।

उदयसिंहने पूछा—"आप कहते थे कि गाँवमें महामारीकी बीमारी आई है, क्या उसीके कारण सबलोग गाँव छोड़कर भाग गये हैं?

भगवानने हँसकर कहा—"आप शहरके रहने वाले जमींदारके लड़के ठहरे, आपको देहातवासियोंकी बात क्या मालूम ? इनकी दशा आजकल बड़ी ही बुरी हो गयी है। प्रतिदिन अत्याचारियोंके अत्याचार सहते सहते इनका हृदय इतना मुर्दा हो गया है, कि किसीके हृदयमें साहस आत्माभिमान नामकी कोई चीज बाकी नहीं रह गयी है। यदि दो लाल पगड़ीवाले किसीसे आकर कह दें, कि तुमलोग अपनी सारी धन-सम्पत्ति लाकर हमारे सामने रख दो, तो कोई भी आदमी नाहीं करनेका साहस नहीं कर सकता।"

आज कल इन अभागे गृहस्थोंका सारा जहान ही शत्रु हो रहा है। बाहरी शत्रुओंकी लूट-तराजकी बात यदि छोड़ भी दी जाय तो भीतरमें इतने बड़े-बड़े शत्रु इनका खून चूस रहे हैं, जिनकी बाग रोकने वाला कोई है ही नहीं। मुगल सम्राट् के सुपुत्र औरङ्गजेबकी भी कृपादृष्टि इनपर समय असमय पर पड़ी ही रहती है। आजकल औरङ्गजेब लूट-तराज करनेके ही लिये यहाँ अड्डा जमाये हुए है और तो और मरहठे भी इन अभागोंके धनसे अपना भण्डार पूर्ण करनेके लिये लालायित हो रहे हैं। शाह कुतुब और उनके जमींदारोंके मालगुजारी वसूल करनेका थोड़ा परिचय तो पाही गये हो। इसके लिये देशके असली डाकू जलेपर निमक छिड़कनेके लिये तैयार ही रहते हैं।

उदयसिंहकी आँखोंमें आँसू भर आये, उन्होंने कहा—"इनकी रक्षा करनेवाला क्या कोई भी नहीं है ?"

भगवान—ईश्वर है! जिनके सामने धनी गरीब सब समान हैं, जिनकी इच्छासे संसारका शासन, पालन और

ध्वंस हो रहा है। वही पापीको दण्ड, पुण्यात्माको पुरस्कार और असहायको सहाय देते हैं, उनसे किसीका भी पाप पुण्य छिपा नहीं रहता। वह सबके हृदयमें रहकर सभीका कार्य देख रहे हैं, वह अन्तर्यामी हैं।

उदय०—भगवान यदि पाप पुण्यका विचार करतेही हैं तो संसारमें इतना भेद-भाव क्यों है, क्यों दरिद्रके मुखका ग्रास धनी छीन लेता है, क्यों दुर्बलकी कुल-ललनाओंको पापी हृदयसे जबर्दस्ती छीन लेता है, क्यों गरीबकी झोपड़ीमें आग धरा कर धनी आनन्द अनुभव करता है ?

भगवान—इसी लिये ऐसा होता है, कि प्रत्येक मनुष्यमें भगवानने जो शक्ति दी है, उसपर सभी विश्वास नहीं करते हैं, इसीलिये ठकते हैं। दीन-दरिद्र और गरीब भी यदि अपनी शक्ति समझने लगें, वे भी यदि अपने हृदयमें ईश्वरका अनुभव करके पापीकी पापशक्तिका सामना करें तो पापी कभी उनकी तरफ आँख उठाकर देख नहीं सकता।

उदय०—साहस रहते हुए भी निर्बल सबलका सामना कैसे कर सकते हैं ? चींटी यदि हाथीका सामना करे तो मरनेके सिवा वह कर ही क्या सकती है।

भगवान—मरना यदि सबको है ही तो सामना करके मरने में हानि ही क्या है ? अत्याचारित और अपमानित होकर मरनेके बदले यदि मनुष्य सत्य और सिद्धान्तके लिये मरे तो यह गौरवकी बात है। जिनको ईश्वर पर पूरा विश्वास होता है, वे सत्य और धर्मके लिये मरनेको सदा तैय्यार रहते हैं। मृत्यु उनके लिये हौवा नहीं होती। खैर इस सम्बन्धमें गुरूजी

से अपना सामाधान कर लेना। अभी चलो, कृषक पल्लीमें चलकर वहाँकी अवस्था देख आयें।

उदय०—जिधर हमलोग जाते हैं, उधर ही सूनसान छाया हुआ दिखलाई पड़ता है। ऐसा तो मालूम नहीं पड़ता कि हमलोग किसीका उपकार कर सकेंगे।

भगवान—भास्करतीर्थका नाम सुनकर सभी हमलोगोंके सामने दौड़ आयेंगे और अपना अपना दुःख सुनाने लगेंगे। दो एक मिल जानेसे ही हमलोगोंका काम पूरा हो जायगा।

इसी समय उन्होंने देखा कि नर-कङ्काल सार एक अस्सी वर्षका बूढ़ा नङ्गा, शीतसे कांपता हुआ लाठीके सहारे एक तरफको जा रहा है। भगवान वेगके साथ चलकर तुरन्त उसके पास पहुँच गये।

बूढ़ा लम्बे डील-डौल वाले घुड़सवारको अपने सामने देखकर भयसे थर-थर कांपने लगा—और कांपती हुई आवाजमें ही बोला—"मेरे पास कुछ भी नहीं है! कलतक एक बैल और एक गाय मेरे पास थी उन्हें भी कल जमींदार बहादुरके कारिन्दे हांक ले गये। कल उन्होंने मुझे जो मार मारी थी उससे अब भी मेरी हड्डियाँ फूली हुई हैं! एक लड़का था, वह भी आज सबेरे इस अभागे बूढ़ेको छोड़ चल वसा है। उसकी लाश अब भी पड़ी हुई है। कोई उठाने वाला नहीं है। उस महल्लेमें अपने भाइयोंके पास जा रहा हूं, यदि कोई दया करके आ जाय! तो तुम्हारे पैरों पड़ता हूं, मुझे मारो मत नहीं तो बे मौतके अभी मर जाऊँगा।

आँखोंमें आँसू भरकर भगवानने गद्‌गद् कण्ठसे कहा—

"हमलोग डाकू भास्करतीर्थके चर हैं। तुमलोगोंका कष्ट दूर करनेके लिये आये हैं। तुम्हें मारने सतानेके लिये नहीं आये हैं। जमींदार तुमलोगोंकी जो जो चीजें ले गया है, वह सभी हमलोग तुम्हें लौटा देंगे।"

भास्करका नाम सुनकर किसानकी आँखें चमक उठीं, उसका डर तुरत जाता रहा! उसने कहा—"बड़ी विपदमें पड़ा हूं। लड़का आज ही मुझे छोड़ भागा है। हाथमें एक पैसा भी नहीं है कि मैं उसकी दाह क्रिया कर सकूं।

भगवानके पास जो कुछ रुपये थे उसे देकर उन्होंने कहा—इससे तुम अपने लड़केका दाह-कर्म करना और रातके वक्त लाल पोखरेपर जाना, वहाँ सभीको सहायता दी जायगी, तुम भी पाओगे। और जिन्हें दुःख कष्ट हो अपने साथ लेते जाना।

बूढ़ा रुपया लेकर चला गया। उदयसिंहकी तरफ देखकर भगवानने कहा—"चलो, हमलोग किसी धनीके पास चलकर ठहरें और उसीके ऊपर सबको इकट्ठा करनेका भार सौंप दें। इस प्रकार रास्तेमें घूमनेसे कोई फायदा न होगा।

उदय०—मैं तो यहाँ किसीको जानता पहचानता नहीं हूं, और यह सब कार्य्य कैसे किया जाता है? यह भी मुझे मालूम नहीं है; परन्तु जो कुछ मैं देख सुन रहा हूं, उससे मेरी यही इच्छा प्रबल होती है कि सारा जीवन इसी कार्य्यमें लगाकर अपना जीवन सार्थक करूँ।"

भगवानने घोड़ेकी बाग फेर ली। उदयसिंहने भी अपने घोड़ेको लौटाकर भगवानका अनुसरण किया। कुछ दूर चलनेपर

सामने एक बड़ा मकान मिला। द्वारपर घोड़ा बाँध दोनोंने मकानमें प्रवेश किया। उस समय दो पहर हो चुका था।

वह बहुत दूरतक फैला हुआ विशाल भवन एक धनी मुसलमानका था—उसका नाम था खिजिरखाँ। खिजिरखाँ बड़े विनयी, साधुस्वभाव वाले और परोपकारी मनुष्य थे।

दोपहरका कलेवा करके खिजिरखाँ अपने बाहरी बैठकमें तख्तपोश पर लेटे हुए गड़गड़ेका नल मुखमें लगाकर औंघ रहे थे।

इसी समय भगवानने पुकारा—"खाँ साहब!"

खाँ साहबने तन्द्राके आवेशमें समझा कि उसकी बाँदी गुलजान उन्हें "खाँ साहब" कहकर पुकारती हुई एक प्याली चाय पीनेके लिये कटाक्षके साथ अनुरोध कर रही है। परन्तु बीबी साहबके भयसे शराब और कटाक्षका लोभ त्यागना पड़ता है; इसलिये बड़े कष्टके साथ आँखोंको जरा चढ़ाकर बाँदीको हट जानेके लिये हाथसे इशारा किया। परन्तु बाँदी हटी नहीं, उसने शायद दो तीन बार और भी कटाक्ष-पात करके मुस्कराते हुए जरा जोरके साथ फिर पुकारा —"खाँ साहब! आपसे कुछ बातें करना है।" खाँ साहब अब बड़ी चिन्तामें पड़ गये। एक ओर बीबी साहबका तिरस्कार-भय और दूसरी ओर बांदीका आकुल आग्रह; परन्तु उसका इतना जोर जोरसे पुकारना क्या उचित है? इसी समय भगवानने आवाजको जरा और भी ऊँची करके कहा—"खाँ साहब! मैं भास्करतीर्थका चर हूं।

भास्कर का नाम सुनते ही खां साहबकी तन्द्रा छूमन्तर हो

गयी। हाथ पैरको इधर उधर फेंक फाँककर चौंककर उठ बैठे, बैठते समय, गड़गड़ा, नल और चिलमकी आग सभी अलग अलग छिटककर बिछौने पर केमिकल एक्शन प्रकट करने लगे, पानका डिब्बा कूदकर सिलिञ्जीके ऊपर गिरा। सिलिञ्जीने गडुए पर आक्रमण किया। गडुएने लुढ़क कर अपने भीतरका सारा जल बिछौनेपर ढाल दिया। मतलब यह कि एक ही मिनिटमें सारा कमरा ठन ठन, झन झन, और भक भककी आवाजसे गूंजने लगा। इधर बिछौनेकी आग अपनी परीक्षामें बहुत कुछ सफल हो चुकी है, उसे अब शीघ्र ही निरस्त न करनेसे बड़ा अनर्थ होनेकी सम्भावना है परंतु खाँ साहबका ध्यान ही न था। वह भास्कर तीर्थके अनुचरका आगमन सुनकर ही हक्के बक्के से हो गये थे! वह सोच रहे थे, न जाने आज तकदीरमें क्या बदा है।

इसलिये भगवान को ही दौड़कर बिछौनेकी आग बुझानी पड़ी और उदयसिंहने गड़गड़ा, चिलम, गडुआ आदि सामानों को हटाकर एक तरफ रख दिया।

सब ठीक ठाक और दुरुस्त करके भगवानने कहा—"खाँ साहब हमलोग जिस कामके लिये आये हैं, वह सुनिये।"

खिजिर खाँ ज्योंके त्यों बैठे ही रहे। अभी तक कोई भी बात उनके मुखसे न निकली। भगवान कहने लगे—जमींदारकी तरफसे इस गाँवके किसानोंपर अत्याचार किये गये हैं। उन सबकी खबर सरदारके पास पहुँच गयी है। इसी लिये उन्होंने हम दोनोंको आपके पास भेजा है, आपको तो मालूम ही है कि भास्करके दलके लोगोंके बायें हाथमें त्रिशूलका चिन्ह बना होता है। यह देखिये हमलोगोंके हाथमें वह चिन्ह है।"

इतना कहकर भगवानने अपना त्रिशूल-चिन्ह दिखलाया। खाँ साहबका रहा सहा सन्देह भी जब दूर हुआ तब उन्होंने सोचा कि भास्करके अनुचरोंकी अवहेलना और अपमान करने-से कहीं किसी दिन भास्करके डाकू छापा मारकर उनका घर द्वार ही न लूट ले जायँ। इस आशंकासे विचलित होकर उन्होंने तुरंत हाथ जोड़कर कहा—"सरदारको मेरी तरफसे सलाम जनाइयेगा और कहियेगा कि इस बारेमें मुझे क्या करना होगा? मुझे भी जमींदारको बड़े अपमानके साथ दस हजार रुपये देने पड़े हैं। यदि वे रुपये रहते तो मैं अपनी आँखोंके सामने इन दरिद्रियोंका यह दुस्सह कष्ट न देख सकता, सारा रुपया तुरत उन्हें दान कर देता। तब भी जो कुछ मेरे पास है, उसके साथ मैं गरीबोंकी सेवामें हाजिर हूं। मैंने अपने भण्डारसे पाँच मन चावल रोज बाँटनेका हुक्म दे दिया है, और यदि आप इनकी अवस्था सुधारनेका कोई नया प्रबन्ध करें तो मैं दस हजार रुपये तक देनेको तैयार हूं।"

भगवान आवेगके साथ बोल उठे—आप धन्य हैं। ईश्वर आपका भला करे! इस अवसर पर आप अपना रुपया रहने दीजिये हमलोग जमींदारके घरका ही रुपया पा गये हैं। उसी रुपयेसे हमलोग यहाँके किसानोंकी सहायता करना चाहते हैं। आप इतना ही कीजिये कि अपने गाँवके सभी गरीब दुःखियों को शामके वक्त लाल पोखरेके किनारे भेज दीजिये वहीं रसद बाँटी जायगी! आपको भी वहाँ हाजिर रहना होगा। क्यों कि आपको यहाँके सभी लोगोंकी अवस्था मालूम है। एक काम और आपको करना होगा। मैं आपके पास कुछ रुपये

रख जाता हूं, उससे आप दो चार चिकित्सकोंको नियुक्त कीजिये और रोगियोंके औषध पथ्यका पूरा बन्दोबस्त कर दीजिये! यदि इससे भी अधिक रुपयेकी जरूरत पड़े तो हमलोगोंके किसी अड्डे पर खबर भेजकर रुपया मंगा लीजियेगा।

खाँ साहबने पहले कामका भार स्वीकार कर लिया परन्तु दूसरेका भार लेनेको वह किसी प्रकार भी राजी न हुए। उन्होंने शायद मनमें सोचा कि, डाकूका रुपया पास रखनेसे यदि किसी विपदमें फँस जायँ, परन्तु मनकी बात छिपाकर उन्होंने दिलसे कहा—"बूढ़ा आदमी अपनाही काम सम्हाल नहीं सकता हूं। इतना बड़ा कार्य्यभार किसी नवजवान कर्मठ आदमीके जिम्मे रखना ही उचित होगा।"

परंतु भगवानसे उनके मनकी बात छिपी न रही। वह तुरत समझ गये कि डरसे यह रुपया लेनेको राजी नहीं होता है और डरहीसे बैठनेको भी नहीं कहता है। इसलिये उन्होंने कहा—"हमलोग जरा बैठेंगे।"

"हाँ, हाँ, आइये, आइये, बैठिये मुझसे बड़ी भूल हो गयी है। माफ कीजियेगा।" इतना कहते हुए खाँ साहब उठ खड़े हुए और नौकरको बुलाकर दो आराम कुर्सियाँ मँगवा दी उदय और भगवान दोनों जने जाकर उन कुर्सियोंपर बैठ गये।

इतनी देरके बाद बूढेने पूछा—आपलोगोंका भोजन पानी तो अभी नहीं हुआ होगा? क्या प्रबंध करवाऊँ।"

भग०—"कोई जरूरत नहीं। जिस कामके लिये हमलोग आये हैं वह पहले होले पीछे खाना पीना होता रहेगा। अच्छा, यदि

आप अपन इस कार्य्यका भार लेना नहीं चाहते हैं तो किसी दूसरे ही आदमीको, जिसे आप इस कामके योग्य समझें, बुलाकर दीजिये।

बूढ़े खिजिरखाँने कुछ देरतक सोचकर कहा—"मुबारक अलीको बुलवाता हूं। यदि वह लेना स्वीकार करे तो उसीको देना सबसे अच्छा होगा।"

एक नौकर मुबारकको बुलानेके लिये चला गया। भगवानने पूछा—"वह कैसा आदमी है?"

खिजिरखाँ—मुबारक बहुत अच्छा और धर्म-भीरु आदमी है।

भग०—अच्छा उसको दूसरे कामका भार दीजिये। और आप अभी गाँवमें ढिंढोरा पिटवा दीजिये कि शामको लाल पोखरेपर भास्करकी तरफसे सदाव्रत बटेगा। जो लेना चाहे, बिना हिचकिचाहटके वहाँ चला जाय। अवस्थाके अनुसार सबको कुछ न कुछ दिया जायगा।

इसी समय मुबारकअली आ पहुँचा, खिजिरखाँ और भगवानके बहुत जिद्द पकड़नेपर उस बेचारेको चिकित्साका बन्दोबस्त करानेका सारा भार लेना पड़ा।

शाम होते होते रुपयेसे लदी हुई गाड़ियाँ लाल पोखरेपर आ पहुँचीं और एक एक करके पाँच छ सौ गरीब दुखिया और दरिद्री भी पोखरेका मैदान घेरकर खड़े हो गये। खिजिरखाँ और मुबारक अली वहाँ खड़े रहकर एक एक करके सबके दुःख-कष्टका हाल कहने लगे और उदयसिंह तथा भगवानदास सभीको उनकी अवस्थाके अनुसार धन बाँटने लगे।

पहर भर राततक सदाव्रतका यह काम होता रहा, इसके बाद जब कोई याचक नहीं रह गया तब बचा हुआ रुपया मुबारकअली और खिजिरखाँके हवाले करके उदयसिंह और भगवानदास घोड़ेपर चढ़कर जिधरसे आये थे, उधर ही चले गये। रुपयोंकी गाड़ियोंके साथ पचास लठैत डाकू आये थे वे भी अपने अड्डेको लौट गये।

# नवां परिच्छेद

गोलकुण्डा राजधानीके प्रान्त भागसे होकर कृष्णा नदी बहती है। घाटसे राजप्रासाद तक एक बहुत बड़ा राज-पथ चला गया है। उसीसे होकर स्नान करनेके लिये शहरके लोग घाटपर जाया करते हैं। घाटके पास ही एक मेसजिद भी है इसलिये वह घाट हिंदुओं और मुसलमानोंके लिये बराबर ही महत्त्व पूर्ण है। जिस प्रकार हिंदू नित्य कृष्णामें स्नान करनेके लिये जाते हैं उसी प्रकार मुसलमान भी नित्य नमाज पढ़नेके लिये जाते हैं।

वहाँ बराबर ही हिंदुओं और मुसलमानोंकी भीड़ लगी रहती है। और सबसे अधिक भीड़ लगाये रहते हैं—खिलौना गुड़ियाँ और तस्वीर आदि बेचनेवाले टुटपूंजिये दूकानदार। जहाँ कहीं ये लोग अधिक लोगोंका आगमन देखते हैं कि तुरत रास्तेके किनारे अपनी दूकान सजा बैठते हैं।

एक दिन सबेरेका समय था। स्नान करनेके लिये हिंदू और नमाज पढ़नेके लिये मुसलमान कतार बाँधकर घाटकी तरफ जा रहे थे! घाटके पास ही रास्तेके किनारे एक तस्वीर वाली बहुत सी तस्वीरें रखकर बेच रही थी। तस्वीर वाली मुसलमानिन थी—उमर चालीससे ऊपर की न थी। उसने कितने ही चित्रोंको फैला रखा था और कितनों ही को कपड़ेसे ढँक रखा था। यदि कोई उन्हें देखना चाहता था

तब वह स्त्री उन्हें खोलकर दिखलाती थी और फिर तुरत ही उन्हें ढाँक देती थी, कितनेही आदमी उस तस्वीर वालीके पास आते ; खड़े होते, दरदाम करते और चले जाते हैं। कोई कोई दो एक तस्वीरोंका कड़ा दरदाम करके खरीद भी रहा है और कोई कोई तस्वीर वालीको अपने घरपर आनेके लिये कहकर चला जा रहा है।

इसी समय हसनसाहब मसजिदसे नमाज पढ़कर लौटते हुए वहाँ आ पहुँचे। तस्वीर देख उनके मनमें न जाने क्या आया, वह तस्वीरवालीकी खुली हुई दूकानके सामने जाकर खड़े हो गये। तस्वीरवाली हसनसाहबको पहचानती थी, उन्हें देखते ही उसका मुख सूख गया, और वह जल्दीसे कपड़े में ढंकी हुई तस्वीरको और भी छिपानेकी चेष्टा करने लगी, परन्तु उसकी चेष्टा व्यर्थ हुई। हसनसाहबने उन तस्वीरोंको खींचकर कहा—"खोल इन तस्वीरोंको मैं उन्हें देखूँगा।"

तस्वीरवाली कांपते हुए हाथोंसे तस्वीरोंका वह बण्डल खोलकर दिखलाने लगी।

हसनसाहब एक एक करके सभी चित्रोंको देखने लगे, पहला चित्र शाहंशाह शाहजहाँका था दूसरा औरङ्गजेबका और तीसरा भास्करतीर्थका था। हसनसाहबने भास्करका चित्र अलग निकाल लिया और फिर दूसरे चित्रोंको देखने लगे, सहसा एक चित्रको देखकर उनके सारे बदनमें बिजली दौड़ गई। उस दिन आइनेमें उन्होंने जो मूर्ति देखी थी, ठीक उसीका चित्र इस समय उनके सामने था।

तस्वीरको हाथमें लेकर उन्होंने गंभीर आवाजसे पूछा—"यह तस्वीर किसकी है ?"

तस्वीरवालीके सारे बदनसे इस समय पसीना छूट रहा था, उसने गिड़गिड़ा कर कहा—"खुदाबन्द मुझे मालूम नहीं किस सुन्दरी स्त्रीकी यह मूर्ति है, इतना ही मैं जानती हूं, जिन्होंने मुझे यह चित्र बेचनेको दिया है, उन्होंने कह दिया है कि जो उचित मूल्य दे उसीको यह चित्र बेचना जो उचित मूल्य देगा, अवश्य ही वह रमणीको पहचान कर ही देगा। आपको इसके सम्बन्धमें कुछ जाननेकी जरूर नहीं है, और एक बात उन्होंने जो कहा है, वह आपसे कहते डर लगता है।

हसन—निडर होकर कहो, तुम्हें कोई डर नहीं।

तस्वीर०—गुस्ताखी माफ हो, उन्होंने कह दिया है कि यदि कोई राजकर्मचारी बिना मूल्य दिये इस चित्रको ले तो मुझसे कहना।

हसन—ऐसी तस्वीर क्या पहले भी तुमने कभी बेची है ?

तस्वीर०—नहीं, कभी नहीं।

हसन—जिसने बेचनेको दिया है, क्या उसका नाम बता सकती हो ?

तस्वीर०—हाँ, बता सकती हूं, इस शहरकी प्रधान धात्री जेरीना बीबीने दिया है।

हसन—इसका मूल्य क्या है ?

तस्वीर०—पाँच लाख रुपये या पाँच जूतियाँ।

हसनसाहब इस चित्रके रहस्यके भीतर किसी प्रकार भी प्रवेश न कर सके। उन्होने उस चित्रको अच्छी तरह देखभाल

कर सोचा—"इस चित्रका मूल्य तो अधिकसे अधिक सौ दो सौ हो सकता है। यहाँ एक बारगी पाँच लाखकी औसत! इसके बदलेमें सिर्फ पाँच जूते।" बहुत देरतक सोचते रहकर उन्होंने कहा—"अभी मैं इन दोनों चित्रोंको ले जाता हूं, तुम कल शामको मेरे मकान पर आना। मैं यह चित्र लूँगा या नहीं उसी समय बताऊँगा।"

इतना कहकर हसनसाहब भास्करतीर्थ और उस सुन्दरी रमणीका चित्र लेकर अपने घरकी तरफ चले गये।

घर पहुँचते ही हसनसाहब अपने सोनेके कमरेमें जाकर एक कुर्सी खींच कर बैठ गये और एक दृष्टिसे उस रमणीके चित्रको देखने लगे। वैसे सुन्दर नेत्र, वैसी सुन्दर नाक और वैसे सुन्दर अधरोष्ठ उन्होंने कभी नहीं देखे थे, वह मन ही मन सोचने लगे—उस दिन राजप्रासादमें यही मुख देखा था, यह रमणी कौन है? इसने तो मुझे पागल बना दिया है, क्या यह नहीं मिल सकती?

हसनसाहब हाथमें चित्र लेकर तन्मय होकर देख रहे थे, उसी समय एक सुन्दरी रमणी मन्द मन्द मुस्कुराती हुई वहाँ आ पहुँची।

जो आई वह हसनसाहबकी पत्नी बानूबीबी थी, बानूबीबी रूप-गुण और सुलक्षणोंमें अपने समयकी आदर्श रमणी थी। उम्र अट्ठाईस वर्षके लगभग थी, प्रत्येक अङ्ग प्रत्यंगसे यौवनकी नदी उमड़ी पड़ती थी।

बानूबीबीने घरमें आकर देखा कि स्वामीकी बगलमें एक भव्य पुरुषका चित्र रखा हुआ है और सामने एक अपूर्व सुन्दरी

रमणीका चित्र है जिसे वे बड़े ध्यानसे देख रहे हैं। उनकी निश्चल—निष्कपट दृष्टिसे यही प्रकट होता है कि चित्रके रूपसागरमें बिना पतवारके जहाजकी तरह बहे जा रहे हैं।

बानूबीबीने चुपकेसे उनकी दोनों आँखें अपने कोमल हाथोंसे बन्द करके कहा—"अब देखो तो।"

हसन साहबने अपनी चुलबुली पत्नीकी तरफ देखकर कहा—"इन दोनों तस्वीरोंको आज लाया हूं।"

हँसते हुए बानूबीबीने कहा—"तुम्हारे हाथमें जिसका चित्र है, उसे मैं जानती हूं। यह चित्र किसका है?"

हसन०—यह चित्र किसका है?

बानू०—तुम्हें जरूरत? किसका समझकर खरीदा है?

हसन०—अभी खरीदा नहीं है, देखनेके लिये लाया हूं, यदि पसन्द आयगा तो ले लूँगा!

बानू०—नवाब बहादुर शाहकुतुबकी सुन्दरी कन्या मार्जिना बेगमका यह चित्र है। यह किसका है?

हसन साहबके मनमें इस समय तूफान उठा हुआ था, जिसके कारण उनका मन चञ्चल और विक्षुब्ध हो रहा था। उन्होंने अन्य मनस्क भावसे कहा—"यह भास्कर डाकूका चित्र है।"

बानू०—तुम मार्जिना बेगमका चित्र देखकर इतने गंभीर क्यों हो रहे हो?

हसन—गंभीर कैसे देखा?

बानू०—जैसे देखना नहीं चाहिये। तुम इतने अनमने क्यों हो रहे हो?

हसन०—नहीं, बानू। मैं यही सोच रहा था कि नवाबके अन्तः पुरकी कुल-ललनाओंका चित्र बाजारमें बिकनेके लिये जाता है। यह तो अच्छा नहीं है।

बानू०—परन्तु तुम्हारे चेहरेसे तो सिर्फ यही चिन्ता नहीं टपकती।

हसन०—तो और क्या टपकती है ?

बानू०—और भी एक काली छाया जो उज्ज्वल मुखको काला कर देती है। परन्तु वह मेरी सौत नहीं हो सकती।

हसन०—सचमुच? थोड़ी देरके लिये बना न लो। बानू बेगम!

बानू०—बना तो देती ; परन्तु दुःखकी बात यही है कि वह बन नहीं सकती, क्योंकि तुम्हारे ही सामने उसका भी एक पति है। जो अभी बिल्कुल जीता जागता है।

हसनसाहबकी आशा पहाड़से गिरकर चूर्ण विचूर्ण हो गयी। उन्होंने एक लम्बी सांस लेकर कहा—नहीं बानू। कोई जरूरत नहीं ; मेरे लिये तुम्हीं भुवनमोहिनी हो!

बानू०—ईश्वर करें, ऐसा ही हो। इस प्रकारकी चिन्ताओंसे मन चञ्चल ही होता है कोई लाभ नहीं होता।

हसन०—देखो बानू! इसी व्यक्तिको गिरफ्तार करनेके लिये मुझे हुक्म मिला है। देखो चेहरा कैसा भव्य और सुन्दर है—

बानू०—सचमुच देखनेसे अपने आप भक्ति उत्पन्न होती है, मानों कोई पीर पैगम्बर ध्यान लगाकर बैठा हो। देखो तो सही पहाड़के एक शिला-खण्डपर आँख मूंदे बैठे हुए हैं।—बगलमें तीन आदमी हैं, वे शायद डाकू ही होंगे; परन्तु इन्हें देखनेसे मालूम होता है कि किसी फकीरका यतीमखाना है।

हसन०- देखता हूं, तुम तो उनकी बड़ी भक्त हो गयी। नवाब यदि सुनेंगे तो मेरी जानपर आ बनेगी। अच्छा बानू! यदि इसी भास्करके साथ तुम्हारा निकाह हो तो क्या तुम खुशी होओगी!"

बानू बीबीने आँखें मूंद, कान बन्द करके कांपते हुए कहा —"यह तुम्हींलोगोंका काम है! जिस स्त्रीको सुन्दर देखते हो उसी पर मुग्ध हो जाते हो। औरतें जिससे एक बार प्रेम करती हैं, उसे फिर कभी नहीं भूलतीं।

हसन०—नहीं भूलतीं तो फिर निकाह क्यों करती हैं?

बानू०—तुमलोग करवाते हो इसलिये करती हैं। परन्तु इस विषयमें हिंदुओंका नियम हमलोगोंसे अच्छा है।

हसन०—अच्छा कैसे है?

बानू०—चाहे स्त्री हो चाहे पुरुष, सबका प्राण एक होता है, हृदय भी एक ही होता है। हृदय और प्राणके समर्पणको ही विवाह कहते हैं! जब हृदय और प्राण किसी स्त्री और पुरुषको समर्पण कर दिया जाता है तब वह फिर लौटाया कैसे जा सकता है? बिना हृदय और प्राणके नीरस शरीरसे दूसरा विवाह करना कभी सुखकर और शांतिदायक नहीं होता है, इसीलिये दूसरा विवाह करके पहले सुखी दिखलाई भी पड़ते हैं, परंतु थोड़े ही दिनोंमें कपट प्रेमका भण्डा फूट जाता है, और स्त्री तथा पति दोनों ही का जीवन नीरस अशांतिमय हो जाता है।

एक दिन एक ब्राह्मणकी विधवा लड़की मुझसे येही बातें कहती थी, तभीसे ये बातें मेरे मनमें बैठ गई हैं। उसके इस सिद्धान्तको मैं बहुत अच्छा समझती हूं।

हसन—अच्छा तो मेरे मरनेपर तुम निकाह न करोगी, एक बारगी पक्का विचार करो।

"दत्" कह कर बानू बीबी चली जा रही थी, हसनसाहबने उनका जूड़ा पकड़कर खींचा, जूड़ा खुल गया। काले नागकी तरह वेणियां लपलपाती हुई सारे शरीरपर फैल गयीं, बेला, जुही, गुलाब, आदिके फूल जो जूड़ेके कुन्तलमें शोभा दे रहे थे, अब खिसक पड़े। उनमेंसे कितने ही वनपर अटक रहे, कितने ही भुजाओं पर और कितने कपड़ों और वेणियोंमें लिपट रहे। ऐसा मालूम होने लगा कि कोई वनदेवी खड़ी हुई हो।

सुहागिनी कपोतनीकी तरह गर्दन मचकाकर बानू बीबी खड़ी हो गयी और भौंहें तानकर कपट क्रोधके साथ बोली—"निकाहके इतने पक्षपाती क्यों हुए। क्या मार्जिना बेगम चैन नहीं लेने देती?"

हसनसाहबने मुस्कुराते हुए कहा—हमारे मजहबमें पुरुषके एक साथ कितने ही विवाह हो सकते हैं? निकाह करना भी जायज है।

"करो कौन रोकता है?" कह कर हँसती हुई बानू बीबी चली गयी, आते समय स्वच्छ निर्मल आकाशकी तरह हृदय लेकर बानू बीबी आयी थीं, परन्तु लौटते समय कितने ही काले पीले मेघोंसे हृदयाकाश ढँक गया था।

# दशवां परिच्छेद

बानू बेगमके चले जानेपर भी हसनसाहबका चञ्चल विक्षुब्ध हृदय बहुत देरतक शान्त न हो सका। वह सोच रहे थे—"बानू बेगम प्रेम, शान्ति और सुहागकी साक्षात मूर्ति है। ऐसा आवेगमय प्रेम क्या और कोई दे सकता है, परन्तु वे आखें, वह मुख जो कल देखा था। वैसी सुन्दरता, वैसी चमक क्या बानू बेगमके मुख और आँखोंमें है? इस निर्जीव चित्रसे जो ज्योति निकल रही है, वैसी ज्योति, वैसी सजीवता बड़ी-बड़ी सुन्दरी रमणियोंके चेहरेपर भी नहीं दिखाई पड़ती। एकबार देखना चाहिये, इसकी सजीव मूर्ति कितनी सुन्दर है। देखनेमें दोष ही क्या है, मैं तो बानू बेगमको भूलता नहीं हूं, परन्तु नवाब-नन्दिनी मार्जिना बेगमका दर्शन भी तो दुर्लभ है। वहाँ चन्द्र, सूर्य्य भी प्रवेश नहीं कर सकते, मैं किस खेतकी मूली हूं, परन्तु उसे देखे बिना भी तो चैन नहीं पड़ता।"

इस प्रकार बहुत देरतक सोच विचारकर हसनसाहबने निश्चय किया—"एक बार धात्री जेरीनाको पकड़ना चाहिये। उससे बहुत कुछ सहायता मिल सकती है, इसके सिवा इस चित्रका रहस्य भी प्रकट हो सकता है। शामके वक्त वहाँ जाना अच्छा होगा।"

परन्तु शाम होनी ही नहीं चाहती थी, सूर्य्यके ऊपर हसन साहबको अत्यन्त क्रोध हो रहा था, यह काफिर डूबता क्यों

नहीं ? कभी-कभी खाँ साहब उस काफिर को काटनेके लिये म्यानसे तलवार भी खींच लेते हैं।

मुसलमान सेनापतिके भयसे हो अथवा अपने नित्य नियमसे ही हो हिन्दू सूर्य्य पश्चिममें जाकर छिप गये। चिड़ियाँ चहचहाती हुई अपने अपने घोसलोंकी ओर चलीं, धीरे धीरे कृष्णवसना सन्ध्या पृथ्वीपर उतर आयी।

हसनसाहब अच्छे कपड़े-लत्ते पहन अकेले धात्री जेरीनाके मकानकी तरफ चले।

राजप्रासादके निकटही धात्री जेरीनाका मकान था, मकान बहुत छोटा परन्तु सुन्दर और सुसज्जित था। दरवाजेपर एक पहरेदार खड़ा था, हसन साहबको देखते ही उसने उठकर एक लम्बी सलाम की। हसनसाहबने जरा मुस्कुराकर कहा—"अपनी मालकिनको मेरे आनेकी खबर दो।"

पहरेदार चला गया, थोड़ी ही देरमें जेरीना बीबी स्वयं आकर सम्मानके साथ हसनसाहबको भीतर ले गयी।

जेरीना बीबीके होठोंपर सदा हँसी लगी ही रहती थी, उन्होंने हँसते हुए कहा—"कहिये सेनापतिजी, इस गरीबके घर क्या सोचकर—"

हसन—एक तस्वीरकी बात पूछने आया हूं।

जेरीना—आपकी कोई चीज खो गयी है ?

हसन—चित्र तो नहीं खो गया है, परन्तु कुछ न कुछ तो जरूर ही खो गया है।

जेरीना—और कुछ खो गया है और आप खोजने आये हैं

तस्वीर ! इसका क्या मतलब, आज शराबकी बोतल क्या अधिक खाली हो गई है ?

हसन—हाँ, मैंने आज एक दूसरी ही शराब पी है, उससे और भी अधिक नशा होता है।

जेरीना—मैं गरीब दाई ठहरी इतनी बड़ी-बड़ी बातें नहीं समझती, चित्रकी बात आप क्या कह रहे थे ?

हसन—तुमने किसी तस्वीर वालीको क्या कभी तस्वीर बेचनेको दी थी ?

जेरीना—तस्वीर बेचना बेचाना तो मेरा पेशा नहीं है, मेरा पेशा तो आप जानते ही हैं।

हसन—परन्तु तस्वीर वालीने तुम्हारा नाम बतलाया है।

जेरीना—झूठ बात है, वह चित्र है किसका ?

हसन०—मैं उसे पहचानता नहीं; परन्तु किसीसे मालूम हुआ है कि वह मार्जिना बेगमका चित्र है।

जेरीना—तो क्या आप मुझे एक झमेलेमें डालनेके लिये आये हैं। नवाबके अन्तःपुरका चित्र बाहर लानेवालेको क्या दण्ड मिल सकता है, आप जानते हैं ?

हसन०—हाँ, जानता हूं, एक बार ही फाँसी।

जेरीना—तो क्या मेरी जान लेने ही की आपकी इच्छा है।

हसन—तुम्हारी जान मैं नहीं चाहता। मैं चाहता हूं, उस तस्वीरकी जान।

जेरीना—मेरी जान मेरी इच्छाके वशमें है। आप धनी हैं, वीर सेनापति हैं, यदि आप चाहें तो यह जान दे भी सकती हूं। परन्तु दूसरेकी जान मैं कैसे दे सकती हूं।

हसनसाहबने हँसकर कहा—"तुम बड़ी चतुर हो। बातोंमें तुम्हें हराना कठिन है। परन्तु असल बात जो कहता हूँ, सुनो!

जेरीना—कहिये।

हसन—चित्रके सम्बन्धमें तुम क्या जानती हो?

जेरीना—सच कहती हूं, जान तो सबकी प्यारी होती है। यदि मैं जानती भी होऊँ तो नवाबके सेनापतिको कैसे बता सकती हूं?

हसन—जेरीना बीबी! मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूं। यह बात कोई जानने न पायेगा। जो जो मैं पूछताहूं निडर होकर कहो। यह चित्र किसका है?

जेरीना—मार्जिना बेगमका!

हसन—तुम्हें कैसे मिला?

जेरीना—मैं उसकी धाई हूं, विपदमें पड़कर उसने मुझे यह चित्र दिया है।

हसन—विपद कैसी?

जेरीना—एक दिन नवाबके खास कमरेके पास होकर जाते समय उसने आईनेके भीतरसे एक सुन्दर युवकका चित्र देखा था और उसे देखते ही मोहित हो गई थी। आजकल वह उस युवककी चिन्तामें ही बेचैन हो रही है; परन्तु उस युवकका पता ठिकाना किसीको मालूम नहीं, एक बता सकते हैं, नवाब परन्तु उनसे पूछ ही कौन सकता है? एक दिन उसने मुझसे सभी बातें कही थी और यह भी कहा था कि उस युवकने भी उसे देख लिया है। उसीकी तरह वह युवक भी यदि उसके लिये व्याकुल हुआ होगा तो उसका चित्र देखते ही उसके साथ मिलनेकी चेष्टा करेगा।

हसन—उस चित्रका मूल्य पाँच लाख रुपया या पाँच जूता रखनेका क्या मतलब था ?

जेरीना—मार्जिनाकी इच्छा थी कि कोई दूसरा आदमी उस चित्रको खरीदने न पावे। वह युवक यदि सचमुच उस पर अनुरक्त हुआ होगा तो यही मूल्य देकर उस चित्रको खरीद लेगा। जो युवक नवाबके खास कमरेमें बैठ सकता है, वह अवश्य ही कोई धनी मनुष्य होगा या कोई वीर होगा। यदि धनी होगा तो इतने रुपये देकर सहज ही उस चित्रको खरीद लेगा। और यदि वीर होगा तो चित्रको जबर्दस्ती छीन लेगा। साथ ही राजभय भी दिखलाया गया था। जिससे सच्ची वीरताका पता लग जाय।

हसन—मैं एक चित्र तुम्हें देता हूं ; तुम मार्जिना बेगमको ले जाकर दिखलाना। उस चित्रमें अङ्कित किया हुआ युवक ही यदि उनका देखा हुआ युवक हो तो, मैं खुशीसे उन दोनोंका मिलन करा सकता हूं। वह युवक भी मार्जिना बेगमके लिये बेचैन हो रहा है।

इतना कहकर हसनसाहबने सोनेके फ्रेममें बँधा हुआ एक चित्र निकालकर जेरीना बीबीके सामने रखा। जेरीना बीबीने चित्रको देखते ही मुस्कुराकर कहा—"यह तो आप ही का चित्र है।"

हसन—तब तो उन्होंने मुझे ही देखा होगा। मैं एक दिन आईनेमें उनका चेहरा देखकर मोहित हो गया, आज भी वह मोह ज्योंका त्यों बना है, यदि मार्जिना बेगमको न पाऊँगा, तो मैं पागल हो जाऊँगा।

जेरीना—यदि ऐसी बात है, तो आप बड़े भग्यशाली हैं। क्योंकि मार्जिना बेगम जैसी भुवनमोहनी सुन्दरीका किसी युवक-पर मोहित होना कम सौभाग्यकी बात नहीं है।

हसन—आज मैं जाता हूं, कल शामतक मुझे इसकी खबर मिलनी चाहिये।

जेरीना—बहुत ठीक। इधर भी एक पल एक वर्ष हो रहा है।

हसन साहब चले गये! धाई अकेले हँसती हँसती लोट पोट होने लगी और मन ही मन कहने लगी कि इस बार मेरी सन्दूकची अवश्य ही भरेगी, इसमें सन्देह नहीं।

# ग्यारहवां परिच्छेद

दूसरे दिन सन्ध्या समय हसन साहब अपने बैठकेमें उत्कण्ठित होकर बैठे हुए थे। कब धात्री जेरीना बीबी या उसका आदमी आयगा और प्यारी मार्जिना बेगमकी खबर सुनायेगा, इसी उत्कण्ठासे उनकी छाती बार बार धड़क रही है। जो कोई आदमी, जो कोई गाड़ीघोड़ा उनके मकानके पाससे होकर जाता है, उसे मार्जिना बेगमका वार्त्तावाहक ही अनुमान करके चौंक उठते हैं। परन्तु वह आदमी या गाड़ी उनको निराश करके चला जाता है, तो उनका हृदय एक बारगी बैठ जाता है। इसी प्रकारकी आशा और कौतूहलसे लड़ाई करते हुए हसन साहब अपने बैठकेमें बहुत देरसे बैठे हुए थे।

परन्तु अन्तमें एक गाड़ी उनके दरवाजे पर आ ही तो गई। हसनसाहबने सोचा, अवश्य ही जेरीना बीबी गाड़ीसे उतर रही है। परन्तु जब जेरीना बीबीके बदले एक संभ्रान्त राज-कर्मचारी उनके सामने आकर खड़े हो गये तब उनका सारा सुख-स्वप्न हवा हो गया। बाहरसे उन्होंने अपने मनका भाव छिपाकर राज-कर्मचारीको बड़े आदर सम्मानके साथ बैठाया और आनेका कारण पूछा।

कर्मचारी ने कहा—"नवाब बहादुरका हुक्म हुआ है कि आज ही आप भास्करतीर्थको पकड़ने के लिये यात्रा करें। उसका अत्याचार अब दिन पर दिन बढ़ता जा रहा है। कई दिन हुए

उसने राजधानीको आता हुआ राज-कर लूटवा लिया है। और प्रजाओं में उसके आदमी विद्रोह फैला रहे हैं। इधर आप धींगा धींगी करके दिन पर दिन काटते जा रहे हैं। बादशाह आपपर बहुत रंज हुए हैं, आज ही आप यात्रा कर दीजिये। कल यदि आप गोलकुण्डामें दिखलायी पड़ेंगे तो आपकी नौकरी तो जायेहीगी और कड़ा दण्ड भी भोगना पड़ेगा।"

इतना कहकर कर्मचारीने नवाबकी मुहरका एक परवाना दिखलाया।

यह खबर सुनकर हसनसाहबके मनमें बड़ी खलबली मच गयी। कहाँ तो प्रेमिकाकी प्रणय-वार्ताकी वह अपेक्षा, कहाँ आया उनके सामने राज-रोष, कर्म च्युति और कठिन दण्डका परवाना!

कर्मचारी चला गया। फिर कुछ देरके बाद ही एक दूसरी गाड़ी आकर हसनसाहबके फाटकपर खड़ी हुई। इस बार सचमुच जेरीना बीबी ही गाड़ीसे उतरी थी। धीर गंभीर भावसे जेरीना बीबी उनके बैठकमें आ पहुँची। जेरीना बीबीको देखते ही हसन साहब कुछ देरके लिये राज-रोष और राज-दण्डको भूल गये। उनका हृदय आनन्द से नाच उठा। जेरीना बीबीके कमरेमें प्रवेश करनेपर उन्होंने आदरसे उसको बैठाया और मुस्कुराते हुए पूछा—"कैसी खबर?"

जेरीना—खबर क्या बताऊँ? पहले मैं जानती थी कि लड़ाईमें दुश्मनोंकी जान लेनेमें ही आप बहादुर हैं; परन्तु अब मालूम होता है कि अन्तःपुरकी बहू-बेटियोंकी जानें भी आप लेते हैं।

हसनसाहब का हृदय नाँच उठा। उन्होंने बीच ही में बात छेड़कर कहा—"आज ही भेंट होनी चाहिये! क्योंकि आज ही मैं बिख्यात डाकू भास्करतीर्थको पकड़नेके लिये रवाना हो रहा हूं। कबतक लौटूँगा कोई निश्चय नहीं।

जेरीना बीबीने कुछ देर तक सोचकर कहा—"बेगममहलसे सटे हुए बागीचेकी बावलीके किनारे पहर भर रात जानेपर आप जाकर खड़े होइयेगा, मार्जिना बेगमसे भेंट होगी। यह दस्ताना अपने पास रखिये, यदि खोजा नौकर आपको रोके तो दिखला दीजियेगा।"

जेरीना बीबी चली गयी। इधर हसनसाहब बैठे बैठे पहर भर रातकी अपेक्षा करने लगे।

चाहे कितनी ही देरका समय हो, आता ही है, इसलिये पहर भर रातका समय भी आ गया। हसनसाहब उपयुक्त वेश भूषासे सुसज्जित होकर राजप्रासादके अन्तःपुरके उद्यानमें बावलीके पास आ पहुँचे। बावलीके घटपर जाकर खड़े होते ही एक सर्वालङ्कार भूषिता, सर्वाङ्ग सुन्दरी रमणी वहाँ आ पहुँची। उसने आते ही कहा—"इधर आओ।"

हसनसाहब चुपचाप उसके पीछे पीछे चलने लगे। कुछ दूर जाकर एक लताकुंजके सामने वह रमणी खड़ी हो गयी। वहाँ गाढ़ा अन्धेरा होते हुए भी सामना सामनी खड़े होनेके कारण दोनों व्यक्ति एक दूसरेका मुख अच्छी तरह देख सकते थे। हसनसाहब जब घरकी तरफ लौटे तब वह मोहकी मदिरा में डूब उतरा रहे थे। उनका मन किसी प्रकार भी गोलकुण्डा छोड़कर जानेको राजी नहीं होता था। परन्तु तुरत ही नवाबका

हुक्म याद पड़नेपर उनका कलेजा दहल जाता था। नौकरीकी कोई बात नहीं थी। कोई दूसरा काम करके भी भरण-पोषण कर सकते थे; परन्तु कठोर दण्ड--वही तो मुश्किलकी बात है। नवाबने तो सिर्फ दो ही दण्ड सीखे हैं या तो प्राण-दण्ड या यावज्जीवन कारावास ! इन दोनोंमें एक भी प्रेमी हसनसाहब को स्वीकार न था, इसलिये कोई दूसरा उपाय न देखकर उन्होंने भास्करके विरुद्ध फौज साजकर यात्रा करना ही निश्चय किया और घर आकर अपनी सहधर्मिणी पत्नीसे कहा—"आज ही मैं भास्करतीर्थको पकड़नेके लिये जा रहा हूं।"

बानू बीबीने आश्चर्यसे कहा—"आज ही ? पहले कहा क्यों नहीं ?"

हसन—क्या सभी बातें कहनी ही चाहिये ?

बानू—क्यों नहीं, मैं होती हूं बानू बेगम ?

हसन—अच्छा तो हुक्म हो मैं चलता हूं।

बानू—कब तक आना होगा ?

हसन—जब भास्कर पकड़ा जायगा, यदि वह न पकड़ा गया, मैं ही उसके हाथमें पड़ गया, तो नहीं भी लौट सकता हूँ।

बानू बीबीकी आँखें भर आयी, वह आँसुओंको पोछनेके लिये वहाँसे हट गयी। हसनसाहब भी घरसे बाहर हुए, जब तक आँखसे न अलग हुए बानू बीबी एकटक उनकी ओर देखती रही। अन्तमें दोनों हाथ जोड़कर ईश्वरको उद्देश्य करके कहने लगी "प्रभो ! दीनदयाल ! मेरे हृदयनिधि अत्याचारीका दमन करने जा रहे हैं, उन्हें सकुशल मेरे पास लौटा देना, मेरी एक मात्र यही प्रार्थना है।

---

# बारहवाँ परिच्छेद

बहुत दूरतक फैला हुआ खुला मैदान है, उसकी अगल-बगल छोटी बेसिलसिलेकी पहाड़ियाँ हैं। बीच में एक छोटीसी नदी बहती है, उसके किनारे पर एक जगह एक पहाड़िये पेड़की शाखा लटक रही है। भास्करतीर्थ और उदयसिंह कहींसे आकर उसकी छायामें बैठे हुए हैं।

दो पहरका समय है, प्रकृति बिल्कुल सूनसान और आलस्य भरी है, मानो दोपहरकी तन्द्रामें नदी, वृक्ष और पहाड़ सभी निद्रित हो रहे हैं। वनदेवी भी निद्रित हो रही है, आकाश भी निद्रित हो रहा है, जिसके कारण सूर्यकी प्रखर किरणोंसे आकाश पाताल तप रहा है।

भास्करतीर्थ और उदय दोनों ही निस्तब्ध होकर बैठे हुए थे। किसीकी जुबानपर बात न थी। थोड़ी ही दूरपर एक राजहंस पीनी के ऊपर उतराया हुआ था। उसके पर स्पन्दहीन और आँखें मुँदी हुई थीं, मानो वह विदाईका गान गा रहा था।

आसन्नमृत्यु राजहंसकी ओर देखकर उदयसिंहने कहा—यह देखिये, राजहंस अपनी अन्तिम सांस ले रहा है, अब नहीं जी सकता।

भास्करने गम्भीर होकर कहा—"मैं बहुत देरसे उसका विहाय संगीत सुन रहा था।

उदय—वह विहायसंगीत क्या है ?

भास्कर—गत जीवनकी स्मृति, पाप पुण्यका लेखा।

उदय—हाय! एक दिन हमें भी यही मृत्युसङ्गीत गाना होगा?

भास्कर—मृत्युसे डरनेकी कोई बात नहीं, वही तो जीवनका विकास है।

उदय—"जीवनका विकास" इतना बड़ा शब्द मेरी समझ में नहीं आता, समझाकर कहिये।

भास्कर—जीवनके विकासका अर्थ तुम सिर्फ इतना ही समझ रक्खो, कि जीवनका अक्षय और अमर हो जाना ही उसका चरम विकास है।

उदय—जीव अक्षय हो सकता है? क्योंकर?

भास्कर—अमृत खाकर।

उदय—अद्भुत बात कहते हो, राजहंसकी मृत्यु देखकर शायद आप बहुत विचलित हो गये हैं।

भास्कर—मैं विचलित नहीं हुआ हूँ, तुम अमृत पहचानते नहीं, इसलिये इस बातको सुनकर हँसते हो।

उदय—अमृत क्या है?

भास्कर—देवतागण बार बार दानवोंके आक्रमणपर आक्रमण सहते सहते निर्बल निस्तेज और प्रपीड़ित हो रहे थे। इसलिये उन्होंने जातीय शक्ति को सम्बुद्ध और एकत्रित करके शत्रु और मित्र सुर और असुर सभीने मिलकर समुद्र मथा था, जिससे अमृत निकला। वह अमृत क्या था? जातीय शक्तिकी समष्टि। यदि हम भी जातीय शक्तिको सम्बुद्ध और एकत्रित करके एक समष्टि बना सकें तो हमलोग भी देवत्व और

अमरत्व प्राप्त कर सकते हैं। हमलोगों का नाम इतिहास में उसी प्रकार अमर हो सकता है, जिस प्रकार हमारे पूर्वजोंका हो रहा है!

उदय—अर्थात् आप कहते हैं, देशभक्त होनेके लिये! परंतु मैं एक तुच्छ आदमी हूं, मैं देशका क्या उपकार कर सकता हूं?

भास्कर—स्वदेश-भक्ति के लिये न धन सम्पत्तिकी ही आवश्यकता पड़ती है और न बल-वीर्य्यकी ही। स्वदेश-भक्तिके लिये सिर्फ हृदय चाहिये, भक्ति मात्र ही हृदयकी वस्तु है। धनी, गरीब, पण्डित, मूर्ख, दुर्बल, निर्बल सभी मनुष्य ही स्वदेश के प्रति इस भक्तिका उन्मेष कर सकते हैं। ज्ञान प्रचार, धर्म प्रचार, आत्मोन्नति और परोन्नतिकी चेष्टा, ज्ञानकी खोज, सामाजिक राजनैतिक उन्नतिकी चेष्टा आदि असंख्यों कार्य्यों में स्वदेश भक्ति या हितैषिताको फैलाया जा सकता है। हालेण्ड देशका नाम सुना है न?

उदय—सुना है।

भा०—तुम जानते होगे कि हालेण्ड समुद्रके किनारे समुद्र की सतहसे बहुत ऊपर नहीं है। समुद्रके ज्वार भाटेसे वह देश डूब जाता है, इसलिये उन्होंने देश-रक्षाके लिये एक मजबूत बान्ध बाँध रक्खा है। यदि किसी प्रकार वह बाँध टूट जाय तो सारा देश बातकी बातमें समुद्र में डूब जाय! एक दिन शामको एक लड़केने उस बाँधसे होकर जाते हुए देखा कि एक जगह बाँधसे झिर झिर करके पानी गिर रहा है। लड़का समझ गया कि बाँधमें छेद हो गया है, शीघ्र ही बाँध टूटना चाहता

है। इसी समय यदि बाँधकी मरम्मत न की जायगी, तो बड़ा अनर्थ हो जायगा। लड़केने चारो ओर देखा, परन्तु एक भी मनुष्य आस पास न दिखाई पड़ा। बालक अब बड़ी चिन्तामें पड़ गया कि यदि वह गाँवमें लौट कर लोगोंको खबर देने जाँय तो उसके आते आते बाँध टूट सकता है। इसलिये और कोई उपाय न देखकर वह बाँध के उस छेदमें उँगली दबाकर वहीं बैठा रहा, हालेण्ड जैसे शीत प्रधानका पाला, समुद्रकी लहरों के छींटे, और सम्मुख ठण्डी हवा उसका सारा शरीर अवसन्न और सूना हो गया, परन्तु तो भी उसने छेदसे उँगली न निकाली। सबेरे लड़केके पिताने उसे खोजते हुए आकर देखा। बालक बाँधके छेदमें उँगली दबाये बेहोश होकर पड़ा हुआ है! इसीको कहते हैं स्वदेश भक्ति! हमलोगोंके सामने भी प्रति दिन असंख्यों ऐसी घटनाएँ हो रही हैं। जिनपर देश के हितपर स्थायी और प्रभावपूर्ण असर डाला जा सकता है, परन्तु हममें स्वदेशभक्तिका पूरा उन्मेश नहीं है। इसलिये हमलोग न तो स्वदेशकी बात ही उतने आग्रहसे सोचते हैं, और न उन छोटी मोटी घटनाओं पर हमारा ध्यान ही जाता है। एक और दृष्टांत देकर मैं इस विषयको और भी साफ कर देता हूं। अभी थोड़े ही दिन हुए शाहजहाँकी कन्याको कोई कड़ी बीमारी हुई थी? सभी हकीम वैद्य हार मानकर बैठ गये थे। सम्राटने अंग्रेजी चिकित्सकोंकी बड़ी प्रशंसा सुनकर ब्राउटन नामके एक बड़े अंग्रेज डाक्टरको बुलवाया था। उस डाक्टरकी चिकित्सासे शाहजादीकी बीमारी अच्छी हो जाने पर सम्राटने अंग्रेज डाक्टरको मुंहमाँगा पुरस्कार माँगनेको कहा था। परन्तु स्वदेश

भक्त चिकित्सकने अपने लिये कोई धन दौलत ही न माँगी और न कोई ऊँचा पद और गौरव ही, किन्तु उसने जो वस्तु माँगी वह उसके लिये न सही, उसके देशके लिये अमूल्य थी। जिसके कारण उसका देश शक्ति और सम्मानके सर्व्वोच्च शिखरपर पहुँच सकता था। उसने कहा—"जहाँपनाह! मेरी कम्पनीने भारतमें व्यापार करनेके लिये आपसे कितनी ही बार सनद चाही है, परन्तु आपने कभी हमलोगोंकी प्रार्थना पूरी नहीं की है। मैं उसी सनदके लिये प्रार्थना करता हूं। हमलोग कलकत्ते के आस पासके स्थानोंमें कोठियाँ बनाकर यहाँ व्यापार करना चाहते हैं।"

उदय—हमलोगोंके देशमें क्या ऐसे देशभक्त मनुष्य कभी उत्पन्न नहीं हुए हैं?

भास्कर—असंख्यों हो गये हैं, यदि देशभक्त न होते तो एक समय भारतवर्ष सभ्यताकी सर्व्वोच्च शिखरपर न पहुँचा होता। हिन्दू-साहित्य, संस्कृत-भाषाका भण्डार-जीवनका उच्च आदर्श, धर्म और दर्शनका चरम उत्कर्ष जिनके कारण भारतवर्ष पूज्य और गौरवमय है। यह सब उन्हीं स्वदेश-भक्त भिक्षाभुजी ब्राह्मणोंकी कीर्त्ति है. जिन्होंने अपना सारा जीवन देश और समाजके लिये ही उत्सर्ग कर दिया था। राम कृष्णको हमलोग आदर्श क्यों मानते हैं? जानते हो? तुम कहो वे ईश्वरके अवतार है, मैं भी उन्हें वैसा ही मानता हूं। परन्तु यदि उन्हें एक साधारण मनुष्य समझकर भी विचार कर देखें तो हमलोग उन दोनोंसे बढ़कर स्वदेशभक्त और स्वजाति वत्सल मनुष्य पृथ्वीपर बहुत कम ही जन्मे हैं। उन्होंने

सचमुच अपने देश और जातिको संहारके मुखसे खींच लिया है। जिस समय रावणके अत्याचारसे प्रजा-मण्डल हाहाकार कर रहा था, तब रामचंद्रका जन्म हुआ था। उन्होंने अपना सारा जीवन स्वदेश और स्वधर्मकी सेवामें ही लगा दिया था। अपने देशके मङ्गल और हितपर उनका इतना अधिक ध्यान रहता था, कि अपने चरित्रकी कमजोरी और कलङ्क वह किसी प्रकार भी सहन नहीं कर सकते थे।

उदय—आप सच कहते हैं, हमलोग रामचंद्रजीको भगवान का अवतार मानकर ही भक्तिसे गद्-गद् हो जाते हैं; परंतु उनको अपने जीवन और कर्मोंका आदर्श नहीं बना सकते?

इसी समय उस क्षुद्र नदीको तैरकर एक आदमी उनके पास किनारे पर उठा और इधर-उधर देखकर जहाँ भास्करतीर्थ और उदयसिंह बैठे हुए थे, वहीं आ पहुँचा।

आगन्तुकके मुखकी तरफ देखकर भास्करने पूछा—"क्या खबर है।"

प्रणाम करके आगन्तुकने कहा—"आपको पकड़नेके लिये गोलकुण्डाका सेनापति हसनसाहब फौजके साथ पाँचबीबी पहाड़के पास पड़ाव डालकर ठहरा हुआ है, आपकी खोजके लिये चारों ओर गुप्तचर भेजे गये हैं।"

भा०—भगवान कहाँ हैं?

आगन्तुक—मन्दिरमें, उन्होंने ही मुझे आपके पास भेजा है।

उसी समय एक दूसरे आदमीने आकर भास्करको प्रणाम किया और कहा—भगवानने ही मुझे आपके पास भेजा है। राजमहेन्द्री नगरमें हिंदू मुसलमानोंमें किसी उत्सवके लिये बहुत

झगड़ा फसाद मचा हुआ है। आज कई दिनोंसे दोनों जातियोंमें मारकाट और खून-खराबी हो रही है, आज रातको उसी उत्सवके उपलक्ष्यमें हिंदुओंकी तरफसे जुलूस निकलनेवाला है। मुसलमान बाधा देनेकी तैयारी कर रहे हैं। आज दोनों दलोंमें बहुत बड़ा संघर्ष हो सकता है, कितनेही आदमी हताहत हो सकते हैं।

भा०—भगवान, क्या अभी मंदिरमें ही हैं ?

दूसरा आदमी—नहीं वह भी आ रहे हैं, किसी कामके लिये वह जरा घूमकर आयेंगे, इसलिये खबर देनेके लिये मुझे आगे भेजा है।

भास्कर—अच्छा, तुमलोग जाओ।

दोनों चले गये, भास्करतीर्थ और उदयसिंह भगवानके आनेके इन्तजारमें बैठे रहे। थोड़ी देरके बाद ही भगवान वहाँ आ पहुँचे। भास्करको प्रणाम करके उन्होंने कहा—"हसन पाँचबीबी पहाड़पर छावनी डालकर बैठा है, और राजमहेन्द्री के हिन्दू मुसलमान झगड़ा फसाद करके मर रहे हैं ?"

भा०—सबसे जरूरी काम है, राजमहेन्द्री जाना। मूर्खताके कारण बहुत आदमी मर जायेंगे, उन्हें समझा-बुझाकर किसी तरह शान्त करना अत्यन्त अवश्यक है। दूसरा काम है—हसनसाहबकी चाल-ढालपर नजर रखना।

भग०-हसनसाहबपर आक्रमण करनेका यही ठीक मौका है।

भा०—और राजमहेन्द्रीके विषयमें क्या सोचते हो ?

भग०—मेरे कहनेका मतलब यह है कि आप ही अकेले वहाँ जाइये। धर्मान्धोंका अन्धविश्वास दूर करना बाहुबलका काम नहीं है। इसके लिये बड़े ज्ञान और पण्डिताई की जरूरत है जो आप ही कर सकते हैं।

भा०—हसनसाहबके बारेमें ?

भग०—उदयसिंहको साथ लेकर मैं उन पर आक्रमण करनेके लिए जाता हूं।

भा०—यह काम बहुत सरल मत समझना। हसन बड़ा वीर सेनापति है। बड़ा कौशली और धूर्त है।

भगवान—हमारी आसुरी सेनाके सामने उसकी सारी धूर्त्तता हवा हो जायगी।

भास्कर—मुझे तो नौकापर जाना होगा। सफर बहुत लम्बा और समय बहुत थोड़ा है।

भगवान—हाँ, यहाँसे नौकामें ही जाइये कृष्णा नदीमें बजरा तैयार है। आधीरात तक आप राजमहेन्द्रीसे लौट आईयेगा और मद्रा घाटपर बजरा खड़ाकर हमलोगोंका इन्तजार कीजियेगा। हमलोग वहीं आकर आपसे मिलेंगे।

भास्कर—हसनसाहबको पकड़नेकी ही चेष्टा करना। व्यर्थमें खून खराबी करना अच्छा नहीं। हाँ, यदि आत्मरक्षाके लिये कुछ करना पड़े तो अवश्य कर सकते हो। इसके बाद भास्करने उदयसिंहकी तरफ देखकर कहा—उदय ! आज तक मैंने तुमको जो कुछ सिखलाया है, उसकी आज तुम्हें परीक्षा देनी होगी। तुम भगवानके साथ जाओ।

उदयसिंह भास्करतीर्थके चरण छूकर उठ खड़े हुए। भास्कर भी उठे।

सब लोग उत्तर तरफ चलने लगे। कुछ दूर जाकर भास्कर नदीके किनारेकी तरफ चले गये। और भगवान तथा उदयसिंहने पश्चिमका रास्ता नापा।

# तेरहवां परिच्छेद

भास्करतीर्थने फेनिल तरङ्गमयी कृष्णा नदीके किनारे जाकर देखा कि एक सुसज्जित बजरा उनके लिये अपेक्षा कर रहा है। बजरेपर उनके चढ़ते ही मल्लाहोंने बजरा खोल दिया। अनुकूल वायुमें पाल उड़ाता हुआ बजरा तीव्र वेगसे राजमहेन्द्रीकी तरफ चला।

राजमहेन्द्रीमें जिस समय बजरा पहुँचा, उस समय सन्ध्या हो गयी थी। नगरमें प्रवेश करके उन्होंने देखा कि सारे नगरमें आतंक छाया हुआ है। दौरी दूकानें न जाने कबसे बन्द हो गयी हैं। रास्ते भी सून सान हो रहे हैं! कहीं मनुष्यका निशान नहीं। सभी जगह एक ही हालत है, भास्करतीर्थ अकेले राजपथसे होकर चल रहे हैं। रास्तेके किनारेके एक दो मंजिले मकानके जंगलोंसे एक बूढ़ेने उन्हें पुकारकर कहा—"तुम कौन? मालूम होता है तुम इस शहरमें नये आ रहे हो। इतनी बेवकूफी क्यों करते हो?

भास्करने ऊपर ताककर कहा—आपने ठीक मालूम किया है। मैं इस शहरमें नया ही आ रहा हूं, परन्तु आपने मेरी बेवकूफी क्या देखी?

बूढ़ेने वहींसे कहा—"रास्तेपर क्या किसी मनुष्य प्राणीको हेर रहे हो? एक दूकान भी क्या खुली देखते हो?

भास्कर—नहीं देखता हूं और इसका कारण भी मेरी समझ में नहीं आता है। मैं अभी इस नगरमें प्रवेश कर रहा हूं।

बूढ़ा—जल्दी भागो, किसी गृहस्थके घर आश्रय लो। आज हिन्दुओंका रथ निकलेगा।

भास्कर—निकलेगा तो अच्छा ही है, मैं देख पाऊँगा।

बूढ़ा—मुसलमान उसे तोड़ देंगे।

भा०—क्यों? इसमें मुसलमानोंका क्या नुकसान है? रास्तेसे जगन्नाथजीका रथ जायगा, इससे मुसलमानोंका क्या सम्बन्ध है।

बूढ़ा—इतनी बकवाद मैं नहीं जानता सिर्फ इतना ही जानता हूं, कि आज हिन्दू मुसलमानोंमें बड़ी लड़ाई होगी। तुम यदि अपनी कुशल चाहते हो तो भागो।

भा०—लड़ाई कब होगी? कितनी रात गये जुलूस निकलेगा?

बूढ़ा—तुम तो भले आदमी हो। राई-रत्ती खबर मुझसे ही पूछने लग गये। अब मैं अधिक बक नहीं सकता। तुम्हारी जो खुशी हो करो, मैं कुछ भी नहीं जानता।

भास्करतीर्थ मुस्कुराते हुए फिर आगे बढ़े। कुछ दूर जाते ही सहसा एक तरफसे बाजेकी आवाज सुनाई पड़ने लगी। जिधरसे आवाज आई थी, अब वह उधर ही को मुड़ गये।

एक चौरास्तेपर जगन्नाथजीका रथ लिये हिन्दू खड़े हैं। बाजे कस-कसाकर तैयार किये जा रहे हैं। रथके इधर-उधर सैकड़ों हिन्दू जवान तलवार, बर्च्छा, भाला और लाठी लिये हुए डटकर खड़े हैं। कुछ ही दूरी पर मुसलमान जवान बर्च्छा तलवार और बल्लभ लिये पैंतरा बदल रहे हैं। हिन्दुओंके रथ लेकर चलते ही ये आक्रमण करेंगे। इसी समय भास्कर वहाँ पहुँचे।

एक मुसलमान लठैतने भास्करको देखकर कहा—तू कौन है ? मालूम होता है काफिर हिन्दू है ?

भास्करने दृढ़ स्वरमें कहा—"हाँ मैं हिन्दू हूं ?"

पीछेसे एक दूसरे मुसलमानने चिल्लाकर कहा—पूछता क्या है, सरपर एक लाठी जमा दे।

पहले जवानने तुरतही भास्कर पर लाठी चला ही तो दी, परन्तु भास्करने उसकी लाठी बाँयें हाथसे पकड़ ली। मुसलमानने बहुत चेष्टा की कि लाठी छुड़ा लें, परन्तु वह किसी प्रकार भी सफल न हुआ। तब एक दूसरे मुसलमान जवानने उनपर लाठी चलाई; उसे भी उन्होंने दाहिने हाथमें पकड़ लिया। इसी समय एक तीसरा मुसलमान तलवार उठाकर उन्हें काटनेके लिये चला, परन्तु उन्होंने शीघ्रतासे दोनों लाठियोंको बायें हाथ में पकड़ दाहिने हाथसे उस तलवारको भी पकड़ लिया। भास्करकी यह वीरता देखकर अनेकों ही उनपर झपटे, परन्तु अब उन्होंने जल्दी गम्भीर स्वरमें कहा—मैं डाकू भास्करतीर्थ हूं। यदि मैं चाहूं तो तुम सभीको पैरोंतले रौंदकर यहाँसे चला जा सकता हूं। पास ही मेरे साथी ठहरे हुए हैं, यदि मैं चाहूं तो तुम सभोंका घर द्वार भी लूट सकता हूं। परन्तु मैं इसलिये नहीं आया हूं, मैं आया हूं तुमलोगोंका झगड़ा मिटानेके लिये। जो मैं चाहता हूं, उसे सुनो, नहीं तो मैं तुम सभीको अच्छी सीख दे जाऊँगा।

कितने ही आदमियोंने कहा—भास्कर डाकू है! पकड़ो। इतने आदमी हैं फिर डर किस बातका है।

परन्तु जिन्होंने भास्करके बल और विक्रमका परिचय पाया

था उन्होंने कहा—"नहीं, नहीं, व्यर्थमें अपमान सहनेकी क्या जरूरत, पहले वह क्या कहते हैं, सुन तो लिया जाय।

भास्कर—तुम आपसमें लड़ाई-झगड़ा क्यों कर रहे हो, इतने लाठी-पाटी लेकर क्यों खड़े हो।

उनमें जो अगुवा था उसीने आगे बढ़कर कहा—हिन्दू जुलूस निकालेंगे और हमलोग उन्हें मज़ा चखावेंगे।

भास्कर—हिन्दू भी संख्यामें कम नहीं है। वे भी हथियार पकड़ना जानते हैं। इसलिये केवल वे ही मजा चखेंगे, ऐसी बात तो नहीं है, तुम लोगोंको भी तो मजा चखना पड़ेगा! तुम्हारे भी कितने ही जवान मर-कट सकते हैं।

अगुवा—हाँ, सो तो मरेंगे ही।

भास्कर—तब निरर्थक दोनों दलोंके इतने लोगोंका जीवन नष्ट करनेकी जरूरत ही क्या आ पड़ी है? जिससे तुमलोग सब काम-काज छोड़कर यहाँ जान देनेके लिये दौड़ आये हो।

अगुवा—निरर्थक नहीं, हमलोग पुतलीका नाच नहीं होने देंगे। मूर्तिपूजा हमलोगोंके मजहबके खिलाफ है, इसलिये हमलोगोंके सामने खुले आम नहीं हो सकता।

भास्कर—( हँसकर ) अब वह दिन नहीं रहा, तुम आज कल अरब और पारसमें नहीं रहते। तुम्हें इस समय जिनके साथ रहना है, वे हिन्दुस्थानीय हैं, जिनका धर्म ही मूर्ति-पूजा है। ऐसी अवस्थामें यदि तुमलोग जिद्द पकड़ो कि हमलोग मूर्ति-पूजा नहीं होने देंगे, तो क्या तुम्हारा विश्वास है, कि तुम सभी हिन्दुओंको मुसलमान बना सकते हो? मुझे पूरा विश्वास है कि तुमलोग भूलकर भी ऐसी कल्पना नहीं करोगे, इसलिये

जब हिन्दुओंके साथ तुम्हें रहना ही है, तो क्यों न तुम सभी उनके साथ हिल-मिलकर रहो। तुमलोग यदि उनके धर्ममें हस्तक्षेप न करो, तो वे ही तुम्हारे धर्ममें हस्तक्षेप क्यों करने जायँगे। देखो! जैसी अवस्था और समय आता है उसीके अनुसार चलना पड़ता है। धार्मिक नियम विधि और कुछ नहीं एक समयकी अवस्थाके अनुसार बनाये हुए उपदेश हैं। काल-पात्र भेदसे यदि उनमेंसे दो एकको बदलकर दूसरे रूपमें लाना भी पड़े, तो उससे धर्मका लोप नहीं होता, और कोई भी धर्म या मत सर्वदाके लिये काल-पात्रके अनुसार अपरिवर्तनीय नहीं होता। उसमें परिवर्तन होते ही हैं!

अभी तुमलोग जितने जवान दोनों तरफसे लड़नेके लिये निकले हो, उनमें कितने ही मरेंगे, कितने घायल होंगे, और कितने ही लंगड़े लूले होकर समाजका बोझ होंगे। उनकी स्त्री, कन्या, पुत्र आदि दरवाजे दरवाजे ठोकरें खायंगे, कितने आत्महत्या करके मरेंगे! कितने अधःपतित और कलङ्कित होकर समाज और धर्मको कलुषित करेंगे। तब क्या तुम्हारे धर्मका गौरव रहेगा? भाइयो! तुमलोग धर्मके लिये शहीद होने जा रहे हो, परन्तु सचमुच क्या धर्मकी शहीदी इसीको कहते हैं?

अगुवा—इतनी बातें हमलोग नहीं जानते, हमलोग आत्मसम्मान जानते हैं। यदि हमलोग मोर्चेसे हटकर चले जायँ, तो हिंदू समझेंगे कि हमलोग डर कर भाग गये हैं।

भास्कर—मैं हिन्दुओंको बुलाकर भी कहता हूं, कि वे तुम्हें प्रेम भावसे बुलाकर गले मिलें और तुम्हें भ्रातृ-भावसे अनुरोध करके अपने जुलूसमें शामिल कर लें।

अगुवा—हिन्दू तो हमें छूना ही नहीं चाहते, जुलूसमें क्यों कर मिलायेंगे ?

भास्कर—यह भार मेरे ऊपर है, मैं उन्हें बुलाकर कहता हूं, यदि वे मेरी बात नहीं मानेंगे तो मैं उन्हींका मालमत्ता लूट ले जाऊँगा।

इसी समय बाजे बजाते हुए जुलूसके साथ हिन्दू जत्था आ पहुँचा। मुसलमानोंमें दो एक जवान लाठी उठाने जा रहे थे, परन्तु उनके सरदारने उन्हें मना कर दिया।

भास्करतीर्थने हिन्दुओंको रथ उतारनेके लिये कहा, हिन्दुओंमें जो गवाँर थे उन्होंने रुककर कहा—"चलाओ लाठी, मुसलमानके हुक्मसे जुलूस बन्द होगा ?" भास्करके कन्धेपर एक हिन्दू जवानकी लाठी आ ही तो बैठी; परन्तु उसकी चोट उन्हें मालूम ही न हुई उन्होंने मुस्कुराकर कहा—"मैं मुसलमान नहीं हूं, हिन्दू हूं। मेरा नाम भास्करतीर्थ है।" जिस जवानने लाठी चलाई थी, वह भास्करका नाम सुनते ही डरकर दलमें घुस गया। भास्करने मुस्कुराकर कहा—"भाइयो ! धर्मके लिये तुमलोग युद्ध करनेके लिये आये हो। यह खुशीकी बात है। मैं भी हिन्दू हूं, मुझमें हिन्दू धर्मकी कट्टरता तुममें किसीसे भी कम नहीं है। मैं भी धर्मके लिये, जरूरत पड़नेपर जान तक दे सकता हूं। परन्तु यहाँ देखना यह है कि प्रत्येक कार्यके लिये, बिना जान दिये, बिना लड़ाई किये, बिना खून खराबी किये, बिना दो एकका सिर फोड़े हाथ पैर तोड़े क्या धर्मका कार्य्य नहीं किया जाता ? क्या धर्मकी रक्षाके लिये एक मात्र पशुबल ही महाबल है ? यदि ऐसा ही है, तो उसे धर्म कहना

भी भण्डता है ! यह याद रखना चाहिये कि जान लेनेसे धर्मकी रक्षा नहीं होती, जान देने हीसे धर्मकी रक्षा होती है। इसलिये छोटी-छोटीसी बातोंके लिये भाईका खून बहाया जाय तो धर्मका कोई महत्त्व ही नहीं रहता। जानते हो, हिन्दू धर्म इतना गौरवमय क्यों है ? इसलिये कि यह त्याग और प्रेमके आधारपर प्रतिष्ठित है, इसमें विधर्मी शत्रुपर भी प्रेम और दयाका व्यवहार करनेका उपदेश दिया गया है। इस पवित्र धर्ममें कहीं भी लिखा नहीं है कि यवन देखते ही उसे मार डालना या मुसलमानके साथ मिलजुल कर न रहना। तुमलोग अस्पृश्यताका चाहे जो भी अर्थ करो उसका यह अर्थ नहीं है कि किसी प्राणी से घृणा करना, क्योंकि प्राणीसे घृणा करना ईश्वरसे घृणा करना, धर्मसे घृणा करना है। धर्मका उपदेश इतना संकीर्णता पूर्ण नहीं हो सकता जो किसीके प्रति घृणा और द्वेषका भाव पोषण करनेका आदेश करता हो। तुमलोग क्या जानते नहीं कि ईश्वरने शूकरका रूप धारण किया था ? वेश्याके घर कितने ही आर्य्य महापुरुषोंने जन्म ग्रहण किया था ? शोककी बात है कि जिस धर्ममें प्रेम और धर्मका आदर्श सबसे अधिक प्रचारित किया गया है उसके अनुयायी किसीको देखकर नाँक भौंह सिकोड़ें और शरीरसे शरीर छूजानेके भयसे दस हाथ पीछे हट जाँय, यह धर्मान्धता और भण्डता नहीं है, तो क्या है ?

भास्करतीर्थ की ओजस्विनी वक्तृता सबने ध्यान देकर सुनी और आपसमें काना फूसी करने लगे। उनमें जो सरदार था, वह आगे आकर बोला—"आप जो कहते हैं वह बिलकुल ठीक है; परन्तु हमारा उद्देश्य तो जबर्दस्ती लड़ाई करना नहीं है। हमलोग प्रति वर्ष जुलूस निकाला करते हैं, इस बार भी

निकाला है, परन्तु इस बार मुसलमान जबर्दस्ती बाधा देने आते हैं तो हमारे लिये उनसे लड़ाई करनेके सिवा दूसरा उपाय क्या है?

भास्कर—उपाय क्यों नहीं है? उन्हें समझाओ बुझाओ, अपनी भी बात उन्हें कहो, उनकी बात सुनो, अपनी भी जिद छोड़ो उन्हें भी जिद छोड़नेको कहो, यह न करके यदि एक लाठी लेकर खड़ा हुआ तो दूसरेने एक बारगी उसका सिर ही फोड़ डाला। यही क्या प्रेम सहिष्णुताका लक्षण है? मित्रसे प्रेम तो सभी करते हैं। मित्रके प्रति प्रेम न करना ही अस्वाभाविक है, इसलिये जब धर्मशास्त्रमें प्रेम करनेकी शिक्षा दी जाती है तो इसका अर्थ यह नहीं कि प्रेमीके साथ प्रेम करो बल्कि उसका अर्थ यह भी है कि जो शत्रु है उसको प्रेमसे मित्र बना लो। तुमलोग भी मुसलमानोंको, जो कि वास्तवमें शत्रु नहीं मित्र ही हैं, प्रेमसे अपना मित्र बनाना सीखो, उनके प्रति घृणाका व्यवहार न करके प्रेमका व्यवहार करो। वे अपने आप तुम्हारे मित्र बन जायेंगे फिर जुलूस निकालते समय लठैतोंकी जरूरत नहीं पड़ेगी। वास्तवमें सबलोग धर्मकी चिन्ता करनेका अवसर पा सकेंगे दोनों ही दलोंने स्तब्ध भावसे भास्करकी उपदेश पूर्ण वक्तृता सुनी और सभीने कहा—"लड़ाई झगड़ा नहीं करेंगे और आपसमें मिल-जुलकर भाई भाईकी तरह रहेंगे।"

इसके बाद जगन्नाथका रथ उठाया गया। मुसलमानोंने जुलूसमें सम्मिलित होकर हिन्दुओंके उत्साहको बढ़ाया!

परन्तु इसी समय भास्करतीर्थ कब लापता हो गये किसीको मालूम ही न हो पाया। उन्होंने महात्माकी बहुत खोज खबरकी परन्तु कोई फल न हुआ।

# चौदहवां परिच्छेद

पांचबीबीका टेढ़ा मेढ़ा पहाड़ बहुत दूर तक फैला हुआ विन्ध्याचल पहाड़का सर्वोच्चशिखर है। इसमें कितनी ही घाटियाँ और कितने ही प्लेट और मैदान हैं। हसनसाहब उसीके एक प्लेटपर छावनी डालकर बैठे हैं। उनके साथ कमसे कम दो हजार सेना, इसके अलावे हाथी, घोड़े और ऊँटोंकी बड़ी बड़ी फौजें हैं। हसनसाहब अपने चतुर दूतों और अनुचरोंको पहाड़ और घाटियोंका रास्ता-घाट देखने और भास्कर तथा उसके साथी डाकुओंकी खोज करनेके लिये भेजकर उनकी खबर लानेकी अपेक्षा कर रहे हैं।

रातका घोर अन्धकार छाया हुआ है, चारों ओर कुछ भी दिखलाई नहीं पड़ता। हसनसाहबकी रावटीके कुछ ही दूरपर सेनाओंका तम्बू है! सभी सिपाही खाने-पीनेकी तैयारी कर रहे हैं। नौकर-चाकर भी एक तरफ गाने बजानेमें उन्मत्त हो रहे हैं। पासहीके घने वृक्षोंकी छायासे पहाड़का घना अन्धकार और भी बढ़ रहा है रह-रहकर जंगल और पहाड़के भीषण पशु अपनी गर्जनसे स्थानकी विकट निस्तब्धता भंगकर रहे हैं। रावटीके सामने एक बहुत बड़ी मशाल जल रही है जिसके चारों ओर मशक और फतिंगे नाच रहे हैं।

हसनसाहब भोजन आदि करके सुनहले गड़गड़ेपर तम्बाकू पी रहे हैं। निद्रालू आँखें झेंप झेंपकर उन्हें शय्याका आश्रय लेनेके लिये अनुरोध कर रही है, इसी समय सहसा एक आदमी रावटीका पर्दा हटाकर उनके सामने आ खड़ा हुआ।

आगन्तुकका फौजी लिवास और अस्त्रोंकी चमक देखकर हसन साहब चौंककर बैठ गये और आँखें फाड़-फाड़कर उस भ षण मूर्तिकी तरफ देखने लगे।

आनेवाले भगवान थे, बायें हाथमें पिस्तौल लेकर हसन-साहबके मस्तकपर निशाना लगाया। और दाहिने हाथसे एक सीटी बजा दी, दक्षिण और उत्तर तरफसे भीषण कामान गरज उठे। पूरब और पश्चिमकी ओर दुरारोह पहाड़ है, अर्थात् हसनसाहब ससैन्य घेर लिये गये हैं।

हसनसाहब अपनी विपद समझ गये, उनके सारे बदनसे पसीना छूटने लगा। इसी समय चारों जवानोंने धड़-धड़ाते हुए रावटीमें प्रवेश किया, और भगवान का संकेत पाते ही दौड़कर हसनको पकड़ लिया। परन्तु पठान सेनापतिने एक ऐसा झटका मारा कि चारों जवान दस दस हाथ दूर जा गिरे। भगवानने मुस्कुराकर कहा—"बड़े बहादुर हो तुमलोग।" फिर उन्होंने हसनसाहबकी तरफ देखकर कहा—"मेरी पिस्तौलसे तुम नहीं बच सकते, मैं अभी पिस्तौल छोड़ता हूं।"

हसनसाहबने चारों तरफ नजर दौड़ाकर देखा, कोई भी अस्त्र शस्त्र दिखलायी न पड़ा। हसनसाहब कादर मनुष्य थे, मरते दमतक वह शत्रुकी वश्यता स्वीकार न करते, परन्तु इस समय मार्जिना बेगमका सुन्दर मुख, उसकी कातर प्रार्थना और पुनः मिलनकी आशा बार बार याद पड़नेसे वह मरते दमतक युद्ध करनेका साहस न कर सके। उन्होंने सकुचाते हुए कहा—"कहाँ जाना होगा, चलो?"

भगवानके संकेतसे उन चारों जवानोंने फिर आगे बढ़कर

दूने उत्साहसे हसनसाहबको बाँध लिया। और सब लोग उन्हें लेकर एक तरफ चले गये।

इधर सेनाओंमें घमासान लड़ाई हो रही है, परन्तु सेनापति हीन सेना अधिक देरतक मोर्चेपर डटी न रह सकी। इसके अलावे वे लोग घनघोर रात्रिमें सोनेके समय लड़नेको कभी तय्यार न थे। इसलिये थोड़ी देरतक लड़कर जब उन्होंने देखा कि सेनापति नहीं आये, तब इधर उधर तितर बितर हो गये। डाकुओंका काम भी पूरा हो गया था, इसलिये उन्होंने भी बाधा देनेकी चेष्टा नहीं की।

घड़ी भरके भीतर ही लड़ाई खतम हो गयी, एक भी आदमी मरने न पाया। डाकुओंने इसी घातसे लड़ाई की थी, जिससे सेना सेनापतिकी सहायताके लिये न आ सके और न उनकी खोज ढूंढ़ ही कर सके। उन्होंने मार-काट करनेकी कुछ भी चेष्टा न की थी, मुसलमान सेनाके मैदान छोड़कर भागनेपर वे भी अपने अड्डे पर लौट गये। फिर थोड़ी ही देरमें पाँचबीबी के पहाड़पर सन्नाटा छा गया।

कृष्णा नदीके किनारे बजरेपर बैठे हुए भास्करतीर्थ श्रीमद्-भगवत्गीताका पाठ कर रहे थे। चार डाकुओंके साथ भगवान वहीं हसनसाहबको लिये आये, भगवानने प्रणाम करके कहा—हुक्म तामील हुआ है। गोलकुण्डाके प्रधान सेनापति आपके सामने हैं।

भास्करतीर्थने हसनसाहबको आदर पूर्वक बैठाकर कुशल प्रश्न पूछा।

शत्रुसे इस प्रकार आदर सम्मान पाकर हसनसाहबने इसे अपना अपमान समझा और कुछ न कहकर चुपचाप बैठ गये।

भास्करतीर्थ उनके मनका भाव समझकर मुस्कुराते हुए बोले—हसनसाहब ! जिस भास्करको पकड़नेके लिये इतनी दूर आये हुए हैं। वह सामने ही है ! आरामसे बैठिये कोई चिन्ता नहीं है।"

सहनसाहब भास्करको टेढ़ी नजरसे देखकर, अपने क्रोधको छिपाते हुए बोले—"मुझे इस प्रकार बेइज्जत करनेसे लड़ाईमें मार डालना ही तो अच्छा था।"

भास्करने मुस्कुराकर कहा—"डाकू तो इज्जत आबरू रखते ही नहीं, यह जानी हुई बात है, परन्तु आप डरिये नहीं, सिर्फ अपना हाथ बढ़ा दीजिये हमलोग आपको दाग कर छोड़ देंगे।"

इतना कहकर भास्करने अपनी बगलके एक अनुचरकी तरफ देखा, वह अनुचर लोहेके फलोंवाले दो छोटे छोटे त्रिशुल ले उसपर पानी जैसा कोई तरल पदार्थ उठा भास्कर के सामने खड़ा हुआ। भास्करने हसनसाहबसे कहा—'आप दया करके अपना चपकन खोल डालिये, इन त्रिशूलोंको आपकी बाहोंसे छुआ देने ही से त्रिशूलका सुन्दर चिन्ह हो जायेगा। आपको कोई तकलीफ न होने पायेगी, ऐसा मैं इसलिये कर रहा हूं, कि समय पड़नेपर मैं दिखला सकूंगा कि गोलकुण्डाके प्रधान सेनापति हसनसाहब भी मेरे दलके डाकू हैं। यदि कभी फाँसीके ऊपर चढ़ना पड़े, तो मैं आपको लेकर ही चढ़ूँगा।"

क्या सर्वनाश ! हसनसाहबकी छाती दहल उठी ; वह हक्के बक्के से होकर भास्करकी तरफ देखने लगे। इसी समय पीछेसे किसीने कर्कश स्वरमें कहा—"जल्दी हुक्म तामील करो।"

हसनसाहबने कहा—"मैं सुनता था कि आप इज्जतदारकी इज्जत रखते हैं। क्या ऐसा करनेसे फिर मैं अपने समाजमें मुँह दिखाने लायक रहूंगा ?"

भास्करने हंसकर कहा—इसमें अपमानकी बात कुछ भी नहीं है ! यह चिन्ह तो आपके कपड़ोंके नीचे छिपा रहेगा, और आपको फांसीपर भी नही चढ़ना पड़ेगा। यदि कभी ऐसी अवस्था आही पड़े तो आप कहियेगा कि आप जबर्दस्ती दाग दिये गये थे। इस बातपर कोई सन्देह न करेगा, हाँ, इतना बादशाह भी समझेंगे, कि जिस आदमीका सिर लेनेके लिये वे इतने व्याकुल हो रहे थे, उसने उनके सेनापतिको भी दागकर छोड़ दिया।

हसनसाहब तब भी हिचकिचाने लगे, फिर पीछेसे किसी ने कर्कश स्वरमें धमकाकर आदेश पालनेको कहा। साथ ही शस्त्रोंकी झनझनाहटसे बजरा काँप उठा। अस्त्रोंकी झनझनाहट सुनकर हसनसाहबका हृदय भी कांप उठा ! और साथ ही मार्जिना बेगम भी याद पड़ गयी, उन्होंने अब किसी प्रकारकी आना कानी न करके अपनी बाँह फैला दी। नौकर ने तुरत उनकी दोनों बाँहोंपर त्रिशूलका चिन्ह लगा दिया।

इसके बाद हसनसाहब एक दूसरी नौकापर चढ़ाकर सम्मान के साथ विदा किये गये। और भास्करने भी बजरे से उतरकर अपने अड्डेका रास्ता लिया।

यहाँ यह कह देना आवश्यक है कि भास्करके दलके डाकुओंकी बाँयीं भुजापर एक त्रिशूलका चिन्ह होता था और इस प्रकार अपमानित करके जो लोग छोड़ दिये जाते थे। उनकी दोनों भुजाओंपर एक एक चिन्ह होता था।

# अन्यायका प्रतिकार

## द्वितीय खण्ड

## पहला परिच्छेद

सन्ध्याकी अरुण-राग रंजित स्निग्ध छायामें मकानकी छतपर बैठी हुई तीन सुन्दरी युवतियाँ आपसमें वर्तालाप कर रही थीं, ये लक्ष्मी, तारा और शकुन्तला थीं।

शकुन्तलाने बातों ही बातोंमें पूछा—"एक बार ही पक्कापक्की हो गयी है ?"

तारा—हाँ, इसी महीनेमें।

शकु०—अब क्या करने का विचार है ?

तारा—कृष्णा कहाँ गयी है बहन ?

शकु०—क्या डूबकर आत्म-हत्या करेगी ?

तारा—आत्म-हत्या तो पहले ही कर बैठी हूं !"

शकु०—जानती हो ! आत्म-हत्या करना महापाप है ?

तारा—जानती हूं, बहन ! परन्तु तुम्हीं कहो, भीतरसे एक की होकर बाहरसे दूसरेकी होना क्या महापाप नहीं है ?

लक्ष्मी—मैं इतनी सब बातें नहीं जानती, हृदय तो अपना ही है न ? उसको जिस तरहसे रखूँगी उसी तरह रहेगा। प्रेम क्या चीज है ? सेवा, पूजा, भक्ति ! जबतक मैं स्वतः उस प्रेमको किसी

पर न्यौछावर नहीं करती तबतक वह कूदकर कैसे किसीके पास चला जायगा ? ऐसी बात मैं मान नहीं सकती। ये सब उपन्यासकी बातें हैं—इन्हें उपन्यासके लिये ही रहने दो। पिता तुम्हारे गुरु हैं, पालक हैं, पथप्रदर्शक हैं, वह जिसके हाथ तुमको सौंपदें उसको तुम जितना प्रेम, स्नेह, सेवा, भक्ति देना चाहो दे सकती हो। हमारे पिता जिन्हें पूजा करनेके लिये, उपयुक्त पात्र समझकर हमें दिखला देंगे उन्हींकी हम पूजा-भक्ति करेंगी। हिन्दू कन्या होकर तुम यह छोटी-सी बात क्यों नहीं समझती हो यही तअज्जुबकी बात है ! तुम जिस प्रेमके लिये मर रही हो, उसको यदि मैं कामज प्रेम कहूं तो रंज न मानना।

शकु०—भाई, तुम्हारी बात तो बड़ी बेढब-सी मालूम होती है। तुम्हारे हृदयमें कभी प्रेमका कीड़ा नहीं लगा है, इसीलिये इतनी लम्बी-लम्बी बातें छाँट रही हो ! थोड़े दिन और सब्र करो तुम्हें भी मालूम हो जायगा कि प्रेम समझ-बूझकर नहीं किया जाता है। और सब समय हृदय भी वशमें नहीं रखा जा सकता है। असल बात यह है कि जिसको एक बार प्यार किया जाता है उसको कभी भूला नहीं जा सकता।

लक्ष्मीबाईने दप्पा सिंहनीकी तरह गर्दन टेढ़ी करके कहा—"तुम्हारे कहनेका तो यही मतलब हो सकता है कि किसीका रूप-गुण देखकर, किसी उपकारके प्रत्युपकार स्वरूप अथवा स्वाभाविक कमजोरीके कारण किसीके प्रति किसी रमणीका हृदय आकृष्ट हो जाय, उसके प्रति सहानुभूति और पक्षपातित्व उत्पन्न हो जाय तो वही स्वामी हो जायगा, फिर वह भूला न जा सकेगा। चाहे वह किसी भी जाति या कुलका क्यों न हो ?

यदि एसी ही बात है तो विवाहको धार्मिक बन्धन कैसे माना जा सकता है। अन्यान्य धर्मोंकी बात मैं नहीं कहती हिन्दू धर्म जो जाति भेद और कुल विचारपर ही प्रतिष्ठित है, उसके अनुसार यह विवाह किस प्रकार समर्थित हो सकता है? क्योंकि आँख तो सिर्फ स्वजातीयको ही नहीं देखेगी वह उसी को देखेगी जो उसे सुन्दर जचेगा। हृदय भी सहानुभूति प्रकट करते समय अथवा आकृष्ट होते समय ब्राह्मणका विचार नहीं करेगा। क्या स्वामीके प्रति स्त्रीका प्रेम यही है?

शकु०—तुम्हारा कहना भी ठीक ही है। स्वामीका प्रेम एक बिल्कुल अलग ही चीज है। मैंने तो अपने स्वामीको कुछ ही दिनोंके लिये देखा था परन्तु इस समय भी मेरे हृदयके अणु परमाणुमें वह विराज रहे हैं।

तारा—तुममें यदि वह विराज रहे हैं तो वह गुण है, और मुझमें यदि कोई विराजे तो वह अवगुण है।

लक्ष्मी—तुममें और मुझमें कोई क्यों रहने जायगा? हम लोग तो अभी कुँवारी हैं। और ये है व्याही। ये अपने स्वामीको जहाँ चाहे रख सकती है, परन्तु हमलोग किसीको रखने लगें तो क्या कहलायेंगी— जानती हो?

तारा—जाओ, मैं तुमसे बात नहीं कर सकती। बेहया कहीं की।

शकु०— वह ठीक ही कहती है। मेरी बात सुनो, उदयको भूल जाओ। वह तुम्हारा कौन है? जिसके साथ तुम्हारे माता पिता तुम्हारा विवाह करदें, दिन रात उसकी सेवा पूजा करके कृतार्थ होना। लक्ष्मी और मैं तुम्हें मना करने नहीं जायेंगी।

इस समय सन्ध्याका अन्धेरा धीरे धीरे बढ़ रहा था। ताराने कहा—चलो, नीचे चलें।

शकु०—नीचेसे कौन पुकार रहा है।

तारा—विश्वासी मालूम होती है। नीचे चलो, वह कहींसे कोई खबर लायी होगी।

इस तरह वह तीनों छतसे उतरकर दो तल्ले पर चली आयीं। सबसे पहले हँसती हुई विश्वासीसे भेंट हुई शकुन्तलाने कहा—"विश्वासी! तू अपनी हँसी मुझे उधार दे सकती है। कितना दाम लोगी?"

विश्वासी—तुम क्या कहती हो बहन! मैं आज न हँसूगी तो कब हँसूगी। हमलोग गरीब दुखी हैं, इसलिये क्या हँसनेकी बात सुनकर मुख बन्दकर लूँगी।

तारा—हँसनेकी क्या बात है? विश्वासी!

विश्वासी—तुम्हारा विवाह होनेवाला है।

तारा—यह बात तो कई दिनसे सुन रही है, फिर आज इतनी हंसीका तूफान क्यों।

विश्वासी—वही तो बात है। पहलेका सम्बन्ध टूट गया है इस बार नया सम्बन्ध लगा है।

लक्ष्मी—कहाँ?

विश्वासी—क्या, तुमने सुना नहीं है।

लक्ष्मी—नहीं तू बता न?

विश्वासी—ताज्जुबकी बात है, सारे शहरमें बात फैल गयी, और तुम्हें मालूम नहीं?

लक्ष्मी—नहीं सुना है तो क्या हुआ ? तू यहाँसे दूर हो। व्यर्थ की बकवाद करने आयी है।

विश्वासी—मैंने ऐसी कौनसी बात कही है कि तुम लाल-पीली होने लगीं। अरे ! तुम्हारे ही घर विवाहकी बात-चीत हो रही है और तुम्हें कुछ मालूम ही नहीं हुआ।

लक्ष्मी—अच्छा तो एक बारमें तुम सब कह क्यों नहीं डालती, इतनी बकवाद क्यों करती है ?

विश्वासी—भई ! इतना घमण्ड अच्छा नहीं, तुमलोग बड़े आदमी होते हो, इसलिये क्या तुम्हें गरीब दुखियों को इतना तुच्छ ताच्छिल्य करना चाहिये ?

लक्ष्मी—नहीं, नहीं, विश्वासी ! मैंने घमण्डसे कुछ भी नहीं कहा है। तुम एक बात कहनेके लिये दस बात खरच करती और दूसरेको भी बकवाती है, इसीलिये तुझे डांटा है, रञ्ज न मानना।

विश्वासी—हमलोग गरीब आदमी हैं, रञ्ज क्या मानेंगी ? तिसपर भी अब रोज आपके घर मुझे आवा-जाही करनी होगी ?

लक्ष्मी—क्यों, मेरा अपराध ?

विश्वासी—अहा ! अपराध क्यों होने लगा ? मेरी बबुयी जब तुम्हारे घर जायेंगी तब क्या मुझे वहाँ जाना नहीं पड़ेगा ?

लक्ष्मी—तुम्हारी कौन बबुयी मेरे घर जायगी ?

विश्वासी—यही जायगी और कौन जायगी ?

लक्ष्मी—क्यों ? ये हमारे घर क्यों जायगी ?

विश्वासी—अहा ! तुम्हारे घर न जायगी, तो क्या जिन्दगी भर यही रहेगी ?

लक्ष्मी—देख इसीलिये तुझे बक-झक करनेकी जरूरत होती है। इतनी देरतक तू बक गई, परन्तु असल बात नहीं बतलाती।

विश्वासी—अभी बड़े बाबूके मुखसे सुन आयी हूँ, वह मांजीसे कह रहे थे, हमलोग गरीब आदमी नौकर चाकर ठहरे। हमलोगोंसे क्या यह बात कह सकते थे?

लक्ष्मी—बड़े बाबू मांजीसे क्या कह रहे थे? एक बातमें जवाब दो?

विश्वासी—उपकार होगा—

लक्ष्मी—चुप क्यों हो गयी?

विश्वासी—तुमने तो एक ही बात कहनेको कहा।

लक्ष्मी—दुर हरामजादी! भाग यहाँसे हमलोग तुम्हारी बात नहीं सुनना चाहतीं।

तारा—विश्वासी! जो मैं पूछता हूं, उसका जवाब दे, बाबूजी माँसे क्या कह रहे थे?

विश्वासी—बाबूजी कह रहे थे कि इसी पात्रसे विवाह देनेसे हमलोगोंका उपकार हो सकता है। आजकल राजदरबारमें अपना एक आदमी न रहनेसे मालगुजारी लेन देनके लिये बहुत अड़चन उठानी पड़ती है। यह लड़का कुल-शील और अवस्थामें भी अच्छा है, इसके जैसा ताराके लिये वर दूसरा मिलना दुर्लभ है। मेरा एक सात वर्षका लड़का है, आज ही यदि मैं आंख मूंद लूं, तो मेरी सारी धन-दौलत लुट जायगी, वह एक छदाम भी न पा सकेगा। यदि यह जमाता उसके पीछे रहेगा तो वह सब कुछ सम्हाल लेगा।

लक्ष्मी—तो क्या मेरे भइयाके साथ ताराके विवाहकी बात-चीत हो रही है ?

विश्वासी—हाँ हाँ, क्या इतनी देरतक समझमें नहीं आया था ?

लक्ष्मी—यही तो पहले कह देनेसे होता।

ताराने उदास करुण-दृष्टिसे लक्ष्मीके मुखकी तरफ देखा।

लक्ष्मीने मुस्कुराते हुए कहा—"क्योंजी ! मेरी भौजी होओगी ?

ताराने कोई उत्तर न दिया, लक्ष्मीने फिर कहा—देखो तारा तुम्हारे पिता तुम्हारे गुरु हैं, उन्हींके स्नेह-यत्नसे लालित पालित होकर तुम इतनी बड़ी हुई हो, इसलिये तुम्हारा भला बुरा अपनी सुविधा असुविधा और अपने दूधमुँहे बच्चेके भविष्यत् सुख-दुःखका विचारकर वह जिसके हाथ तुम्हें सौंप दें उसे ग्रहण करनेमें तुम्हें आना कानी नहीं करनी चाहिये। देखो बहन ! त्यागमें, कर्तव्य पालनमें जो सुख और गौरव है, वह सुख भोगकी लालसामें नहीं है। तुम माता-पिताकी बात मानो, वे जो कहें वही करो।

ताराके भी मनमें यह बात बैठ गई, उसने सोचा कि पितृ कुलके हितके लिये आत्माहुति देनेमें दोष ही क्या है ? मैं अपने सुखके लिये उदयको चाहती हूं। पिताके सुखके लिये यह विवाह हो रहा है, इसलिये विवाह करना ही अच्छा है। मरना है तो मैं अकेली मरूँगी माता पिताको क्यों दुःखी बनाऊँ।

"मौनं सम्मति लक्षणं" के अनुसार लक्ष्मी समझ गयी कि ताराको इस विवाहके सम्बन्धमें आपत्ति न रही, वह आनन्दसे पुलकित होकर घर चली गयी। उसके चले जानेपर शकुन्तलाने कहा—तारा, इस विवाहमें तुम्हें कोई आपत्ति तो नहीं है ?

तारानें शकुन्तलाके मुखपर करुण-दृष्टि रखकर कहा—तुम अबतक उनके बिना जीती क्यों कर हो ?

शकुन्तला—उनकी मूर्तिका ध्यान करके।

तारा—मैं भी पिताके हितके लिये उनकी मूर्तिका ध्यान करके जिऊँगी।

शकुन्तला—हाँ, बहन ! यही ठीक है, हमलोग काम करने आयी हैं, काम करके चली जायँगी।

तारा—काम करने तो सभी आता है, परन्तु कोई सुखके साथ काम करता है और कोई दुःख क साथ। मेरा साथी दुःख ही होगा।

इसके बाद शकुन्तला कुछ देरतक उसे समझा-बुझाकर अपने घर चली गई, और तारा बैठी बैठी अपने भविष्यत् जीवन का खाका खींचने लगी।

इसके बाद एक दिन भोर होते ही सहनाई वाला दरवाजेपर चटाई बिछाकर जमकर बैठ गया और अपने वाद्ययन्त्रसे मुहल्लेको गुलजार करने लगा। विवाह-मण्डपके बड़े बड़े बाँसोंसे बहुत दूर ही से ताराके घर विवाहोत्सवकी सूचना होने लगी। सबेरेसे ही हलवाई पूड़ी निकालनेमें लग गये हैं, मुहल्ले के सभी सरदार बैठकेमें बैठकर पान तम्बाकूका सद्व्यवहार कर रहे हैं और मुहल्लेके लड़के भोरही से तारा के घर धन्ना देकर बैठे हुए हैं, कुत्ते भी दरवाजा छोड़ना नहीं चाहते। मकानका अन्तःपुर तो मुहल्लेकी कुलबधुओं और गृहणियोंसे गुलजार हो रहा है। कोई तरकारी काट रही है, कोई मसाला पीस

और कोई हुक्म और तन्देही कर रही है। कोई बातोंमें ही मशगूल है और कोई हँसी ठट्ठासे मकानको गूँजा रही है। शङ्खको तो जो ही पाती है, वही समय बेसमयका विचार न करके पों पाँ कर रही है। इस प्रकार कितने ही कोमल हाथों तथा मुलायम ओष्टाधरोंके बीचमें पड़कर शङ्ख बेचारेकी दुर्दशा हो रही है, वह सोच रहा है—"हाय! मैं क्यों समुद्र छोड़ दो पतले लाल होठोंके लालचसे जनसमाजमें आया। बड़ी भूल हो गयी है, परन्तु अब उपाय नहीं, मर चुका हूं, नहीं तो लौट जाता।"

ताराका आज विवाहोत्सव हो रहा है, परन्तु तारा ही आज सबसे अधिक विषण्ण और उनमना है। विवाहकी वह सभी नियम पद्धतियाँ यन्त्र-चालित मशीनकी तरह करती जा रही हैं। परन्तु वह कुछ भी जानती नहीं कि मैं क्या कर रही हूं? तारा अपने हृदयमें भविष्य जीवनका एक भीषण अशुभमय चित्र खींचकर अपने आप सिहर उठती है। एकबार इसी प्रकारकी विकट चिंता करते करते वह मूर्छित होकर गिर पड़ी, उसकी माँने दौड़ी आकर उसे उठाया। सबने समझा कि दिन भरके उपवासके कारण कमजोरीसे ऐसा हो गया है। परन्तु किसीने भी उसके हृदयका रोग देखने की चेष्टा न की।

यथा समय सूर्य्य भगवान अस्ताचलको गये। सन्ध्या होने के पहले ही मकान आलोकमालासे जगमगा गया; देखते देखते बड़ी धूम धाम और चहल पहलके साथ दरवाजे पर बारात आ पहुँची। बड़े समारोहके साथ अगवानी करके बारात ठहरायी गयी।

शुभमुहूर्तमें सम्प्रदान क्रिया भी हो गयी, तारा जबतक विवाह मण्डपमें थी तबतक क्षण भरके लिये भी उसका हृतकम्प दूर न हुआ। मन्त्रोंको वह ठीक ठीक उच्चारण कर सकी थी या नहीं, यह पुरोहित महाशय ही जाने ; परन्तु उनका कोई भी आदेश ठीक ठीक पालन नहीं हो रहा था, यह सभी देख रहे थे। कुछ भी हो किसी प्रकार सम्प्रदान क्रिया समाप्त हुई।

तारा भीतरसे एककी होकर बाहरसे दूसरे की हुई।

# दूसरा परिच्छेद

गोलकुण्डा स्वाधीन राज होते हुए भी सहाबुद्दिन महम्मद शाहजहाँने गोलकुण्डाधिपति कुतुबशाहको कर देनेके लिये वाध्य किया था।

इस समय शाहजहाँके तृतीय पुत्र औरङ्गजेब दक्षिणात्यमें शासक और सेनापति नियुक्त होकर आये थे। हिरण्यमयी गोलकुण्डा नगरीपर शाहजादाकी सबसे अधिक लोलुप दृष्टि लगी थी। उनकी प्रबल इच्छा थी कि गोलकुण्डा राज्य मुगल साम्राज्यमें मिला लिया जाय; परन्तु तीक्ष्ण धीः गोलकुण्डाधिपतिकी वीरता और सैन्य-शक्तिके सामने अग्रसर होनेका उन्हें अभी साहस नहीं होता था। तथापि निर्दिष्ट कर वसूल करते समय मनमाना अत्याचार और उत्पीड़ित करके अपने मनकी साध पूरी कर लेते थे।

फलतः बादशाहका निर्दिष्ट कर प्रत्येक वर्ष क्रमशः बढ़ता ही जाने लगा। इस बार भी अधिक कर देनेका फरमान आया है, इसलिये कुतुबशाह इस बार झुंझलाकर अपने अमीर उमरावोंके साथ परामर्श करके युद्ध छेड़ा चाहते हैं।

रात एक पहरसे अधिक हो चुकी है, सजे सजाये सलाहगार के खम्भोंपर चिरागकी रोशनियाँ हो रही हैं। सारा बैठका अतर गुलाबकी खुशबूसे तर हो रहा है। रोशनियोंकी झलकसे हीरा मणि मुक्ताओंकी पंक्तियाँ चमकती हुई अपनी किरणोंसे

घरको और भी रोशन कर रही हैं। सलाहगारके बीचोबीच एक हेसमय सिंहासनपर गोलकुण्डाधिपति कुतुबशाह गंभीर भावसे बैठे हुए हैं। चारों ओर यथा योग्य असानोंपर राज्यके शुभाकांक्षी वजीर और अमीर उमराव बैठे हुए हैं।

कुतुबशाहने सबसे पहले जलदगंभीर स्वरसे कहा—"आप लोग जितने यहाँ बैठे हैं सभी मेरे दाहिने हाथके समान हैं। इस समय गोलकुण्डा राज्यपर चारों तरफके तूफान उठे आ रहे हैं। औरङ्गजेब भी बार बार मनमानी घरजानी कर रहे हैं। इस प्रकार उनकी इच्छाका गुलाम बनकर इस नवाबी तख्तपर बैठनेका कोई मूल्य ही नहीं है। आपलोग जैसी सलाह दें, वैसा करूँ। प्रधान वजीरने कहा—"दुर्दान्त औरङ्गजेबको कुछ अधिक कर चढ़ाकर देना ही उचित है। क्योंकि इस समय गोलकुण्डा की प्रजा विद्रोही हो रही है। बाहर यदि औरङ्गजेब आक्रमण करे तो राज्यकी किसी प्रकार भी रक्षा नहीं हो सकती।

अमीर मीरजुमला इस समय कुतुबशाहके सबसे अधिक विश्वासी और सहायक हो रहे थे। मीरजुमलाका जन्मस्थान पारस देश था। किसी हीरेके व्यापारीके साथ गोलकुण्डामें आये थे और कुछ ही दिनों में उस सौदागरका बहुत धनरत्न चुरा-चुरा कर राजदरबारमें आकर नौकरी ग्रहण की थी। यहाँ भी थोड़े ही दिनोंमें अपनी कार्य्य कुशलता और सबसे अधिक बुद्धिमानी और धूर्त्तताके कारण नवाब बहादुरके विश्वास-पात्र हो गये थे। परन्तु मीरजुमला दूसरोंकी आँखोंमें धूल झोंककर किस प्रकार अपना स्वार्थ साधन, धन-रत्नसे अपना भण्डार भरनेकी फिक्रमें लगे रहते थे, यह किसीको मालूम भी नहीं

होने पाता था, और यदि किसीको मालूम भी हो जाता था, तो वह मीरजुमलाको नवाबका प्रिय पात्र और प्रधान सलाहकार समझ कर कुछ कहनेका साहस नहीं करता था। सारांश यह कि दरबारमें धूर्त मीरजुमलाका ही प्रभाव सबके ऊपर छा रहा था। उसी मीरजुमलाने उठकर कहा—मेरी तो राय है, कि अधिक कर देकर औरङ्गजेबका लोभ अधिकाधिक बढ़ाना अच्छा नहीं।

मीरजुमलाके मुखकी तरफ देखकर शाह कुतुबने कहा—"मेरी भी यही इच्छा है, वह जितना ही माँगेगा उतना ही यदि दरबार पाता जायगा तो समझेगा कि गोलकुण्डाका नवाब कायर और डरपोक है। इसलिये राज्य दखल करनेकी उसकी लालसा और भी अधिक बढ़ जायगी।"

प्रधान वजीरने कहा—"जहाँपनाह! मैं भी यह समझता हूं परन्तु समयके अनुसार काम करना ही अच्छा होता है। प्रजामें इस समय जिस प्रकार आपके राज्यकी नींव खोदनेकी चेष्टा की जा रही है, उसको यदि शीघ्र दमन न किया जाय, तो वह बड़ा अनर्थ खड़ा कर सकता है। मुझे जितना भय औरङ्गजेब से नहीं है, उससे कहीं अधिक भय इस अन्तर्विद्रोहसे हो रहा है। आप पहले अपनी सारी शक्ति लगाकर भास्करका दमन कीजिये, फिर तय्यार होकर मुगलोंसे युद्ध ठानियेगा। मुगल तो कोई छोटे मोटे लुटेरे नहीं हैं, कि जो एक बार हार कर प्राणोंके भयसे भाग जायँगे। इस समय उनकी शक्ति और प्रभुता कितनी बढ़ी हुई है, यह तो आप अच्छी तरहसे जानते हीहैं, मुगलोंसे निबटना वर्षोंका काम है। एकबार युद्ध

छिड़ जानेपर या तो दिल्लीका सिंहासन डावाँडोल होगा या गोलकुण्डा ही उसके पेटमें हजम हो जायगा। अवस्था बड़ी नाजुक है, विचारसे काम लेनेकी आवश्यकता है।"

कुतुबशाहने गम्भीर स्वरसे कहा—"भास्करको जो पकड़ सके, ऐसा वीर तो मैं अपने पास किसीको भी नहीं देखता हूं। सेनापति हसनसाहब बहुत गर्व करके उसे पकड़नेके लिये गये थे, परन्तु उन्हें भी लाञ्छित और अपमानित होकर लौट-आना पड़ा।"

हसनसाहब भी वहाँ उपस्थित थे, उन्होंने हाथ जोड़कर कहा—"जहाँपनाह! इसमें गुलाम किसी तरह गुनाहगार नहीं है। मैंने सरकारी हुक्म बजानेमें किसी प्रकारकी गफलत नहीं की थी, परन्तु डाकूकी धूर्तता और कौशलको समझ न सकनेके कारण उस बार मुझे शिकस्त खानी पड़ी थी। परन्तु एकबार और मौका दिया जाय, तो मैं अपनी जानपर खेलकर उसे पकड़ूंगा। आपसे कहनेमें लज्जा क्या; मैंने डाकुओंके हाथसे जिस प्रकार अपमान और लाञ्छनायें सही है, उससे मुझे एक दण्ड भी शहरमें रहनेकी इच्छा नहीं होती है। मैं उनसे बदला लेनेके लिये ही उतावला हो रहा हूँ। आप मुझे फिर हुक्म दीजिये। इसबार मैं उसको पकड़नेमें अपनी सारी शक्ति लगा दूंगा।"

मीरजुमलाने हसनसाहबकी तरफ देख, तानेके तौर पर कहा—"आपका क्रोध स्त्रियोंके क्रोधसे किसी प्रकार बढ़कर नहीं है।"

हसनसाहबका सारा बदन क्रोधसे तमतमा उठा, उन्होंने

सिंहकी तरह गरजकर कहा—"यदि और कोई यह बात कहे होता, तो यह तलवार उसका सिर धड़से अलग कर दिये होती ?"

मीरजुमलाने हंसकर कहा—"यह क्रोध मुझपरसे कुछ कम करके भास्कर पर डालते तो अच्छा होता ।"

कुतुबशाहने कहा—इस नाजुक अवस्थामें आपसका विरोध अच्छा नहीं, सभी जने मिलकर राज्य-रक्षाका उपाय कीजिये । देखते नहीं शत्रु चारों तरफ लगे हुए हैं ।

अमीर मीरजुमला उठ खड़े हुए और गर्वसे छाती ऊँची करके बोले—मुझे दस हजार सेना दीजिये, मैं दश दिनके अन्दर सारे दलके साथ भास्करको गिरफ्तार कर लाता हूँ ।

कुतुब—दस हजार सेना भी आप ले जा सकते हैं ।

मीरजुमला—मैं कल सवेरे ही भास्करको पकड़नेके लिये रवाना होऊँगा ।

कुतुबशाह—औरङ्गजेबके बारेमें क्या किया जायगा ?

मीरजुमला—अधिक कर नहीं दिया जायगा, जो परसाल दिया गया था वही दिया जायगा । यदि वह लेले तो अच्छा हो, नहीं तो युद्ध करना होगा ।

कुतुब—तुम भास्करको पकड़नेके लिये जा रहे हो, इसी बीचमें यदि औरङ्गजेबसे युद्ध छिड़ जाय तो क्या किया जायगा ? परसों ही तो कर देनेका निर्दिष्ट दिन है ।

हसनसाहबने अभिमान पूर्ण स्वरमें कहा—"क्या आप एक मात्र मीरजुमलाके बाहुबलसे ही गोलकुण्डाकी रक्षा करनेकी आशा करते हैं ? हमलोगोंकी भुजाओंमें क्या आपको विश्वास नहीं रहा ?"

कुतुब—हसनसाहब! आप वीर साहसी और कौशली योद्धा हैं, यह बात मुझे अच्छी तरह मालूम है। परन्तु आपकी शक्तिकी परीक्षा तो हो चुकी है न?

हसनसाहब उठकर खड़े हो गये और कोर्निश करके बोले —"जहाँपनाह! अभी नहीं, एक दिन आप इन गुलामोंका मूल्य समझ सकेंगे। आप समझ सकेंगे कि स्वदेशीय, स्वजातीय और स्वधर्मी राज्य और देशकी रक्षाके लिये जिस प्रकार यत्नवान हो सकता है, एक विदेशी और विधर्मी उसके लिये उतनी सिरपच्ची नहीं कर सकता। जो अपने देशको लौट जाते ही सारा यश अपयश और मान अपमानके कलंकसे बरी हो जाता है। उसमें, और जिसे मान अपमानका बोझा लेकर अपने देशमें ही रहना है, उसमें, इन दोनोंमें आकाश पातालका अन्तर है! आप बड़े राजनीतिज्ञ हैं तो भी इसे अस्वीकार नहीं कर सकते।"

मीरजुमलाकी आखें लाल हो उठीं, उसने तीव्र स्वरमें कहा —"हसनसाहब! बहुत सोच विचारकर मैं आपको क्षमा कर रहा हूं। मैं नवाबका नमक खाता हूं, इसलिये राज्यके अनिष्ट भयसे मैं आपका विद्रोही होना नहीं चाहता। नहीं तो इतनी देरमें यहाँकी जमीन आपके खूनसे लाल हो गयी होती।

प्रधान वजीरने कहा—"सलाहगारमें इस प्रकारका कलह यही नया है। आप दोनों ही वीर हैं। मैं आशा करता हूँ कि अपनी वीरता शत्रुओंपर दिखलाकर अपनेमें भ्रातृभावको दृढ़ करेंगे।"

हसन—मैं औरंगजेबसे युद्ध करनेके लिये तैयार हूं। मैं

आशा करता हूँ कि मेरे बाहुबल और बलसे औरंगजेब कभी गोलकुण्डामें प्रवेश न करने पायेगा।

कुतुबुशाहने कहा—"आप दोनों बीर हैं। जिन कार्य्योंका भार आपलोगोंने लिया है आशा करता हूँ कि सफलता पूर्वक आपलोग उन्हें पूरा करेंगे।

प्रधान वज़ीरने कहा—"यदि भास्करतीर्थ पकड़ा जाय तो अन्तर्विद्रोह भी बहुत कुछ दूर हो सकता है।"

अमीर मीरजुमलाने कोर्निस करके कहा—"अच्छा तो मैं विदा हो रहा हूं। कल सवेरे ही भास्करके विरुद्ध यात्रा करूँगा।"

मीरजुमलाके चले जानेपर प्रधान अमात्यने हसनसाहबसे कहा—"आपने मीरजुमलाके सम्बन्धमें जो बातें कही हैं, उनमें प्रत्येक अक्षर ही सत्य हैं।

प्रधान अमात्य आदि सभी उच्च कर्मचारियोंको यह बात मालूम हो गयी थी कि मीरजुमलाके कारण ही गोलकुण्डाकी प्रजा विद्रोही हो रही है। हीरकके व्यवसायियोंसे छल बल कौशलसे वह रुपये ऐंठ रहे हैं। जमीन्दारों और महाजनोंपर नाना प्रकारकी कड़ाई की जा रही है। प्रजाकी लगान प्रतिवर्ष बढ़ाई जा रही है। ये सभी कार्य्य मीरजुमलाके ही कारण हो रहे हैं। इन्ही सब कारणोंसे प्रजामें विद्रोहकी आग सुलगती जा रही है। इसके अलावे भास्करकी सहायता और शक्तिके भरोसे वे और भी निर्भय होते जा रहे हैं। राजाका हुक्म तो वे कुछ चीजही नहीं समझते।

कुतुबशाहने गंभीर भावसे कहा—"मैं मीरजुमलापर सन्देह

नहीं कर सकता। उसकी कार्य्य कुशलता और प्रबन्ध अत्यन्त प्रशंसनीय है। भास्करको पकड़नेकी वह प्रतिज्ञा कर गया है। उसे अवश्य ही पकड़ लायगा।

हसनसाहबने हाथ जोड़कर कहा—"जहाँपनाह! भास्करतीर्थ हीरेका सौदागर नहीं है। एक दिन आपकी आँख खुलेगी। यदि कभी गोलकुण्डा के पूरे दिन आये तो इसी मीरजुमलाके कारण ही आवेंगे।"

इसके बाद नवाबसाहबने मन्त्रणा-सभा भंग होने की सूचना दी। सभी अमात्यगण विषण्य भावसे अपने अपने घरको चले गये।

# तीसरा परिच्छेद

भविष्यत्पर क्या सभीका लक्ष्य होता है ? जिसका लक्ष्य होता है, वह महापुरुष है, उसीकी दिव्य दृष्टि खुली हुई है। यदि साधारण मनुष्य भविष्यत्को देख पाता तो वह कोई भूल ही न करता और इसलिये उसे कोई कष्ट भी न भोगना पड़ता। हसन-साहब यदि जानते कि आपाद मधुर इन्द्रियकी लालसासे ही उनका सर्वनाश होनेवाला है। यदि वह जानते कि सबसे अधिक सुन्दरी सबसे अधिक नेत्रानन्द दायिनी नवाबजादी मार्जिना बेगममें, "विष कुम्भं पयो मुखकी तरह कुटिलता और छल भरा हुआ है तब क्या वह इस दलदलमें कभी पैर रखते ? भविष्यकी बात वह नहीं जानते थे। इसलिये वह दलदलमें फँस गये थे।

हसनसाहब जब मन्त्रणा-सभासे निकले उस समय, मीर-जुमलाकी प्रत्येक बातें, नवाब द्वारा मीरजुमलाकी प्रशंसा और पक्षपात उनकी प्रत्येक धमनीमें उष्ण रक्त प्रवाहित कर रहा था। परन्तु राजप्रासादके सामने आनेपर सहसा वह सारी उष्णता जाती रही और उनके हृदय-पटलपर एक स्निग्ध सुन्दर मुख-च्छवि आकर खड़ी हो गयी। जहाँ काम वृत्ति प्रबल होती है, वहाँ और सारी वृत्तियाँ ही निस्तेज हो जाती हैं।

हसनसाहब घूम फिरकर जनाने महलके दरवाजेपर आ पहुँचे, खोजा उनसे परिचित हो गया था। अर्थ लोभसे वह मार्जिना बेगमका वशीभूत नौकर था, उसने हसनसाहबको

एक खास कमरेमें बैठाकर मार्जिना बेगमको सांकेतिक खबर भेज दी।

थोड़ी देरके बाद एक दासी आकर हसनसाहबको मार्जिना बेगमके पास ले गयी।

हसनसाहबने मार्जिना बेगमके सुसज्जित प्रकोष्ठमें प्रवेश करके बेगम साहबकी कोर्निश की और दीन भावसे उनके मुखकी तरफ देखा। इस समय मार्जिना बेगम अपनी सारी सुन्दरता और मादकता लिये हुई मदके प्यालेके साथ फूलोंकी कोमल शय्यापर अर्द्ध शायित अवस्थामें लेटी हुई थी और उसके अगल-बगलमें बैठकर कितनी ही सर्वालङ्कार भूषिता सुन्दरी परिचारिकायें नृत्यगीतसे बादशाहजादीको प्रसन्न करनेके लिये व्यस्त थीं। प्याले प्याले तरल पदार्थका सदुपयोग होनेके कारण सभीकी आँख लाल और मदमाती हो रही थीं? इसी समय सेनापतिने बेगमसाहबको कोर्निश करके कहा—"शाहजादी! कुशल तो है न?"

बादशाहजादी रक्ताधरोंपर हँसीकी रेखा खींचकर बोली—"हाँ कुशल है। सेनापति साहब! यह सुनकर खुशी हुई कि मेरे कुशल मंगलपर आपका ध्यान है। पहले तो आकाशका चाँद दिया था, परन्तु अब दर्शन भी मिलना कठिन हो गया है।"

हसनसाहब मृदु मुस्कानके साथ प्रणयिनीके पास जाकर बैठे, शाहजादीके हुक्मसे बाँदी शराबसे भरा प्याला ले आयी, जिसे हसनसाहबने बिना उज्र खाली कर दिया। इसके बाद सहचरियाँ कोकिलकण्ठसे गाने लगीं।

बहुत देरके बाद जब सङ्गीतका झङ्कार बन्द हुआ, तब शाहजादीके इशारेसे बाँदियाँ बाहर चली गयीं। और मार्जिना बेगमने एक विलोलकटाक्षसे हसनसाहबको व्याकुल करके पूछा—"उसके बारेमें क्या किया ?"

हसनसाहबने संकुचित होकर कहा—"अभी खदेड़ नहीं सका हूँ, दो एक दिनमें उसे दूर कर दूँगा।"

मार्जिना बेगमने अपने होठोंको जरा टेढ़ा करके कहा—"तुम मुझे प्यार नहीं करते हो। देखो तो मैंने तुम्हारे लिये क्या नहीं किया है। मेरा स्वामी आज मृत्यु शय्यापर पड़ा है।"

हसनसाहबने उत्सुकता पूर्वक कहा—"क्यों ? उन्हें क्या हुआ है ?"

श्येन पक्षीकी तरह गर्दन मचकाकर मार्जिनाने कहा—"क्या हुआ है, जानते नहीं ? तुम मेरे यहाँसे उठकर जाते ही मुझे भूल जाते हो। क्या उस दिन की बात याद नहीं है, तुमने अपनी स्त्रीको खदेड़ देनेको कहा था और मैंने अपने स्वामीको तिल तिल विष खिलाकर मार डालनेकी प्रतिज्ञा की थी। इसके बाद हम दोनोंने परम सुखके साथ जीवन बितानेकी प्रतिज्ञा की थी। उसी बातके अनुसार आज महीनोंसे मैं थोड़ा थोड़ा करके उनको विष खिला रही हूँ। आज ही अन्तिम रात है। सवेरे तुम खबर पाओगे कि नवाबके बड़े जमाता मार्जिना बेगमके शौहरकी मृत्यु हो गयी है। इसके पहले यदि मैं न सुन पाऊँ कि तुमने बानू-बेगमको घरसे बाहर निकाल दिया है, तो तुम्हारा सर्वनाश करके ही छोड़ूँगी।"

मार्जिनाकी बातें सुनकर हसनसाहब सुखी न हो सके। एक अतर्कित आशंकासे उनका मन चंचल और विक्षुब्ध होने लगा। मार्जिनाबेगमने फिर कहा—"यदि तुम आज ही यहाँसे जाकर अपनी स्त्रीको भगा न दो तो मैं तुम्हारा सर्वनाश करूँगी, सावधान!"

हसनसाहबने मुस्कुराकर कहा—"तुम मेरा क्या सर्वनाश कर सकोगी?"

दप्पा सिंहनीकी तरह गर्जकर मार्जिना बोली—"मैं अपने पितासे सब बात कह दूँगी। और यह भी कह दूँगी कि तुमने मुझे भुलाकर मेरा सर्वनाश किया है। मेरे स्वामीको विष खिलाया है।

हसन—इससे तो केवल मेरा ही नाश नहीं होगा। तुम्हारा भी तो हो सकता है?

शाहजादी—मेरा क्या होगा? शाहजादीका कुछ भी नहीं होता। आहार निद्राकी जैसे उसे आवश्यकता पड़ती है, वैसे ही प्रेम करनेकी भी आवश्यकता पड़ती है। परन्तु जो शाहजादीके मनकी इच्छानुसार काम नहीं करता है, वही सबसे अधिक अपराध करता है। उसका दण्ड फाँसी है, सावधान!

हसन—परन्तु मुझसे तुम्हारा कोई अनिष्ट न हो सकेगा।

मार्जिना—फिर वही बात! मेरा अनिष्ट कौन कर सकता है. तुम आज ही उसको भगाओ, नहीं तो कल ही तुम्हारा सिर धड़से अलग होगा, और मैं भी तुम्हारे शोकमें आत्महत्या कर डालूँगी। मैं तुम्हें बहुत प्यार करती हूँ।

"मैं तुम्हें बहुत प्यार करती हूँ।"

ये कई शब्द मार्जिनाके पतले विम्बाधरोंसे इतने कोमल और मधुर स्वरमें निकले और मार्जिनाके विचित्र कटाक्षपातने क्या एक सेनापतिको इतना व्याकुल कर दिया, कि उन्होंने अधिक आनाकानी न करके उसी रातको अपनी सहधर्मिणीको घरसे निकाल देनेके लिये स्वीकार कर लिया ?

# चौथा परिच्छेद

अभी उषाकी लोहित आभा पूर्वाकाशमें प्रस्फुटित नहीं हुई थी, अभी निशापति अस्त नहीं हुए थे और अभी तारिकामण्डली की सभा विसर्जित नहीं हुई थी, उसी समय हसनसाहबने अपने घरमें जाकर देखा कि बानू बेगम अब भी शय्यापर पड़ी पड़ी आकाश-पाताल एक कर रही है। मालूम हुआ कि सारी रात उसने उनकी इन्तजारमें उनीद रह कर ही बितायी है। उनके आते ही बानू बेगमने बड़े अभिमानके स्वरमें कहा—"तुम अब-तक कहाँ थे ?"

हसन—तुम क्या सारी रात सोयी नहीं ?

बानू बेगमने आँखोंमें आँसू भरकर कहा—"तुम रहो सारी रात बाहर, मैं अकेली सो कैसे सकती हूं ?"

हसन—मैं तुमसे कई दिनोंसे कह रहा हूं कि तुम अपना रास्ता देखो। मैं तुम्हें सुखी न कर सकूंगा, तुमसे मेरा कोई ताल्लुक नहीं है।

स्वामीके मुखसे ऐसी रूखी बातें सुननेके लिये बानू कभी तय्यार नहीं थी। वह स्तम्भित होकर अपने स्वामीके मुखकी तरफ ताकती ही रह गई, हसनसाहबने फिर कहा—"मैं तुम्हें नहीं चाहता, तुम दूसरेसे सगाई करके सुखसे दिन बिता सकती हो।"

इस बार बानू बेगम सचमुच रो पड़ी और रोती हुई ही

बोली—"प्रभो! मैंने क्या अपराध किया है कि आप मुझे इस प्रकार त्याग रहे हैं। मैं तो तुम्हारे सिवा और कुछ नहीं जानती। सगाईके लिये तुम कितने ही दिनोंसे जिद पकड़े हुए हो, परन्तु इतने दिनके सहवाससे क्या तुम्हें मेरा हृदय मालूम नहीं हुआ है? क्या सचमुच तुम्हें विश्वास है कि किसी दूसरेसे विवाह करके फिर सुखी हो सकूंगी? प्रभो! मैंने तो कितनी ही बार कहा है कि हृदय दो बार नहीं दिया जाता, प्रेम दोबार नहीं किया जाता। फिर इन कठोर वाक्योंसे बार बार मुझे क्यों कष्ट देते हो? मैं तुमसे कुछ भी नहीं चाहती, तुम्हारी जो खुशी हो करो। मैं सिर्फ रहनेके लिये इस घरमें वित्ता भर जगह चाहती हूँ, मैं तुम्हें प्रतिदिन आँखोंके सामने देख कर ही सन्तुष्ट रहूँगी।

हसन—तुम इस घरमें नहीं रहने पाओगी, तुम्हारे यहाँ रहनेसे मुझे विपदमें पड़ना होगा। बल्कि मैं तुम्हें कुछ रुपये देता हूँ तुम चली जाओ।

बानू बेगम चीख मारकर रो उठी, आसुओंकी धारासे कपड़े भीजने लगे, उसने रोते हुए कहा—"प्रभो! तुम इस प्रकार मुझे भुला क्यों रहे हो? स्त्रीको घरमें रखनेसे क्या विपदमें पड़ना होता है? यह बात तो मैं नयी सुन रही हूँ। परन्तु ऐसा भी हो सकता है, जब मेरे भाग्यने पल्टा खाया है, तो सब कुछ हो सकता है। अच्छा, तुम्हारी जो खुशी हो करो, जब तुम मेरा त्याग ही कर रहे हो तो तुम्हारा रुपया मैं कैसे ले सकती हूं?

हसन—लो चाहे न लो, परन्तु अभी घरसे बाहर हो जाओ।

बानू बीबीने आँखोंके आँसू पोंछकर दृढ़ताके साथ कहा—"मैं नहीं जाऊँगी, तुम यदि चाहो तो मुझे मारकर बाहर फेंक दो।

हसनसाहब स्त्रीकी इस दृढ़तापर क्षण भरके लिये स्तम्भित हो गये, परन्तु दूसरे ही क्षण म्यानसे तलवार निकालकर बोले —"शैतानकी खाला ! क्या तू नहीं जायेगी ? रह, मैं अभी इस तलवारसे तुझे काटकर टुकड़े टुकड़े कर डालता हूं।

बानू बेगम आँचलसे मुख ढककर रोती हुई बोली—"तुम चाहे जिस तरहसे काटो, मैं तुम्हें छोड़कर नहीं जाऊँगी।

झनझनाहटके साथ तलवार म्यानसे खींचकर हसनसाहबने कहा—"तुम मेरी बात नहीं सुनती हो, मैं तुम्हारा मुख नहीं देखना चाहता हूं। मैं अपनी तलवारसे काटकर अपना हाथ कलङ्कित नहीं करूँगा, नौकरको बुलाता हूँ वही तुम्हें काट डालेगा।

इतनी देरके बाद बानू बेगम उठ खड़ी हुई, थोड़ी देरतक वीर गम्भीर भावसे वहीं खड़ी रही। उसका तेज दीप्त, उस समयका प्रशान्त मुख-मण्डल देखकर हसनसाहब भी विचलित हो गये। परन्तु दूसरे क्षण उन्होंने तीव्र स्वरमें कहा—"अब भी नहीं जाती, क्या नौकरसे अपमानित होनेकी निहायत इच्छा है ?"

बानू बेगम—अपमानित होनेमें अब बाकी ही क्या रह गया है ? स्वामी नौकरसे जिस स्त्रीको कटवा डालना चाहता है, उसके लिये अधिक अपमान और क्या हो सकता है ? मैं जा रही हूँ, परन्तु जिन्दगी भरके लिये नहीं, फिर आऊँगी और तुम्हारे अनुतप्त दुःखित और अपमानित हृदयको अपनी स्निग्ध कोमल प्रेम-धारासे शान्त करूँगी। जिसके कुहकजालमें पड़कर, जिसकी मन्त्रणा सुनकर तुम मुझे इस प्रकार अपमानित करके

घरसे बाहर निकाल रहे हो, उसे मैं अच्छी तरह जानती हूं, समझ रखो, यह दो दिनकी चाँदनी नहीं रहेगी, फिर तुम मुझे याद करोगे और रोओगे, मैं जाती हूँ।

इतना कहकर बानू बेगमने अपने सभी वस्त्राभूषण खोलकर बिछौनेपर रख दिये और एक साधारण धोती पहन कर घरसे बाहर निकल पड़ी। हसनसाहब स्तम्भ भावसे दरवाजेपर खड़े हुए अपनी स्त्रीकी तरफ ताकते ही रह गये, जब तक वह आँखों से ओझल न हुई तबतक उनकी साँस ही न लौटी थी। अब उन्होंने एक बेदना भरी आह भरकर कहा—"हाय बानू!"

भोर हो गया था। पृथ्वी और आकाश सब साफ हो गया था। इसी समय एक नौकरने आकर कहा—"राजदरबारका आदमी खबर लेकर दरवाजेपर खड़ा है, भेंट करना चाहता है। हसनसाहबने उसे भीतर लानेका हुक्म दिया।

उस आदमीने आकर कहा कि—आज रातको नवाबसाहब के बड़े जामाताकी मृत्यु हो गई है और औरङ्गजेबने गोलकुण्डा के सीमा पर आकर तम्बू डाला है, नवाबसाहबने शीघ्र आपको दरबारमें हाजिर होनेको कहा है।

हसनसाहब फिर एक लम्बी साँस लेकर कपड़े पहन राज-दरबारकी तरफ चले।

# पाँचवाँ परिच्छेद

पहर भर दिन चढ़ते न चढ़ते हसनसाहबने अपनी तीस हजार सेना लेकर औरङ्गजेबका सामना करनेके लिये रवाना हो गये।

हसनसाहब युद्धके लिये रवाना तो हुए, परन्तु हृदयमें विषादकी काली घटा लेकर। इस समय उनके हृदयमें पाप और पुण्यका जो भीषण युद्ध चल रहा था, उसके सामने बाहरका युद्ध अत्यन्त तुच्छ था।

अस्तु, जब उन्होंने युद्ध करनेका भार लिया है, तो युद्ध करनाही पड़ेगा, चाहे वह मनसे करें, चाहे बेमन से। हसन-साहब एक सुशिक्षित वेगवान घोड़ेपर चढ़कर सेनाको परिचालित करते हुए आगे बढ़े। उनके पीछे पैदल घुड़सवार और हाथियों की सेना कतार बाँध बाँधकर आगे पीछे चली। घोड़ोंकी हिन-हिनाहट, सैनिकोंकी हुँकार ध्वनि और हाथियोंकी चिंघाड़से गोलकुण्डाका सीमाप्रान्त गरगरा उठा। अश्व पदातियों की रौंदसे धूल उड़ उड़कर आकाशमें मेघकी तरह छा गयी। ऐसा मालूम होने लगा, मानों शीघ्र ही आँधी आने वाली है।

जिधरसे औरङ्गजेबके नगरमें प्रवेश करनेकी सम्भावना थी उसीको रोककर हसनसाहबने अपनी छावनी डाल दी। हसन-साहबने जहाँ छावनी डाली थी, उसकी दोनों बगलमें दो बड़े बड़े पहाड़ थे। जिन्हें गोलकुण्डाकी रक्षाके लिये ही शायद

प्रकृतिदेवीने दीवालकी तरह खड़ा कर दिया था। ये पहाड़ गोलकुण्डासे चार कोसकी दूरीपर थे, इन दोनों पहाड़ोंके बीचमें सिर्फ एक ही बड़ी घाटी थी जिससे बाहरसे शत्रु आक्रमण कर सकता था, हसनसाहबने अपनी तीस हजार दुर्ज्जय सेनाको अभेद्य प्राचीरकी तरह सजाकर उस घाटीको बन्द कर दिया।

धीरे धीरे सारा दिन बीत गया, परन्तु औरङ्गजेबका सुभागमन नहीं हुआ। हसनसाहबकी सेना घाटीपर सतर्क दृष्टि रख कर आराम करने लगी।

शाम हुई, आकाशमें चाँद उठा, धीरे धीरे पहरभर रात भी बीत गयी।

इसी समय आकाशकी शुभ्र चंद्रिकामें पर्वतके ऊपर एक और भी अभिनव घटना हो रही थी, जो सेनापति हसनसाहब की दृष्टिसे बिल्कुल अन्तरालमें थी। जिस स्थानपर हसनसाहबका तम्बू था, वहाँसे एक कोसकी दूरीपर दो आदमी पर्वतके ऊपरसे होकर चले जा रहे थे। उनमें एक भास्करतीर्थ थे और दूसरे उदयसिंह। दोनों ही खूब सतर्कतासे दोनों तरफ देखते और बात चीत करते हुए जा रहे थे। कितने ही टेढ़े मेढ़े रास्तेसे दबाते हुए चलकर भास्करतीर्थ एका एक खड़े हो गये, और अँगुलीके इशारेसे उदयसिंहको एक तरफको दिखलाया जिधर हजारों रोशनियोंकी जगमगाहटसे आकाश लाल हो रहा था। और असंख्यों मनुष्य बड़ी व्यस्ततासे इधर उधर घूम फिर रहे थे।

उदयसिंहने गंभीर भावसे कहा—वहाँ आप कितनी सेनाका अनुमान करते हैं?

भास्कर—दस हजारसे कम तो नहीं है।

उदयसिंह—दो तरफसे जब इतनी सेनाओंने हमे घेर लिया है, तब हमारे बचनेकी आशा नहीं दीखती ?

भास्कर—इधर हसनसाहब भी तीस हजार सेना लेकर पास ही डेरा डालकर बैठे हैं, वह भी मीरजुमलाकी सहायता कर सकते हैं।

उदयसिंह—तब तो शायद आज ही हमारा अन्तिम दिन है।

भास्कर—तुम डरते हो ?

उदयसिंह—इतने दिन आपके साथ रहकर अब मुझे मारनेका भय नहीं है। परन्तु चिन्ता हो रही है।

भास्कर—चिन्ता किस बातकी ?

उदयसिंह—चिन्ता गोलकुण्डाकी दीन प्रजाकी। यदि आप पकड़े जायँ तो उनकी क्या दशा होगी। एक तरफ राजकर्मचारी दिनपर दिन उनका खूनचूस रहे हैं। दूसरी तरफ औरंगजेबकी लोलुप दृष्टि उनके जान और मालपर लगी हुई है। अब मैं जहाँतक अनुमान कर सकता हूँ, उससे यही मालूम हो रहा है, कि आपके पकड़े जानेपर औरंगजेबको रोकने वाला कोई नहीं रह जायगा।

भास्कर—इसी लिये मैं अपनेको पकड़वा रहा हूं। सम्भवतः आज हां औरंगजेब हसनकी सेनापर आक्रमण करेगा।

उदय—आपके आत्म-समर्पणसे क्या उपकार होगा ?

भास्कर—हसनसाहब सिर्फ तीस हजार सेना लेकर ही औरंगजेबकी सेनाके सामने बैठे हैं। औरंगजेबकी सेना साठ हजारके करीब है। इसके सिवा उनके पास उनकी सेना अधिक

सुशिक्षित है, और उनके पास गोला बारूद और कमान आदि आग्नेयास्त्र भी अधिक हैं, परन्तु मीरजुमलाकी सेना आकर यदि हसनसाहबकी सहायता करे तो वे लोग किसी प्रकार औरंगजेब का आक्रमण रोक भी सकते हैं।

उदय—आपकी बात समझमें नहीं आतीं।

भास्कर—मेरे कहनेका मतलब यह है, कि यदि मैं मीरजुमलाको आत्म-समर्पण करके यह कह दूँ कि औरंगजेबने हसनसाहबकी सेनापर आक्रमण किया है, तो वे भी पीछेसे आकर औरंगजेबपर आक्रमण कर सकते हैं, और इस प्रकार दो तरफ की मारसे औरंगजेबकी सेनाके पाँव उखड़ जा सकते हैं।

उदय—उस समय आप जो तरीका बता रहे थे उससे क्या औरंगजेबको भगाया नहीं जा सकता ?

भास्कर—हो तो सकता है, परन्तु उसके लिये भी कोई उपाय नहीं सूझता। पहाड़के दोनों तरफ मीरजुमलाकी सेना हमें पकड़नेके लिये बैठी है। बाहर निकलनेका कोई भी रास्ता नहीं है। और हमलोगोंकी संख्या भी बहुत थोड़ी है।

उदय—आज दो दिनोंसे मीरजुमला डेरा डाले पड़ा है। आक्रमण क्यों नहीं करता ?

भास्कर—हमलोगोंका रास्ता घाट और अड्डे अभी अच्छी तरह मालूम नहीं कर सका है।

उदय—क्या आप अपने बचाव का कोई उपाय नहीं देखते ?

भास्कर—आओ ! यहाँ झरनेके पास बैठें। कोई उपाय निकल ही आयगा।

# छठा परिच्छेद

आधी रातके समय अमीर मीरजुमला आहार करके अपने शस्त्रावासमें लेटे हुए विश्राम कर रहे थे, उसी समय उनके कानों में मधुर संगीतकी झंकार सुनाई पड़ी। अपने एक पार्श्वचरको बुलाकर उन्होंने पूछा—"कौन गा रहा है ?"

पार्श्वचर—एक भिखमंगा है। आज सात दिनोंसे यह हम-लोगोंके साथ साथ रहकर गाना गा रहा है।

मीरजुमला—वह किस जात का है ?

पार्श्वचर—अपनेको मुसलमान बतलाता है।

मीरजुमला—बुलाओ उसको ! उसकी आवाज तो बहुत मीठी लगती है।

नौकर चला गया, थोड़ी ही देरमें एक सुन्दर युवा पुरुषको साथ लेकर आया। युवकको सिरसे पैरतक बड़े गौरसे देखकर मीरजुमलाने पूछा—"तुम्ही गाना गा रहे थे ?"

युवक—हाँ, मैं ही गा रहा था।

मीरजुमला—तुम्हारा नाम क्या है ?

युवक—दोस्त खाँ।

मीरजुमला—मेरी सेनाके साथ क्यों घूम रहे हो ?

युवक—मैं भिखमंगा हूं, गाना गाकर भीख माँगता फिरता हूँ। आपके सिपाही मेरा गाना सुनकर खानेको देते हैं। इसलिये उनके साथ साथ घूमता हूँ।

मीरजुमला—एक अच्छा गाना गाओ तो देखूँ।

युवकने एक बहुत अच्छा गाना गाया जिसे सुनकर मीर-जुमला बहुत सन्तुष्ट हुए, और बोले—"अब कहाँ जाओगे ?"

युवक आज आपलोगोंके साथ ही रहूँगा। कल सबेरे उठ-कर भास्कर डाकूके यहाँ भीख माँगने जाऊँगा। वह गरीबोंको बहुत दान देते हैं।

मीरजुमला लेटे हुए युवकसे बात-चीतकर रहे थे। भास्कर का नाम सुनते ही चौंककर उठ बैठे और दोस्तखाँ के मुखकी तरफ तीक्ष्ण दृष्टिसे देखते हुए बोले—"भास्कर डाकूको तुम कहाँ पाओगे ?

दोस्तखाँने हँसते हुए कहा—पहाड़की उत्तरी चोटीके नीचे ही तो बड़ीसी गुफामें उनका अड्डा है। मैं तो वहाँ कितनी ही बार हो आया हूँ।

मीरजुमला—यदि तुम उनका अड्डा दिखा सको तो तुम बहुत इनाम पाओगे।

दोस्त०—अभी चलिये मैं दिखा देता हूँ।

थोड़ी देरतक सोचकर मीरजुमलाने एक नौकरको बुलाकर कहा—"याकूबखाँ को बुलाओ।"

याकूबखाँके आनेपर मीरजुमलाने कुछ देरतक उसके साथ परामर्श किया, फिर सेनाको तुरत ही कूच करनेकी आज्ञा देकर दोनों ही सेनापति घोड़ेपर चढ़कर सेना परिचालित करके आगे आगे चले। उनके बीचमें भिक्षुक युवक घोड़ेपर सवार होकर रास्ता दिखाता हुआ चला, सभी सेना पीछे पीछे कतार बाँधकर चलने लगी। सेना जितनी ही आगे बढ़ती जाती थी, रास्ता

उतना ही ठेढ़ामेढ़ा, पगडण्डी और दुर्गम होता जाता था। पत्थरोंके ऊपरसे चलना घोड़ोंके लिये बहुत ही कठिन हो रहा था, जगह जगह तो पहाड़के टुकड़े रास्तेके ऊपर इस प्रकार झुके हुए मिलते थे, कि आशंका होती थी कि वे अभी टूटकर सारी सेनाको नीचे दबा देंगे। रास्ता क्रमशः दुर्गम और पगडण्डी होने लगा।

याकूबखाँने भावपूर्ण दृष्टिसे मीरजुमलाकी तरफ देखा। मीरजुमलाने उनके मनका भाव समझकर दोस्तखाँसे पूछा—"अभी कितनी दूर है ?"

दोस्तखाँ—यही आधे कोसके भीतर ही है।

मीरजुमला—देखो दोस्त, तुम हमसे दगा करोगे तो सजा पाओगे।

दोस्तखाँने हँसकर कहा—यह क्या मैं नहीं जानता हूँ, सेनापति और सहकारी सेनापतिके बीचमें राजाकी तरह सम्मान के साथ चलनेका मतलब ही तो यही है कि जरा भी इधर उधर सिर हिलाया कि सिर धड़से अलग।

मीरजुमला—हाँ, तुम तो बड़े चालाक मालूम पड़ते हो बातको बड़ी जल्दी समझते हो।

याकूब—रास्ता तो क्रमशः दुर्गम होता जा रहा है ?

दोस्त—तो क्या आप समझते हैं कि भास्करतीर्थ किसी राजप्रासादमें रहते हैं ? यदि मुझपर आपको सन्देह होता हो तो लौट जाइये।

मीरजुमला—नहीं लौटूँगा, ऐं ! वह सामने क्या है ?

दोस्त—वह एक पहाड़ है उसके भीतर एक पतलासा रास्ता है, जिसके भीतरसे होकर एक एक करके जाना पड़ेगा।

मीरजुमला—वह रास्ता कितनी दूर तक गया है ?

दोस्त करीब आध कोसतक, उसके बाद थोड़ा पगडण्डी रास्ता मिलेगा उसके बाद ही भास्कर की गुफा है।

मीरजुमला—तुरतही सीटी बजाकर और घोड़ेकी लगाम खींचकर खड़े हो गये, साथ ही साथ सारी फौज खड़ी हो गयी। घोड़ेपर बैठे हुए थोड़ी देरतक आँख मूँदकर सेनापतिने मन ही मन कुछ सोचा फिर याकूबखाँ से परामर्श करके लौटनेके लिये सेनाको आदेश किया। ऐसे दुर्गम रास्तेसे होकर वह सेनाको ले जानेका साहस न कर सके, भास्कर बड़ा धूर्त है, उसके जाल में पैर डालना अच्छा नहीं।

दोस्त—हुजूर ! तब मुझे जाने दीजिये, अब मेरा रास्ता निकट हो आया है।

मीरजुमलाने कुछ भी उत्तर न देकर अपनी सेनाको लौटानेकी फिक्रमें लगे इतने हीमें दोस्तखाँ लापता हो गया।

पगडण्डीका रास्ता था इसलिये लौटते समय जो पीछे थे, अब उन्हें ही आगे होकर चलना पड़ा। मीरजुमला आदि सेना नायक जो आगे थे अब पीछे पड़ गये। इस प्रकार थोड़ी दूर चलकर आगेकी सेना सामने एक ऊँचे पहाड़के पास आकर सहसा खड़ी हो गयी। अब किसी तरफ जानेका रास्ता ही न था, आमने सामने और बगलमें चारों ओर सीधे खड़े हुए पहाड़ थे।

इस गोरखधन्धेमें पड़कर सिपाही गोलमाल और ठेल-मठेल करने लगे, जो पीछे थे वे आगे बढ़नेके लिये धक्का देने लगे। और पीछे वाले पीछे हटनेके लिये धक्का धुक्की करने लगे।

मीरजुमला और याकूबखाँ पीछे रहकर अपने भाग्य और अपनी बेवकूफीको कोसने लगे।

वे लोग समझ ही गये कि पीछेकी मूर्ख सेना ठीक रास्तेसे न आकर किसी दूसरे रास्तेसे लौट आई है। परन्तु अब इस भीषण रातके समय ठीक रास्ता ढूँढ़ निकालना भी कठिन है। यदि सारी रात भी हमलोग इस पहाड़ी घाटीमें घूमते रह जायँ तो भी हम बाहर नहीं निकल सकते।

इसी समय यदि भास्करको हमारी विपदकी बात मालूम हो जाय तो वह जालमें फँसे हुए पक्षियोंके झुण्डकी तरह हमें मार काटकर ठिकाने लगा सकता है। इस समय तक उस को खबर लग भी गयी होगी, क्योंकि दोस्तखाँ भी उसीका गुप्तचर मालूम होता है। वही चालाकीसे इस घोर अन्धेरेमें हमें छोड़कर भाग गया है।

इस प्रकारकी कितनी ही चिन्तायें करके भाग्यपर निर्भर होकर उन्होंने सेनाको चुपचाप खड़ा होनेका हुक्म दिया। सेना बातकी बातमें चुपचाप खड़ी हो गयी, अब सतर्क भावसे भास्कर डाकूके आनेका इन्तजार करने लगी, पर बहुत देर हो गयी कोई आता हुआ दिखलाई न पड़ा।

बहुत देरके बाद मीरजुमलाके भेजे हुए कई एक अनुचरोंने आकर कहा—"अच्छा रास्ता किसी तरफ नहीं है। हाँ, दाहिनी तरफके पहाड़से किसी तरह नीचे उतरा जा सकता है।"

मीरजुमलाने उसी रास्तेसे अपनी सेनाको चलनेका हुक्म दिया। सेना उस दुरारोह पर्वतपर चढ़ती और उतरती हुई धीरे

धीरे आगे बढ़ी। इस प्रकार आधे कोस तक चढ़ते उतरते हुए चलनेके बाद ही मीरजुमलाकी सेना खुले मैदानमें आ पहुँची।

इसी समय "गम गम गम" की आवाजसे चारों दिशायें काँप उठीं। मीरजुमलाने समझा कि डाकुओंने आगेसे धावा किया है, इसलिये उन्होंने सेनाको अस्त्र शस्त्रसे सुसज्जित होकर नगरकी तरफ भाग चलनेका हुक्म दिया। क्योंकि इस समय यदि पीछेसे भी कोई दल आक्रमण करे तो वे बड़ी विपदमें पड़ सकते हैं।

परन्तु कुछ दूर अग्रसर होते ही उन्होंने देखा कि मुगल सेना गोलकुण्डाकी सेनासे युद्ध कर रही है।

अब क्या था, मीरजुमलाका हुक्म पाते ही दस हजार सेना "दीन दीन" के गगनभेदी नादके साथ मुगल सेनापर टूट पड़ी।

दो तरफके भीषण आक्रमणका मुगल सेना किसी प्रकार भी सामना न कर सकी और थोड़ी ही देरमें तितर बितर होकर भाग खड़ी हुई। मुगल सेनापति किसी प्रकार भी उन्हें रोक न सका।

सबेरा होते होते हसनसाहबकी सेनाके साथ मीरजुमलाकी सेना आ मिली। विजयी बीर गलेसे लगकर अपनी अपनी बहादुरी बघारने लगे। इसके बाद सभी सेनाने मिलकर भास्कर-तीर्थका अनुसन्धान किया परन्तु कहीं भी किसी डाकूसे मुलाकात न हुई, इसलिये सब लोग ससैन्य गोलकुण्डाको लौट गये।

# सातवां परिच्छेद

उपरोक्त घटनाके बाद दो महीने बीत गये हैं, गोलकुण्डाके राजनीतिक आकाशमें इस समय काली घटा छा रही है, और प्रत्येक मुहूर्तमें तूफान उठनेकी आशंका की जाती है।

इस समय हसनसाहबका हृदयाकाश भी गाढ़ी घटासे आच्छन्न हो रहा है। अब वह बानू बेगम नहीं रही, जो उनके हृदयाकाशमें ध्रुव ताराकी तरह कार्य्य निर्दोष कर रही थी जिसे पाकर उन्होंने स्वर्गका सुख भी तुच्छ समझा था। उस मार्जिना बेगमके बेहाथ होनेकी भी अब प्रत्येक मुहूर्त आशंका हो रही है। अब न वह हाव-भाव और कटाक्ष ही रह गया है, और न अब बात बातमें आत्महत्याकी धमकी और रूठने कलपनेका अभिनय ही होता है। हसनसाहब हृदयके गुप्त स्थानमें जितना ही अपनी नव-प्रेमिकाको बैठा रखनेकी चेष्टा करते हैं, उतनाही वह रेगिस्तानकी तरह दूर ही हटती जा रही है। पहले उन्होंने जिस हृदयको प्रेमकी भरी नदी समझकर उसमें अपनेको डुबो-कर अपनी कामाग्निको शान्त करना चाहा था, अब वह ..... प्रतीत होने लगी है।

वास्तवमें अब मार्जिना बेगम और हसनसाहबका सम्बन्ध प्रेमी और प्रेमिकाका नहीं रह गया है। शाहजादियोंके आमोद आरामकी जैसे अन्यान्य कितनी सामग्रियाँ रहती हैं, वैसे हसन-साहब भी अब उनके आमोद आनन्दकी सामग्री हो रहे हैं।

जब उनकी इच्छा होती है वह उन्हें बुलाती है, और जब उनकी इच्छा होती है, दुरदुरा देती है। हसनसाहबकी इस समय ठीक "साँप छछूंदर" की गति हो रही है।

एक दिन नियमानुसार अर्जी दाखिल करके जब हसनसाहब बेगमसाहबाके शयनागारमें पहुँचे उस समय अतिरिक्त सुरापानसे शाहजादीके युगल चक्षु रक्त-वर्ण हो रहे थे। उन्हें देखते ही शाहजादीने विलोल कटाक्ष करके कहा—"सिपहसालार! आज खबर क्या है?"

हसन—खबर कुछ भी नहीं है, बिना देखे रह नहीं सकता हूँ, इसीलिये आ जाता हूँ।"

मार्जिना—देखती हूँ, दिन दिन तुम बदले जा रहे हो सर्वदा ही उदास, सर्वदा ही चिन्तित, यह क्या बात है?

हसन—मैं गुलाम हूँ, गुलामको खुशी न खुशी कैसी?

मार्जिना—मालूम होता है, तुम मुझपर रञ्जिदा हुए हो। उस दिन मैंने मीरजुमलाकी बात कही थी, इसलिये शायद तुम दुखित हो रहे हो।

हसन—मैं दुखित क्यों हूंगा, आपकी यदि इच्छा हुई है तो उन्हें ही बुलाकर सुख भोग कीजिये, मुझे कोई आपत्ति नहीं है।

मार्जिना—सेनापति साहब! एक बात याद रखियेगा। शाहजादी कभी किसीकी रखनी होकर नहीं रह सकती, और न वह प्रेम करना ही जानती है, यदि ऐसा होता तो वह अपने स्वामी को क्यों विष खिलाकर मार डालती? मीरजुमलाकी इस समय सर्वत्र प्रशंसा हो रही है। मेरी इच्छा हो रही है कि मैं उसे बुलाकर एक दिन आनन्द करूँ।

हसन—अच्छा ही तो है, इसमें मुझे आपत्ति क्या ? परन्तु दुःख इसी बातका है, कि आपलोगोंमेंसे कोई भी उसे पहचान न सका। भास्करतीर्थसे अपमानित होकर उस दिन चला आ रहा था, इतनेमें सामने औरंगजेबकी सेना मिल गयी, और दो, तीन आवाजें छुड़वा दीं, इसलिये वह विजयी हो गया, और मैं अक्लान्त परिश्रमसे सारी रात युद्ध करके शत्रुको मोर्चे से हटाया तब भी मेरा नाम नहीं हुआ।

मार्जिना—अच्छा जाने दो, एक प्याली शराब पीयो।

हसनसाहबने तुरत आज्ञाका पालन किया। मगजमें शराब की क्रिया आरम्भ होनेपर उन्होंने मार्जिनाका हाथ पकड़कर कातरस्वरमें कहा—मार्जिना ! मेरी प्यारी मार्जिना !! सच कहो, तुम मुझे प्यार करती हो ?

मार्जिना ठहाका मारकर हँस उठी और हँसती हुई बोली—"हसनसाहब ! तुम्हारा दिमाग खराब हो गया है, कुछ दिन तुम हकीमकी दवा खाओ।"

हसन—हाँ, मार्जिना। मेरा दिमाग खराब हो गया है, नहीं तो मैं अपनी सुख-शान्तिपर लात क्यों मारता ?

मार्जिना—क्यों ?

हसन—तुम्हें पानेके लिये।

मार्जिना—बेवकूफ कहींके ! शाहजादीको रखनी बनानेकी साध ! डूब नहीं मरते !

हसन—रखनी बनाना नहीं चाहता था, अपने हृदयकी रानी बनाना चाहता था।

मार्जिना—अर्थात् तुम्हारी इच्छा है कि मैं तुम्हारी ही इच्छाके अधीन रहूँ, याद रखो! खुदा तालाने मुझे शाहजादी बनाकर इसलिये भेजा है, कि मैं संसारके सभी सुख और आनन्दोंका उपभोग करूँ, इसलिये मेरी जब जो इच्छा होगी वही करूँगी। मैं किसी की इच्छाके अधीन नहीं हो सकती।

हसन—मैं बाधा दूँगा। तुम मेरी हो।

मार्जिना—तुम बहुत बढ़ बढ़कर बातें न बोलो, नहीं तो अच्छा नहीं होगा।

हसन—तो क्या तुम मीरजुमलाको भी बुलाओगी?

मार्जिना—हाँ, बुलाऊँगी! उसे भी आकाशका चाँद धराऊँगी और जब खुशी होगी पैरों तले रौंदकर दुर-दुरा दूँगी।

हसन—फिर मैं कभी न आऊँगा।

मार्जिनाने आँखें तरेरकर कहा—आओगे क्यों नहीं? मुझे जरूरत पड़ेगी तो जरूर आओगे! तुम्हारा सारा शरीर न आ सके तुम्हारे शिरको ही मैं मँगा लूँगी।

"अच्छा यही होगा" कहकर हसनसाहब उठकर खड़े हो गये, और मार्जिनाके कमरेसे निकलकर जल्दीसे बाहरकी तरफ चले। जब वह गुप्त दरवाजेके सामने पहुँचेही थे, उसी समय किसीने पीछेसे उनकी चपकनका कपड़ा पकड़कर खींचा।

हसनसाहबने पीछे फिरकर देखा और अनुभवसे मालूम किया कि यह कोई औरत है। उसके मुखपर आवरणी थी।

रमणीने दबे गले से कहा—"तुम यहाँ कभी न आना। मीर-जुमला आने लगा है, तुम्हारे विरुद्ध षड़यन्त्र चल रहा है।

इतना कहनेके साथ ही रमणी एक तरफको चली गयी।

हसनसाहब अन्तःपुरसे बाहर निकले और निस्तब्ध निर्जन राज-पथपर चलते हुए, अतीत और वर्तमान, बानू और बेगमकी तुलना करके आत्मानुसोचनसे दग्ध होने लगे।

# आठवां परिच्छेद

सुखमें भी दाहिका शक्ति होती है। आग जैसे जलती है सुख भी वैसे ही जलता है। सुख दो प्रकारके होते हैं एक प्रदाहि सुख और दूसरा प्रशान्त सुख। प्रदाहि सुखमें जलन है, प्रशान्त सुखमें शान्ति है। प्रदाहि सुखके आने पर मनमें एक प्रकारकी मादकता उत्पन्न होती है। फिर पीछे वही मादकता अग्निके लूककी तरह हृदयको खाक करने लगती है। और प्रशान्त सुख उद्यानकी शीतल सुगन्धित वायु अथवा आकाशकी शुभ्र स्निग्ध ज्योत्स्ना है। जिसके हृदयमें यह वायु बहती या ज्योत्स्ना विखरती है, उसका हृदय शान्ति मय हो जाता है। हसनसाहब उसी प्रदाहि सुखमें भस्म हो रहे हैं, और भास्करतीर्थ डाकू होते हुए भी शान्ति मय जीवन व्यतीत कर रहे हैं।

हसनसाहबका हृदय भी जलते जलते अब उसका कंकाल बाकी रह गया है। हसनसाहबके पास शक्ति सामर्थ्य और धन जन होते हुए भी इस समय उनका जीवन निर्जीव निस्पन्द और उत्साहहीन हो रहा है। न वह पहलेका आत्माभिमान है, और न मानसिक तेज। इस समय वह सचमुच अनुभव कर रहे हैं, कि अधःपतनके दलदलमें पैर रखते ही सारे मनुष्योचित गुण भी विदाई ले लेते हैं।

इसीलिये उस दिनके अपमानके बाद एक दिन हसनसाहब

कमजोरीपर धिक्कार आया ; परन्तु दूसरे ही क्षण मार्जिनाकी मुखच्छवि और उसके विलोल कटाक्षने उनके सारे मान अभिमानको पानीकी तरह बहा दिया। हसनसाहब अपनी आँखोंकी रूपपिपासाको शान्त करनेके लिये राजमहलकी तरफ चले।

हसनसाहबने अन्तःपुरके गुप्त दरवाजेके पास पहुँचकर नियमानुसार खोजेको शाहजादीके पास खबर भेजनेको कहा।

खोजेने भी नियमानुसार आदर अभ्यर्थनाके साथ उन्हें अपने घरमें बिठाया और शाहजादीके पास खबर भेजनेके लिये कमरेसे बाहर निकला। परन्तु निकलनेके साथ ही उसने सीकल चढ़ा कर ताला बन्द कर दिया।

हसनसाहब ताला और चाबीकी खटखटाहट सुनते ही सन्न हो गये। उनके सारे बदनसे पसीना छूटने लगा। इतने दिनके बाद उन्हें उस रमणीकी बात सच मालूम हुई जिसने सावधान करके कहा था कि तुम्हारे विरुद्ध षड़यन्त्र हो रहा है, फिर मत आना।

हसनसाहबमें यदि पहले जैसी मान संभ्रमकी शान और विवेचन-शक्ति होती तो क्या वे इस जालमें पैर रखते ?

बहुत देर बीत गयी। खोजाके उस कमरेमें कोई भी नहीं आया, हसनसाहब चुपचाप बैठे हुए अपने भाग्यको कोसने लगे।

सहसा बाहरके लगे हुए तालेमें चाभीकी आवाज फिर सुनाई पड़ी। हसनसाहबके हृदयको दहलाते हुए एक दल उन्हींके सिखाये हुए सिपाहियोंका उस कमरेमें घुस आया।

कमरेमें बत्ती जल रही थी, उन्होंने हसनसाहबको सलाम करके कहा—"नवाब साहब का हुक्मनामा देखिये। आप सेना-

पति के पदसे खारिज किये गये हैं, और आपके अपराधका विचार करनेके लिये आप गिरफ्तार किये जा रहे हैं।

हसनसाहब कुछ भी न बोले एक बार आँखे तरेरकर सिपाहियोंकी तरफ देखा और अपनी तलवार पर हाथ लगाया। इतने ही में सिपाहियोंने उन्हें पकड़कर बाँध डाला।

हसनसाहब अपने कर्मका फल भोगनेके लिये कारागार में बन्दकर दिये गये।

# नवाँ परिच्छेद

एक दिन अपने मैले कुचैले कपड़ोंमें अपने सारे अंगको छिपाये हुए एक रमणी प्रधान मन्त्रीके अन्तःपुरमें जा पहुँची। वजीर साहबकी प्रौढ़ा गृहिणी अपनी सहचरियोंके साथ बैठी हुई गपशप कर रही थी, रमणीने निकट जाकर उन्हें अभिवादन किया, और चुपचाप खड़ी रही।

मन्त्री-गृहिणीने कहा—"तुम कौन हो? किस लिये आई हो? मुखका कपड़ा खोलो हमलोगोंके साथ तुम्हें संकोच क्यों है?"

रमणीने मुखका कपड़ा खोल दिया, वजीर-पत्नीने देखा कि रमणी अश्रुमुखी, परन्तु आनिन्द्य सुन्दरी है। रमणी वीणाके टूटे हुए तारकी तरह भंकृत कण्ठसे बोली—"मेरा नाम खसिया बीबी है, मैं बड़ी विपदमें पड़कर आपकी शरण में आई हूं। इतना कहते कहते रमणीका गला रुक गया और आँखोंसे आँसुओंकी धारा बहने लगी, वजीर-पत्नीने करुणा भरे स्वरमें पूछा—"बेटी! तू कैसी विपदमें पड़ी है। निःसंकोच होकर कह, यदि मेरी शक्तिमें होगा तो मैं तेरा उपकार करनेमें त्रुटि न रखूँगी।"

खसिया—नवाब बहादुरके प्रधान सेनापतिका नाम तो आप जानती होंगी?

वजीर-पत्नी—हाँ उनका नाम कौन नहीं जानता, परन्तु वह

तो कल रातको किसी कुत्सित अपराधमें पकड़े गये हैं, तुम उनकी कोई होती हो क्या ?

खसिया—हाँ, मैं उनकी बाँदी हूं।

वजीर-पत्नी—बाँदी ! इतनी सुन्दरी ! हो सकता है, नहीं तो कपड़े लत्ते ऐसे क्यों होंगे ? सुनती हूं उनकी स्त्री भी कहीं चली गई है, खैर कहो तुम क्या चाहती हो ?

खसिया—आज रातको उनका विचार होगा, उनको प्राण दण्ड होनेकी ही अधिक सम्भावना है। मैं आपसे उनके प्राणोंकी भिक्षा माँगने आई हूं।

वजीर-पत्नी—मुझसे प्राण-भिक्षा ? मैं क्या कर सकती हूं ? तुम्हीं कहती हो कि उनका विचार खास दरबारमें होगा।

खसिया—आप यदि चाहें तो उन्हें बचा सकती हैं।

वजीर-पत्नी—तुम पगली हो क्या ?

खसिया—पगली नहीं हूं, परन्तु यदि वह नहीं बचेंगें तो सचमुच मैं पगली हो जाऊँगी।

वजीर-पत्नी—देखती हूं उनपर तुम्हारा गहरा प्रेम है, कुछ और भी तो नहीं है ?

खसिया—वह मेरे मालिक हैं; बहुत प्यार करते हैं, आपसे हाथ जोड़कर कहती हूं कि आप वजीर साहबसे कहिये यदि वह चाहें तो फाँसीका हुक्म रद्द करवा सकते हैं।

वजीर-गृहिणी कुछ देरतक चुप होकर सोचती रहीं फिर बोलीं—"नवाब यदि उनका कहना न मानें तो ?"

खसिया—न मानेंगे तो कोई बात ही नहीं, मैं आज सबेरेसे सभी सामन्तोंके घर घर घूम रही हूं। उन सबोंने

मुझे आपके पास भेज दिया है, आप पहले कृपा करके उन्हें मेरी प्रार्थना ही जनाइयेगा। यदि वह कहें कि रक्षाका कोई उपाय नहीं तब उनसे ये बातें कहिये।

वजीर-पत्नी—कौन बातें ?

खसिया—हसनसाहब किस कैदखानेमें बन्द किये गये हैं यह जाननेके लिये सभी सामन्तगण एक दरखास्त पेश करेंगे। और दरखास्तमें यह भी अर्ज करेंगे कि हसनसाहबका विचार, जिसमें प्राणदण्ड होनेकी सम्भावना है, खुले दरबारमें ही हो। मुझे मालूम है कि किसी उच्च पदस्थ कर्मचारीके प्राण-दण्डका आदेश बिना प्रकाश अदालतमें विचार हुए नहीं हो सकता।

वजीर-पत्नी—सो सब तो होगा वजीर साहब क्या करेंगे ?

खसिया—सामन्तोंकी प्राथना नामंजूर करके यदि नवाब साहब गुप्त रूपसे सेनापतिका वध करना चाहेंगे तब वजीर साहब उन्हें सलाह देंगे कि इस नाजुक अवस्थामें जब कि बाहर और भीतर बड़े बड़े शत्रु ताक लगाये बैठे हुए हैं सामन्तोंकी प्रार्थना नामंजूर करके उन्हें विद्रोही बनाना उचित नहीं। और आम दरबारमें अन्तःपुरका रहस्य खोलना भी निन्दनीय है, ऐसी अवस्थामें हसनसाहबको किसी बहाने छोड़ देना ही अच्छा है। खूब सम्भव सोच समझकर वजीर साहबकी बात मानकर सेनापतिको छोड़ ही देंगे।

खसिया बीबीकी बातें सुनकर वजीर-पत्नी अवाक होकर उसकी ओर ताकती रह गई फिर आश्चर्य्यके साथ बोली—"सचमुच तुम दासी हो ?"

खसियाने आँखोंमें आँसू भरकर कहा—"मैं आपके पाँवों पड़ती हूं, दासीकी बात रखिये सेनापतिको बचाइये।"

वजीर-पत्नी—अच्छा मैं वजीर साहबसे विशेष करके अनुरोध करूँगी।

खसिया—अच्छा तो मैं निश्चिन्त होकर जा सकती हूं ?

वजीर-पत्नी—थोड़ी देर बैठो न, तुमसे बात-चीत करनेकी बड़ी इच्छा होती है।

खसिया—आज घरपर बहुत काम है, फिर कभी सेवामें आऊँगी। मैं आप लोगोंका उपकार भूल न सकूंगी।

वजीर-पत्नी—पहले उपकार पाओ भी तो।

खसिया—जब खबर मिली है तो उपकार भी मिला ही समझती हूं।

वजीर-पत्नी—अच्छा, जा सकती हो, परन्तु एक दिन और आना।

खसिया सारा अङ्ग कपड़ोंमें ढाँककर चली गयी।

—***—

# दशवाँ परिच्छेद

पहर भर रात गये खास दरबारमें चार पाँच मन्त्रियोंके साथ बैठे हुए कुतुबशाह बात चीत कर रहे थे। बातों ही बातोंमें उन्होंने उत्तेजित होकर कहा—"मैं इस प्रकार हाथ पैर बाँधकर राज-काज नहीं कर सकता। यदि मैं अपनी इच्छानुसार काम ही नहीं कर सकता तो राजा ही किस बातका हूँ ?"

प्रधान मन्त्रीने हाथ जोड़कर कहा—"जहाँपनाह ! आप ही गोलकुण्डाके रक्षक हैं, यदि आप इस समय समझ-बूझकर काम न करेंगे तो गोलकुण्डाका तहस-नहस हो जायगा। ऐसी ही अवस्था सदा नहीं रहेगी।"

कुतुब—अच्छा तो आपकी यही राय है, कि इतने बड़े अपराधी हसनको भी योंही छोड़ दिया जाय, यदि किसी गरीब दुखियाके घरमें भी कोई रातको प्रवेश करता है, तो वह भी उसको दण्ड दिये बिना नहीं छोड़ता ? और मैं एक देशका राजा होते भी डरकर उसको छोड़ दूँ ?"

प्रधान मन्त्री—जो जितना ही बड़ा होता है, उसको उतना ही विचार और धीरतासे काम लेना पड़ता है। सामन्तोंने खुले अदालतमें सेनापतिके विचारकी प्रार्थना की है परन्तु अन्दर महलका रहस्य आम दरबारमें उठाया भी कैसे जा सकता है ?

कुतुब—तब ऐसा कोई उपाय सोचिये जिससे हसनसाहबकी मृत्यु भी हो और कोई झगड़ा टण्टा भी न उठे।

एक दूसरे वजीरने हाथ जोड़कर कहा—"जहाँपनाह एक उपाय है, सामन्तोंकी दरखास्तके उत्तरमें आप लिख दीजिये कि हसनसाहब किसी अपराधमें पकड़े नहीं गये हैं और न उनको प्राण दण्ड ही होनेको है, हमलोगोंके दुर्भाग्यवश हमारे सबसे अधिक योग्य और विश्वासी सेनापति हसनसाहब अचानक उन्माद रोगसे ग्रस्त हो गये हैं।

एक दिन पागल होकर वह रास्तेमें मार-पीट कर रहे थे, इसलिये उनके सिपाहियोंने उन्हे पकड़कर पागलखानेमें रख दिया है, वहाँ बड़े ही यत्नसे उनकी शुश्रूषा हो रही है।"

इतने ही से सामन्तगण सन्तुष्ट हो जायँगे, और इधर हसन साहबको बिना दाना पानीके तिल तिल करके मार डाला जायगा।

यह बात सुनकर कुतुबशाह बहुत सन्तुष्ट हुए, अन्यान्य मन्त्रियोंने भी इस प्रस्तावका समर्थन किया। केवल गृहिणीके अनुरोधसे प्रधान मन्त्री इस प्रस्तावसे सन्तुष्ट न हो सके। परन्तु अकेले वह क्या कर सकते हैं, विशेष करके वह कैसी नाजुक बातको लेकर लड़ाई कर रहे थे। और सबसे बड़ी बात यह थी कि उनका पलड़ा इस समय बहुत नीचा था, प्रकट रूपसे उन्होंने कोई मत प्रकट न किया। उन्हें इतने ही से सन्तोष करना पड़ा कि अभी प्राण-दण्ड तो नहीं हुआ।

इसके बाद राज-काजका प्रसङ्ग छिड़ा, कुतुबशाहने कहा—"इस प्रकार निर्जीवकी तरह चुपचाप बैठे रहना मुझे अच्छा नहीं लगता। मैं चाहता हूँ, कि विद्रोहीको कड़ा दण्ड देकर दमन किया जाय, और बाहरी शत्रुओंको खुले मैदानमें युद्ध करके भगाया जाय।

मन्त्री-समाजने कुछ सोच विचार कर अपना मत प्रकट किया। सबने कहा—"इस सेना और सेनापतियोंकी जैसी हालत देखी जाती है, उससे किसीपर भी विश्वास नहीं किया जा सकता। चारोंओर षड़यन्त्र, चारों ओर स्वार्थपरता और लुका-छिपी चल रही है। इस समय युद्धकी घोषणा करना अपने पैरों कुल्हाड़ी मारना है।

कुछ देर तक सोचकर कुतुबशाहने कहा—"हाँ, हाँ, एक बात याद पड़ गयी। काश्मीर नरेश मेरे मित्र हैं, उन्होंने कई बार मुझे निमन्त्रण दिया है, परन्तु राज-काजके झंझटोंसे नहीं जा सका हूँ। आजकल मेरा चित्त बहुत ही खराब हो रहा है। काश्मीरकी चिर वासन्ती शोभासे कुछ मन बहलाव हो सकता है, मेरी इच्छा है, कुछ दिन काश्मीरमें हो आऊँ? उनसे अपने राजकीय विषयमें सहायताके लिये सन्धि भी कर लूंगा।

प्रधान मन्त्री—जहाँपनाह! आपकी इच्छा है, तो जाइये, परन्तु किसी प्रकारकी सन्धि करनेकी आवश्यकता नहीं है। किसी राजाको अपनी कमजोरी प्रकट करना राजनीतिके विरुद्ध है। इससे बड़े अनर्थ हो सकते हैं।

कुतुब—नहीं, नहीं, मैं अपनी कमजोरी क्यों प्रकट करूंगा। मैं कौशलसे ही काम निकालनेकी चेष्टा करूंगा।

प्रधान मन्त्री—राज्य-भार किसको दे जाइयेगा?

कुतुब—अमीर मीरजुमलासे अधिक विश्वासी और कौन है, उसीको दे जाऊँगा।

प्रधान मन्त्री—अमीर विदेशी हैं, गोलकुण्डा उनकी जन्म-

भूमि नहीं है, इसके लिये उनमें वह प्रेम नहीं भी हो सकता है, जो एक स्वदेश-भक्त राजामें होना चाहिये।

कुतुब—नहीं, मैं उसीको सबसे उपयुक्त समझता हूँ। आप लोग छेड़ छाड़ न कीजिये।

प्रधान मन्त्री—अच्छा, यही सही।

इसके बाद सभा भङ्ग हुई, सब अपने अपने घर चले गये।

इस घटनाके सात दिन बाद मीरजुमलाको गोलकुण्डामें अपना प्रतिनिधि नियुक्त करके बहुत बड़ी सेना और दास दासियोंके साथ कुतुबशाह काश्मीर राज्यके लिये रवाना हो गये।

—※※—

# ग्यारहवाँ परिच्छेद

एक महीना हो गया, हसनसाहब अभी पागलखानेमें ही बन्द हैं। वह पागल न होते हुए भी कर्मके दोषसे पागल हो गये हैं। एक समय जो गोलकुण्डाका सबसे अधिक शक्तिशाली सेनापति था, आज वह पागलखानेके कोड़ेदारोंके बेंत खा रहा है। इससे अधिक पागल होनेकी चिन्ता और क्या हो सकती है, आँखें धस गयी हैं, और सारा अंग कोड़ोंकी मारसे जर्जरित हो रहा है?

एक दिन शामको सभी पगले हवाखानेके लिये कैदखानेके मैदानमें छोड़ दिये गये थे। सभी इधर उधर दौड़ धूप मचा रहे थे। परन्तु हसनसाहब एक टूटे हुए टूलपर बैठे अपने भाग्यकी बात सोच रहे थे। इतनेमें काराध्यक्षने आकर कहा—सेनापतिसाहब! मिजाज कैसा है?

आँखें तरेर कर हसनसाहबने कहा—काराध्यक्ष! भाग्यके हेर फेरसे मनुष्यके ऊपर कितनी ही विपद आपद आ सकती हैं; परन्तु उसके कारण किसीसे घृणा करना उचित नहीं है।

काराध्यक्ष—वाह! देखता हूँ, अब भी ऐंठ नहीं गयी।

हसनसाहबने झुंझलाकर कहा—महाशय बहुत दिनोंकी बात नहीं है, जब इस अधीनके आप दासानुदास थे। इतनी जल्दी भूल क्यों जाते हैं?

काराध्यक्ष—चुप रहो, नहीं तो अभी कोड़ेदारको बुलवाकर बाई

सीधी करवा देता हूं। देखते नहीं कि शरीरपर कितने कोड़ोंके दाग पड़े हुए हैं। याद रखो कि राजप्रतिनिधि मीरजुमलाका हुक्म है, कि दो सौ कोड़े रोज तुम्हें लगाये जायँ अभी तक तुम बचते जा रहे हो, यह सिर्फ प्रधान मन्त्रीके अनुरोधसे।

हसन—अच्छा तुम यहाँसे जाओ, मुझे दिक्क न करो।

काराध्यक्ष—फिर बदमाशी! कोड़ादार!

हसनसाहब अब अधिक सह न सके, जिस टूलपर वह बैठे हुए थे, उसे उठाकर उन्होंने काराध्यक्षपर आक्रमण करना चाहा परन्तु इतनेमें दो सिपाहियोंने दौड़कर उन्हें पकड़ लिया, जिससे काराध्यक्षकी जान बची।

अब क्या था। आगमें घी पड़ गया। क्रोधसे अधीर होकर काराध्यक्षने तुरत ही दो कोड़ेदारोंको बुलाया और हसनसाहब पर अनगिन्त बेंत लगानेका हुक्म दिया। बेंतोकी चोटोंसे छट-पटाकर हसनसाहब बेहोश होकर गिर पड़े, तबतक भी कोड़ेदारोंने मारना बन्द नहीं किया। हाय! बानूबेगम! आज तुम्हारे हृदय-के आराध्य देवता गोलकुण्डाके प्रधान सेनापति हसनसाहबकी दुर्दशा देख जाओ। शायद तुम्हारी आँखोंके आँसू ही उनके शरीरपर बेंत होकर बरस रहे हैं।

# बारहवाँ परिच्छेद

प्रतिनिधित्वका पद प्राप्त करके मीरजुमलाने अत्याचारका डंका बजा दिया है। प्रजा उसके अत्याचारसे जर्जरित हो रही है। उसके उद्धत स्वभाव, धनलिप्सा और काम पिपासासे प्रजा को अपनी जान माल और इज्जत आबरू बचाना कठिन हो रहा है। इस समय नवाबके जनाना महलमें भी बेरोक टोक आवागमन हो रहा है। न तो कोई बोलनेवाला है, और न कोई बाधा देने वाला ही है। एक दिन मार्जिनाबेगमने शराबके नशेमें हसनसाहबका जिक्र किया था। तभीसे प्रतिनिधिसाहब हसनसाहबपर आग बबूले हो गये हैं। हसनसाहब ही केवल उनके एक मात्र प्रतिद्वन्दी ही नहीं उससे भी बढ़कर थे। इस समय वह पागलखानेमें हैं, परन्तु मन्त्रीगण जिस प्रकार उनका पक्षपात करते हैं। आश्चर्य नहीं नवाबसाहबके लौटनेपर कह-सुन उन्हें कैदसे छुड़वाकर फिर उनके पदपर बैठा दें। परन्तु यह अनर्थ होनेके पहले ही यदि किसी प्रकार इन्हें इस संसारसे उठा दिया जाय तो, सबसे अच्छी बात है। परन्तु प्राण-दण्डकी आज्ञा तो नहीं दी जा सकती, क्योंकि यह चेष्टा पहले ही निष्फल हो चुकी है। इसीलिये किसी गुप्त उपायसे ही काम लेना चाहिये। बहुत सोच विचारकर मीरजुमलाने एक दिन कारा-ध्यक्षको बुलाया और बहुत पुरस्कार देनेका लालच देकर कहा—"किसी प्रकारसे सेनापतिकी हत्या करनी है, इसलिये यह अफ-वाह उड़ा दो, कि किसी रोगसे सेनापतिसाहब मर गये हैं।

काराध्यक्षने कहा—हुजूर पागलखाने के पागलोंकी किसी रोगसे मृत्यु होनेपर डाक्टरका दस्तखतनामा लेना पड़ता है। परन्तु हमारे जेलके डाक्टर बड़े धर्मभीरु हैं, वह झूठा दस्तखत कभी नहीं देंगे। वह घूस भी नहीं लेते।

मीरजुमला—एक और उपाय है। रातको दरबार भंग होते समय मैं तुम्हें एक चिट्ठी लिखूँगा कि मैं सेनापतिसाहबसे भेंट करना चाहता हूं, उन्हें ले आओ। तुम अकेले ही उन्हें लेकर मेरे पास आओगे। और यहाँसे उन्हें लेकर लौटती समय जेलके बाहर बगीचेमें मार डालोगे। परन्तु सावधान ये सब बातें कोई भी जान न पावे।

काराध्यक्ष—मैं अकेला उसे मार न सकूँगा, वह बड़ा बलवान है।

मीरजुमला—उसके हाथ पैर तो बधें ही होंगे। वह तुम्हारा कर ही क्या सकेगा। उसे मारकर अफवाह उड़ा देना, कि किसीने गोलीसे सेनापतिकी हत्या कर डाली है।

काराध्यक्ष—आप जब हुक्म देते हैं, तब डरकी क्या बात है?

मीरजुमला—नहीं यह काम तुम्हें अपने बल पर करना होगा तुम मेरा नाम न ले सकोगे।

"जो हुक्म" कहकर काराध्यक्ष चला गया। मीरजुमलाने भी धीरे धीरे अब मार्जिना बेगमके महलमें प्रवेश किया हसन-साहब जिस प्रकार लुक-छिपकर जाते थे, मीरजुमलाको उस तरह जाना नहीं पड़ता, वह प्रकाश्य भावसे ही चले जाते हैं। जाते समय उन्होंने देखा कि बगलके कमरेमें मधुर वीणा-

ध्वनिके साथ सुर मिलाकर कई एक सुन्दरी परिचारिकायें गान गा रही हैं, और उनके सामने एक अनिन्द्य सुन्दरी युवती तारका मण्डलीके बीचमें पूर्ण कलाधर चद्रमाकी तरह शोभ रही है, युवतीका अंग प्रत्यङ्ग बहुमूल्य वस्त्राभूषणोंसे भूषित हो रहा है। और कमरा भी हीरा मोती और मणि मानिकोंकी ज्योतिसे जग मगा रहा है। मानो स्वर्गका दृश्य ही उस कमरेमें उतर आया है। मीरजुमला उस चद्रमुखी युवतीको देखकर मोहित हो गया; और मन ही मन उसकी सुन्दरतापर अपना हृदय निछावर कर कुछ सोचता विचारता हुआ खोजाके पास गया और जाकर पूछा—"वह युवती कौन है।" खोजाने डरते हुए कहा—बादशाह नामदारकी छोटी महिषी नूरमहल है?

कुछ सोच विचारकर उन्होंने कहा—मैं एक पत्र लिख देता हूं, तू इसे बेगमसाहबाको दे आ।"

खोजाका मुँह सूख गया, उसने डरते हुए कहा—हुजूर किसीका पत्र भीतर लेजानेकी कड़ी मुमानियत है, मुझसे नहीं हो सकेगा।

मीरजुमला—नहीं जायगा, तो मैं अभी तेरा सिर काट डालूँगा।

खोजा जानेको राजी हुआ। मीरजुमला उसके हाथमें पत्र देकर मार्जिना बेगमके महलमें चला गया।

काँपते हुए हाथसे खोजाने वह पत्र लेजाकर नूरमहलके हाथमें दिया। बेगमसाहबाने उस पत्रको पढ़ा। उसमें लिखा था, —"मैं आपका अपूर्व रूप देखकर मोहित हो गया हूं। दया करके एकक्षणके लिये दर्शन देकर मुझे कृतार्थ करें। दासानुदास

मीरजुमला।" नूरमहलने उस पत्र को बार बार पढ़ा और पढ़ते पढ़ते उनके दोनों ओठ कितनी ही बार काँप उठे। उन्होंने तुरत कागज कलम मँगाकर मीरजुमलाके नाम एक पत्र लिखकर खोजाके हाथमें दे दिया।

इधर मार्जिना बेगमके महलमें "योग्येन युज्यते योग्य" की बात चरितार्थ हो रही है। जिस प्रकार शाहजादी जैसे नवाब नन्दिनी होनेके कारण गर्वसे किसीको कुछ चीज ही नहीं समझती, इसी प्रकार मीरजुमला भी गोलकुण्डाका सर्वेसर्वा बनकर गर्वसे फूला नहीं समाता है। जबतक प्रेमी और प्रेमिका

[illegible]

कब्रके लिये बन्दोबस्त करो। कल रातको उसकी जीवनलीला पूरी हो जायगी।

एक बाँदी, सुनहली रेकाबीमें खाना ले जा रही थी, उसके हाथसे रेकाबी गिरकर झनझना उठी।

मार्जिनाने कहा—क्यों? वह तो पागलखानेमें है। बाबूजीने ऐसा ही बन्दोबस्त कर दिया, तो फिर उसकी हत्या कौन करेगा।

मीरजुमला—वह मरेगा इतना ही जानता हूँ। कौन मारेगा सो मैं नहीं जानता। अच्छा तो आज मैं उठ रहा हूँ।

मार्जिनाका मन उदास हो गया, इसलिये वह मीरजुमलाको बैठनेका अनुरोध न कर सकी। मीरजुमला वहाँसे उठकर खोजाके पास आया। खोजा पत्र लेकर उनका इन्तजार कर रहा था। मीरजुमलाने पत्रको खोलकर पढ़ा, उसमें लिखा था —"आपकी इच्छा पूरी करनेमें मुझे कोई आपत्ति नहीं है। आप अन्तःपुरकी उद्यान वाटिकामें बावलीके पास आइयेगा वहीं मुझसे भेट होगी।"

पत्र पढ़कर मीरजुमलाके आनन्दकी सीमा न रही वह आनन्दसे इतराते हुए बाहर चले।

इतने ही में एक बाँदीने उनसे आकर पूछा—मार्जिनाबेगम पूछती हैं कि हसनसाहबकी हत्या कहाँ होगी?

मीरजुमला इस समय आनन्दकी तरंगोंमें डूब उतरा रहा था, उसने बिना सोचे समझे कह डाला "जेलके फाटकके पास" बगीचेमें।

—***—

# तेरहवाँ परिच्छेद

सन्ध्या होते ही एक युवती रमणी अन्दर महलका "दस्ताना" दिखाकर जेलके सामनेके बगीचेमें प्रवेशकर गयी। उसके वस्त्र कुछ ढीलेढाले थे, और कुछ कसे हुए थे; जिन्हें देखनेसे ही अनुमान किया जा सकता था, कि उनके भीतर कुछ छिपाया गया है। परन्तु अन्दर महलका "दस्ताना" देखकर कोई ड्योढ़ीदार चूँ करनेका भी साहस न कर सका।

रमणी कुछ दूर जाकर मालती फूलोंकी झाड़ीमें छिपकर बैठ रही।

बहुत देर बीत गयी किसीकी इन्तजारमें वह जेलके फाटकके दरवाजेकी तरफ़ ताकती हुई बैठी रही। दो तीन घंटे तक उसी अवस्थामें निर्वाक निस्पन्द भावसे बैठे रहनेके बाद रमणी सहसा चौंककर गौरसे देखने लगी। उसने देखा कि दो आदमियोंने जेलके फाटकसे निकलकर बगीचेमें प्रवेश किया है। रमणी उठ खड़ी हुई। तीक्ष्ण दृष्टि बिल्लीकी तरह उन दोनों आदमियोंपर रखते हुए दाहिने हाथमें पिस्तौल और बायें हाथमें तलवार लेकर उठ खड़ी हुई।

वे दोनों मनुष्य-मूर्त्तियाँ धीरे धीरे उसके निकट पहुँची। उस रमणीने देखा कि हाथ पैर बँधे हुए एक हसनसाहब हैं, और दूसरा कौन था, जिसे वह पहचान न सकी।

दोनोंमें कोई बातचीत नहीं हुई, स्थान निर्जन देखकर उस आदमीने हसनसाहबकी हत्या करनेके लिये तलवार उठायी।

हसनसाहबने चौंककर कहा—"मारोगे क्या ? जरा समय दो, मैं खुदातालाको एक बार याद कर लूँ, और अपनी प्यारी बानूसे एक बार क्षमा मागलूँ।"

काराध्यक्षने क्षणभरके लिये तलवार नीची की और फिर उठायी ! इसी समय "गड़म" करके पिस्तौलकी आवाज हुई और साथ ही साथ काराध्यक्षकी तलवार उसके हाथसे छूटकर गिर पड़ी। इसी समय भूखी सिंहनीकी तरह वह रमणी कूदकर काराध्यक्षके ऊपर आ पड़ी, और बार बार तलवारके आघातसे बेधने लगी। कई एक भीषण आघातोंके लगते ही काराध्यक्ष भूतलशायी हुआ। उसने बहुत चेष्टा करके उठना भी चाहा, परन्तु पिस्तौलकी दूसरी गोलीसे रमणीने उसको सर्वदाके लिये चिरनिद्रामें सुला दिया।

काराध्यक्षके ठण्ढे हो जानेपर रमणीने हसनसाहबको निकट बुलाकर कहा—"चुपचाप मेरे साथ साथ चले आओ।"

हसनसाहब शृंखला बद्ध कैदीके वेशमें धीरे धीरे रमणीका अनुसरण करने लगे।

एक पोखरीके पास जाकर रमणीने कहा—"खड़े हो जाओ !"

हसनसाहब मन्त्र-मुग्धकी तरह खड़े हो गये। रमणीने पोखरीमें हाथ पैर और कपड़ेसे खूनका दाग छुड़ाया, फिर किनारेपर आकर हसनसाहबसे बोली—"मेरे संग आओ।"

हसनसाहबने फिर उसका पीछा किया। एक कृत्रिम पहाड़की आड़में लेजाकर रमणी खड़ी हो गयी और अपनी तलवारसे हसनसाहबके बन्धन काटने लगी। सभी बन्धन काटकर वह बोली—"तुम भाग जाओ, इस नगरमें मत रहो। मीरजुमला तुम्हारी खबर पानेपर तुम्हें मरवा डालेगा। नवाबके आनेपर फिर तुम्हारे दिन लौटेंगे, तब आना।"

हसनसाहबने घुटने टेककर गद्‌गद स्वरमें कहा—'तुम कौन हो?"

रमणी खिलखिलाकर हँस उठी और बोली "मैं चाहे जो होऊँ अब मेरा कहना मानों तुम भास्करके दलमें जाकर शरण लो।"

हसन—आप मेरी जीवन दात्री हैं, आपकी आज्ञा मुझे शिरोधार्य्य है, परन्तु फिर आपके कहाँ दर्शन मिल सकते हैं?

रमणी—आजकल जैसी अवस्था दिखलायी पड़ती है, उससे मालूम होता है, कि गोलकुण्डाके राजनीतिक आकाशमें शीघ्र ही तूफान उठेगा। और तूफानके बाद ही एक बड़ा परिवर्त्तन होगा। उस समय मैं आपको खोज लूँगी।

हसन—मैं किधरसे निकलूँ?

रमणी—आप सेनापति हैं, क्या इस दीवारको भी नहीं लाँघ सकते?

हसन—एक समय लाँघ सकता था, परन्तु अब अनाहार अत्याचारसे वह शक्ति नहीं रही।

रमणीकी आँखें आसुओंसे छलछला उठीं। उसने अपनी

कमरसे एक रस्सी खोलकर दे दी। हसनसाहब वह रस्सी लेकर दीवारके पास चले गये।

हसनसाहबके बाहर कूदजानेके बाद रमणी दस्ताना दिखलाकर बगीचेके फाटकसे बाहर निकल पड़ी।

काराध्यक्षकी मृतदेहकी गंध पाकर शशककुल अन्तिम संस्कारके लिये दौड़ आये। और तीक्ष्ण नख दन्तोंसे पहले डाक्टरी परीक्षा करने लगे।

# चौदहवाँ परिच्छेद

जिस समय जेलके फाटकके पास बगीचेमें हसनसाहबकी ऊपरोक्त घटना हो रही थी, उसी समय अन्तःपुरके उद्यानमें भी एक अद्भुत घटना हो रही थी।

राजप्रतिनिधि अमीर मीरजुमला बेगम नूरमहलका अनुग्रह पत्र पाकर बड़े आग्रह और उत्कण्ठाके साथ निर्दिष्ट समयकी प्रतीक्षा कर रहा था। धीरे धीरे सन्ध्या हुई, निर्दिष्ट समय भी निकट आया, समयोचित पोशाकसे सुसज्जित होकर मीरजुमला अन्तःपुरके फाटकके पास जा पहुँचा। फाटकका ड्योढ़ीदार उसे देखते ही कोर्निश करके एक किनारे खड़ा हो गया। मीरजुमलाने निःशंक चित्तसे उद्यानमें प्रवेश किया।

निर्मल मेघशून्य आकाशमें चाँदनी बिखरी हुई थी। खिले हुए फूलोंकी सुगन्धको चारो दिशाओंमें विकीर्ण करती हुई शीतल मन्द सुगन्ध बह रही थी, और पुष्करिणीके नीले जलमें चन्द्रमाकी किरणें मोतियोंके कणोंकी तरह चमक रही थीं। मीरजुमला उसी पुष्करिणीके किनारे जाकर एक शिला-खण्डपर बैठ गया। वहाँ उत्कण्ठाके साथ प्रतीक्षा करते हुए घन्टों बीत गये, परन्तु तो भी बेगमसाहबका शुभागमन नहीं हुआ। धीरे धीरे आधीरात होनेको आयी। मीरजुमलाके हृदयमें आशा और निराशाका घात प्रतिघात होने लगा। कभी सोचते कि लौट चलूं, बेगमसाहबने उन्हें धोखा दिया है,

कभी सोचते, किसी कारण वश विलम्ब हो गया होगा, अभी आवेगी। इसी प्रकार आग्रह और उत्कण्ठासे जब मीरजुमला अधीर हो रहा था, उसी समय उसने स्वच्छ चाँदनीमें देखा कि अन्तःपुरके फाटककी तरफसे सर्वांग आच्छादित एक रमणी मूर्त्ति उन्हींकी ओर अग्रसर हो रही है। मीरजुमलाका हृदय खुशीसे नाच उठा, वह बैठा था, खड़ा हो गया। उसने साफ देखा कि रमणीका सारा अंग बहुमूल्य वस्त्राभरणोंसे भरा हुआ है। निकट आकर रमणी खड़ी हो गयी। मीरजुमला इस समय अपनी कामाग्निसे बेसुध हो रहा था। उसने आगे बढ़कर कहा—"आपके लिये मर ही रहा था। थोड़ी देर यदि आप नहीं आती तो मुझे जीता नहीं पातीं। मैं आपके लिये पागल हो रहा हूँ।"

भरी मोटी आवाजमें रमणीने कहा—"मैं ही क्या होशमें हूँ? जबसे मैंने आपका पत्र पढ़ा है, तभीसे मैं आपके लिये मर रही हूँ। पत्र भेजकर पीछे मैं बड़ी चिन्तामें पड़ गयी थी. कि यह पत्र भेजा है, क्यों नहीं अभी बुलाकर अपने मन-साध मिटा ली।"

रास्तेका भिखारी जैसे आनन्दसे उन्मत्त हो जाता है। वैसे ही हसनसाहब रमणीकी बात सुन कर उन्मत्त हो उठा और थोड़ा और आगे बढ़कर बोला—"प्रिये, चन्द्रमुख खोलो, तृषित हृदय-चकोर रूप-सुधा पान करनेके लिये व्याकुल हो रहा है। आओ, इस कुंजमें चलकर बैठें।

रमणी—हाँ, चलिये।

पासहीके एक लतावितानमें दोनों प्रेमी और प्रेमिकाने

प्रवेश किया। लतावितानके भीतर तोरण द्वारके भीतरसे होकर चन्द्रमाकी किरणें निर्विघ्न भावसे प्रवेश कर रही थीं, जिसके कारण वितानके भीतर प्रकाश हो रहा था। बेगमसाहब वहाँ जाते ही अपना जूता पैजामा और आच्छादनीको एकबारगी शरीरसे उतारकर खड़ी हो गयी। सामने साँप देखकर जैसे कोई दस हाथ दूर हट जाय, वैसे ही मीरजुमला भी सामने खड़ी हुई बेगमसाहबको देखकर पीछे हट गया। यह कौन ? यह तो अपूर्व सुन्दरी नूरमहल बेगम नहीं; बल्कि उनकी काली कलूटी काफ्री बाँदी है।

मीरजुमला समझ गये कि बेगमने धोखा दिया है।

बूढ़िया बाँदी ठहाका मारकर हँसती हुई बोली—"प्राणनाथ! आओ, हृदय सिंहासन पर बैठो, मैं प्रेम करने आई हूँ, प्रेम करके ही लौटूँगी! चाहे तुम चाहो या न चाहो।

कुछ और भी पीछे हटकर मीरजुमलाने हांपते हुए कहा—"तुम कौन हो ? यहाँ क्यों आयी ?"

बुढ़िया—देखते ही तो हो, कि मैं एक बुढ़िया हूँ, तुम्हारे प्रेमकी परीक्षा करनेके लिये आई हूँ। ईश्वरने तुम्हें बल, बुद्धि और अतुल ऐश्वर्य्य दिया है, परन्तु एक ही मनुष्यको सब कुछ देना उनका अभिप्राय नहीं है, शायद इसलिये उन्होंने तुम्हें विवेक नहीं दिया है। मूर्ख! विश्वासघातक! जिस बादशाहने तुझपर सम्पूर्ण राज्यभार सौंप दिया है, उसीकी विवाहिता स्त्रीको हरण करनेकी तू स्पर्द्धा करता है। जा कुक्कुर! यहाँसे भाग जा। मन्त्रीमण्डलके पास यह खबर भेज दी गयी है, नवाबके लौटनेपर तेरे इस पापका विचार होगा।

अन्तिम साहसपर निर्भर करके मीरजुमलाने कहा—"वृद्धा खबरदार! किसके साथ तू बातें कर रही है, क्या मालूम है?"

वृद्धा—मालूम है, मैं अपनी मालकिन नूरमहलबेगम साहबके स्वामी नवाब बहादुर शाह कुतुबुद्दीनके गुलाम मीर-जुमलाके साथ बातें कर रही हूँ। प्रेमिक प्रवर! बुढ़ियासे-घृणा न करो, प्रेम करने आये हो प्रेम करो। यह बुढ़िया आकाशसे नहीं टपक पड़ी है, यह भी एक समय युवती थी। और जिसे इन्द्रिय विकाशके कारण माँ, बहन, स्वजन, कुटुम्बी का विचार नहीं है. उसके लिये बुढ़िया और युवती, सुन्दरी और कुरूपा सभी एक ही समान हैं। कुक्कुर आ, मैं तुझसे प्रेम करूँगी।

• मीरजुमला अपनी कमरसे तलवार खींच रहे थे, परन्तु निकट ही कई एक पहरेदारोंको खड़े देखकर अपनी अवस्थाको समझ गये, और वहाँ क्षणभर भी विलम्ब न करके प्राचीरको लाँघ बगीचेसे बाहर निकल पड़े।

सारी रात दुश्चिन्ता और आत्मग्लानिके तीव्र आघातसे बेचैन रहकर मीरजुमलाने उन्नींद भावसे रात काटी। सवेरे यथा समय वह दरबारमें सिंहासनपर जाकर बैठा, तब दर-बारके अधिकांश सभासदोंने उसे किसी प्रकारका आदर सम्मान न दिखलाया।

इससे मीरजुमलाको यह जानना बाकी न रह गया, कि बेगम साहबने सचमुच भण्डा फोड़ कर दिया है।

नवाब साहबके आनेपर अपनी विपद्की पूरी सम्भावना समझकर उसने तुरत ही दरबारमें घोषणा कर दी कि मैं कर्णाटक विजय करनेके लिये जा रहा हूँ। राज प्रतिनिधित्वकी पूरी क्षमता उसे होनेके कारण दरबारी उसको किसी प्रकार भी बाधा न दे सके। इसलिये उसी दिन वह अधिकांश सेना लेकर गोलकुण्डाकी सीमा पार कर गया।

# आवश्यक सूचना ।

जो सज्जन इस ग्रन्थके समान भास्कर-तीर्थ जैसे देश-भक्त डाकूका दिलचस्प और घटनावलियोंसे भरा हुआ बिचित्र वृतान्त पढ़ना चाहते हों, वह हमारे यहांसे आदर्श डाकू नामक ग्रन्थ मंगाकर पढ़ें ।

मूल्य ३) रेशमी जिल्द ३।।।)

पता—

## हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय,

पो० बक्स नं० ७०

ज्ञानवापी, बनारस सिटी ।

# अन्यायका प्रतिकार

## तृतीय खण्ड

## पहला परिच्छेद

गोलकुण्डाधिपति शाह कुतुबुद्दीन काश्मीरसे अपनी राजधानीको लौट रहे हैं। रास्तेमें मध्यान्हिक विश्रामके लिये एक पार्वतीय भूमिमें पड़ाव डाला है, वहाँसे गोलकुण्डा दो दिनकी मञ्जिलपर है। तम्बूके आस पास समतल भूमिका कहीं नामोनिशान नहीं है, चारों ओर पहाड़ ही पहाड़ दिखलायी पड़ते हैं। समुद्रकी तरङ्गोंकी तरह पहाड़ों की चोटियाँ उठती बैठती हुई बहुत दूरतक जाकर हिन्द चक्रवालके मेघमें परिणत हो गयी हैं। इन सभी पहाड़ोंमें पीर पाञ्चालके पहाड़की चोटियाँ सबसे ऊँची और मनोरम हैं।

शाह कुतुबने सुना कि पीर पाञ्चालकी चोटीके ऊपर एक भविष्यवादी सिद्ध संन्यासी रहते हैं। वह भूत, भविष्य, वर्तमान सब कुछ ठीक ठीक बता देते हैं। शाह कुतुबको भी बड़ी इच्छा हुई, कि संन्यासी से भेंट करके अपना और अपने राज्यका भविष्य जानना चाहिये।

शाह कुतुबने अपने एक मन्त्रीको संन्यासीके पास दर्शनकी प्रार्थना करनेके लिये भेजा।

संन्यासीने भी नवाबको दर्शन देना स्वीकार कर लिया,

और कहा—"नवाब बहादुरको अकेला ही भेज देना। बहुत फौज लश्करके साथ आनेसे मेरी शान्ति भङ्ग हो सकती है।"

"जो हुकुम" कहकर वह मन्त्री चला आया और संन्यासी की वह बात नवाबको सुनाकर बोला—"आपका अकेले वहाँ जाना अच्छा नहीं है। कौन जाने कोई विपद ही आ पड़े।"

शाह कुतुबने कहा—"मेरी कमरमें तलवार है, और तुम-लोग भी तो निकट ही रहते हो, कोई आशंका नहीं।"

नवाब घोड़ेपर चढ़कर संन्यासीकी मनोरम कुटियाके पास जा पहुँचे। कुटियाके दो छोटे छोटे घर फूलोंकी लताओंसे ढके हुए हैं, शाह कुतुबने एक पेड़की डालीसे घोड़ेको बांधकर कुटि-यामें प्रवेश किया। संन्यासीने उन्हें बड़े आदर अभ्यर्थनाके साथ बिठाया और आनेका कारण पूछा।

कुतुबशाहने मुस्कुराकर कहा—"काश्मीरसे लौट रहा था, रास्तेमें आपका नाम सुनकर दर्शन करके कृतार्थ होनेके लिये चला आया हूँ। और अपने राज्यके शुभाशुभके विषयमें भी जाननेकी इच्छा है। इस समय अन्तर और बहिर्विद्रोहसे मेरा-राज्य डांवांडोल हो रहा है।"

सन्यासीने मुस्कुराकर कहा—"राजा धर्मका अवतार होता है। धर्महीसे राज्यकी रक्षा होती है। जबतक आप धर्म च्युत नहीं होंगे, तबतक राज्य च्युत भी नहीं होंगे।"

इसके बाद संन्यासीने और भी कितनी ही धर्म और तत्वकी बातें कहीं परन्तु नवाबके कानोंमें वे धर्मकी बातें एक कानसे बैठकर दूसरे कानसे निकल गयीं। जब सन्ध्या समय वह संन्यासीसे विदा होकर कुटियासे बाहर आ घोड़ेपर चढ़ने ही

वाले थे, कि उनकी दृष्टि सन्यासीकी दूसरी कुटिया में जा पड़ी। उन्होंने देखा कि एक अपूर्व सुन्दरी युवती रमणी अपनी रूपच्छटासे पर्णकुटी उद्भासित कर रही है! बादशाहसे चार नजरें होते ही युवती संन्यासिनीने दरवाजा बन्दकर लिया। परन्तु नवाब बहादुर उस अपूर्व सुन्दरीको देखनेके लिये व्याकुल हो उठे, घोड़ेकी लगाम पकड़ बहुत देरतक वे वहीं खड़े रहे, परन्तु युवती संन्यासिनीने न तो दरवाजा खोला और न उनकी साध मिटी। लाचार, वह घोड़ेपर चढ़कर अपने खेमेमें लौट आये। आनेके साथ ही उन्होंने अपने मंत्रीको बुलाकर कहा—"मैंने संन्यासीकी पर्णकुटीमें एक अनिन्द्य सुन्दरी रमणी देखी है। और मैं उसे देखकर मुग्ध हो गया हूँ। मंत्री! जिस प्रकार हो उसे मंगवा भेजो। मैं उसके बिना जी नहीं सकता।"

मंत्री—वह रमणी कौन है, क्या कुछ मालूम हुआ है?

शाह—कैसे मालूम होगा? शायद संन्यासी उसे कहींसे लाकर उसका पालन पोषणकर रहा है; या उसीकी वह कोई होती है।

मंत्री! पहले संन्यासीसे प्रार्थनाकरके देखो, यदि वह रमणीको देना स्वीकार करले तो अच्छा ही है। नहीं तो उसे मार कर उसको उठा लाओ। मैं उसके लिये पागल हो रहा हूँ।

मंत्री—जहाँपनाह! इतने उतावले मत होइये। संन्यासी सहजमें ही कन्याको समर्पण कर देगा, ऐसा तो विश्वास नहीं होता। विशेष करके संन्यासी किस जात, किस धर्मका है, यह बिना जाने हुए उसकी कन्याको बेगम बनाना भी उचित नहीं है। इसके अलावे आप संन्यासीकी हत्या करनेकी बात कहते हैं!

आप तो जानते ही हैं, कि यह पीर पाञ्चालका पहाड़ आपके राज्य और काश्मीर नरेशके राज्यका सीमान्त प्रदेश है। आप अभी काश्मीर नरेशसे संधि करके लौटे आ रहे हैं। इस समय यदि आप साधु संन्यासीकी हत्या करके काश्मीरके हिंदू राजाको असन्तुष्ट करें तो वे बहुत अनर्थ खड़ा कर सकते हैं। इस समय जब कि गोलकुण्डाकी राजनितिक अवस्था अत्यंत शंकाजनक हो रही है, मित्रको शत्रु बनाना भी बुद्धिमानीका काम नहीं है।

कुतुबुद्दीनने उत्तेजित होकर कहा—"मन्त्री! मुझे क्या डर दिखलाते हो? यदि मेरा सारा राज्य भी नष्ट हो जाय तो भी कोई चिन्ता नहीं, परन्तु जिस प्रकार हो उस युवतीको प्राप्त करना ही होगा।"

मन्त्री—बहुत अच्छा, कौशलसे काम लीजिये, पहले राजधानीमें लौट चलिये वहाँ चलकर संन्यासीको किसी बहाने बुला भेजियेगा। वहाँ जानेपर कई दिन अटका रखा जायगा। इसी बीचमें पालकी कहार भेजकर रमणी को मँगा लीजियेगा, और अपनी बेगम बनाकर उसे अन्दर महलमें ठूँस दीजियेगा, इसके बाद चाहे सन्यासीको छोड़ दिया जायगा, या किसी बहाने मार डाला जायगा।

नवाबको भी यही युक्ति पसंद आयी और उन्होंने सवेरा होते ही खेमा उठवाकर राजधानीके लिये यात्रा की।

# दूसरा परिच्छेद

उपरोक्त घटनाके दो दिन बाद शाहकुतुब राजधानी लौट आये। उनके आगमनके उत्सवमें सारे नगरमें आनन्दकी वधाइयाँ बजने लगीं, घर घर आलोक मालायें सजायी गयीं। और नाच-गानकी धूमसे सारा नगर गम-गमा उठा, परन्तु कुतुबशाहके मनको इन बाह्याडम्बरोंसे जरा भी तृप्ति न हुई। उनका हृदय तो उसी गिरिललनाके लिये व्याकुल हो रहा था। इधर राज्यकार्य्य की विशृङ्खलता और मीरजुमलाके विश्वासघातकी बात सुनकर वह और भी विचलित हो उठे? इस दुस्समयके वक्त हजारोंकी संख्यामें सेनाओंको अपने साथ ले भागना और दरबारियोंका उस कार्य्य में किसी प्रकारका बाधा न देना उन्हें और भी मर्मान्तिक कष्ट देने लगा। उन्होंने प्रतिज्ञा की कि मीरजुमलाका पता लगते ही वे उसको शूलीपर चढ़वा देंगे; परन्तु इस समय मीरजुमला कहाँ था, कि वे उसे शूली पर चढ़ाते। सारे क्रोधों और दुःखोंके बारी बारीसे अपना काम करके चले जानेपर पीर पाञ्चालकी सन्यासिनीकी मधुर मुखच्छवि फिर उनके हृदय में अङ्कुश मारने लगी। उन्होंने तुरत एक पत्र लिखकर एक चतुर दूतके द्वारा संन्यासीके पास भेज दिया।

कई दिनोंके बाद संन्यासी दूतके साथ गोलकुण्डामें आ पहुँचे। बादशाहने उन्हें बड़े आदर सम्मानके साथ ग्रहण किया, और उनके रहनेका उचित प्रबन्ध कर दिया। परन्तु साथ ही

उन्होंने यह भी प्रबन्ध कर दिया, कि संन्यासी अपनी इच्छानुसार चला न जाये।

एक एक करके कितने ही दिन बीत गये, परन्तु फिर संन्यासीसे भेंट मुलाकात करनेके लिये नवाब न आये। संन्यासी वहाँसे उठकर चले जानेके लिये तैयार हुआ; परन्तु पहरेदारों ने उसे रोक कर कहा—"बादशाहका हुक्म पाये बिना हमलोग आपको छोड़ नहीं सकते ?"

संन्यासी अब बड़ी चिन्तामें पड़ गया, अब उसके मनमें यह भी खटका लगा, कि नवाबने किसी कारणवश मुझे नजर बन्द तो नहीं कर रखा है ? क्योंकि उसने मुझे बुलाया था, मुझसे तत्त्वोपदेश लेनेके लिये, परन्तु इतने दिन बीत गये एक दिन भेंट करने भी नहीं आया ! हो न हो, अवश्य ही उसके मनमें कोई बुरा मतलब है, इस समय अपनी पालिता कन्याका स्मरण होते ही उसका कलेजा धक हो गया। उसने तुरत एक पत्र लिखकर नवाबके पास भेज दिया, कि "मेरी साधनामें यहाँ अड़चन पड़ रही है, मुझे चले जानेके लिये हुक्म मिले।"

संन्यासीका पत्र पाकर शाहकुतुबने सोचा कि इतने दिन में मेरे अनुचर अपना कार्य्योद्धार करके लौट रहे होंगे, संन्यासी अब वहाँ जाकर क्या कर सकता है। इसलिये उसने संन्यासी के उत्तरमें लिख भेजा,—"आप जब चाहें जा सकते हैं, तबियत खराब हो जानेके कारण मैं आपसे भेंट नहीं कर सका हूं, इसके लिये क्षमा करेंगे। जिस कार्य्यके लिये मैंने आपको कष्ट दिया था, मेरे दुर्भाग्यवश इस बार न हो सका, तबियत अच्छी होनेपर फिर कभी बुलाऊँगा ? मैं अपने खजांचीको

हुक्म देता हूँ, वह आपके लिये एक हजार मुद्रा पूजाके रूपमें भेंट करेगा।"

पत्र पाकर संन्यासीने सोचा—"यही बात है, कुतुबद्दीनके मनमें कोई बुरी बात नहीं थी। तबियत खराब होनेसे वह नहीं आ सका है।"

संन्यासीने अब अधिक बिलम्ब नहीं किया, उसी दिन खजाञ्चीसे रुपये पा, पहरेदारोंको नवाबका हुक्म दिखला, राज-महलसे बाहर निकल पड़ा।"

# तीसरा परिच्छेद

इधर संन्यासी जब गोलकुण्डा चला आया उसी समय एक दिन उसकी पालिता कन्या गिरिसुन्दरी दिलजान दो पहरके समय आश्रमके पास वृक्षोंके भीतर भ्रमण कर रही थी। सामने ही एक निर्मल सलिला गिरि-नदी तुषार-मण्डित शैलमालाके भीतरसे होकर कलकल छलछल ध्वनि करती हुई, हिलती डुलती, नाचती, कूदती, बहती चली जा रही थी। और उन्नत-शिर-शैल-शिखा मानों प्रकृतिके उस कोमल दर्पणमें अपने तुषार-मण्डित स्फीत बदनका प्रतिबिम्ब देख रहे थे, पक्षी निर्मल जलराशिमें नाच कूद कर अठखेलियाँ कर रहे थे।

गिरिसुन्दरी दिलजान घूम फिरकर नदीके किनारे आ एक शिलाखण्ड पर बैठ गयी और कुछ देरतक क्रीड़न शील पक्षियोंकी तरफ देखती रहकर उसने एक गाना शुरू किया।

गीत समाप्त करके दिलजान उठही रही थी कि उसने पीछे फिरकर देखा कि भीषणाकार कितने ही मनुष्य उसे घेरकर खड़े हैं। पास ही एक पालकी भी रखी है, इस निर्जन निस्तब्ध स्थानमें ये कहाँ से आये, क्यों आये कुछ भी न समझकर दिल-जान हक्की बक्कीसी खड़ी रह गयी।

ये ही शाहकुतुबके भेजे हुए चर थे, बहुत देरसे वहाँ पालकी रखकर दिलजानकी खोज कर रहे थे। अभी गानेकी आवाज सुनकर सभी दौड़ आये थे, परन्तु जबतक गाना बन्द नहीं हुआ था, मस्त भावसे उस कोकिलकण्ठीका गायन सुन

रहे थे। गायनके समाप्त होते ही जब दिलजान उठकर चली तब मुसलमानोंने आगे बढ़कर पकड़ लिया, दिलजान कितना ही रोई, चिल्लाई, हाथ पैर पड़ी, परन्तु उन्होंने एक न सुनी और उसको पालकीमें रखकर खिड़की बन्द कर दी, और चार कहार अब उसे उठाकर भाग चले।

एक चरने दिलजानको चुप करानेके अभिप्रायसे कहा—"पगली, रोती क्यों है ? हमलोग तेरे भलेके लिये ही लेजा रहे हैं। चल ! गोलकुण्डाकी बेगम होगी ? इससे बढ़कर खुशीकी बात क्या हो सकती है ?"

दिलजान और भी चिल्लाकर रो उठी, और रोती हुई बोली—"तुम लोगोंके पैरों पड़ती हूँ, मुझे छोड़ दो। मैं बेगम बनना नहीं चाहती। मेरा सर्वनाश न करो। मेरे दादाको आने दो, जो वह कहें सो करना।

परन्तु उसकी बात कौन सुनता था। वे सभी दिलजानको उठाकर ले चले।

एक पहाड़के नीचे पेड़की छाँहमें तीन पथिक युवक विश्राम कर रहे थे, उनके निकटसे होकर जब पालकी जाने लगी तब उनमेंसे एक युवकने कहा—"तुम कौन हो, इस रोती हुई बालिकाको क्यों लिये जा रहे हो ?"

कहारोंने कुछ भी जवाब नहीं दिया। एक सिपाहीने कहा—"तुम अपना काम देखो हमारा जमाखर्च लेनेवाले तुम कौन होते हो ?

युवक—मालूम होता है, तुमलोग इस लड़कीको चुराये लिये जा रहे हो।

सिपाही—चुप रह, सूअर !

इसी समय दिलजान चिल्लाकर रो उठी, और बोली—"ये लोग मुझे जबर्दस्ती उठाये लिये जा रहे हैं। मुझे यदि कोई बचा सके तो बचाओ।

युवकने अपने साथियोंकी तरफ देखा। उन्होंने भी आँखसे इशारा किया। शाही सिपाही भी वहाँ ठमककर खड़े हो गये थे, परंतु जब उन्होंने देखा कि युवक छेड़छाड़ करना नहीं चाहते तब वे आगे बढ़े, परंतु उनके कुछ दूर जाते ही तीन युवक खड़े हुए और तीनोंने अपनी अपनी बंदूकोंको सम्हालकर तीनों सिपाहियोंको उनका लक्ष्य बनाया। क्षण ही भरमें भीषण गर्जन करती हुई बंदूकोंकी गोलियाँ सिपाहियोंकी पीठको छेदकर निकल गयी। तीन सिपाहियोंके गिरनेपर बाकी सिपाही फिरकर खड़े हो गये; किंतु इतनी देरमें उन तीनों युवकोंने और भी तीन सिपाहियोंको सुला दिया। सिपाही अब सिर्फ छः रह गये, उन्होंने अबकी बार बंदूकें सम्हालकर युवकोंपर निशाना लगाया; परंतु युवक तुरत वृक्षोंकी आड़में छिप गये। सिपाहियोंने सोचा, ये पहाड़ी डाकू हैं, यदि इनके और साथी आ जायें तो बड़ी मुश्किल होगी। इसलिये यहाँसे भाग चलना ही अच्छा है। उनमेंसे एकने कहारोंको पुकारकर कहा—"तुम पालकी लेकर भाग चलो, हमलोग, थोड़ी देर यहाँ खड़े रहते हैं।"

कहारोंने वैसा ही किया। वृक्षोंकी आड़से एक युवकने यह देखकर अपने साथियोंसे कहा—"भाइयों! औरतको लेकर ये लोग भाग ही गये, हमलोगोंका परिश्रम व्यर्थ हुआ।"

एक दूसरेने हँसकर कहा—"क्यों मालिक! बहुत दुःख

होता है, क्या ? मालूम होता है, रुलाईमें भी कोई प्रेमका जादू है।"

युवकोंमें एकका नाम मालिक था। वही पहलेसे उद्योगी हो रहा था, उसने मुस्कुराकर कहा—"घरमें भूंजी भांग नहीं .....औरतकी रक्षा सभीको करनी चाहिये, देखो ये लोग भाग ही गये।"

"अच्छा आओ ! नहीं भागने पावेंगे।"

अब तीनों युवक घुटने टेककर वृक्षोंकी आड़से होकर दौड़ते हुए डोलीके पास आ पहुँचे और वहाँ पहुँचते ही उन्होंने अपनी बंदूकोंसे तीन सिपाहियोंका खात्मा कर दिया और बाकी तीनको उन्होंने तलवारसे आक्रमण करके भूतल शाही किया।

कहारोंने डोलीको लेकर निकल भागनेका कोई उपाय न देख, चिल्लाकर कहा—"हुजूर ! यदि आपलोग हमपर गोली छोड़ेंगे तो हमलोग डोलीको यहीं पटककर भाग जायँगे। और नहीं तो हम डोली यहाँ रखते हैं। यहाँ आकर आपलोग जो कहना चाहें कहिये।"

मालिक—"डरो मत, हमलोग तुम्हें नहीं मारेंगे ! डोली रखो हम आते हैं।"

कहारोंने डोली रख दी। युवकोंके निकट आनेपर कहारोंने गिड़गिड़ाकर कहा—"हुजूर ! हमलोगोंका दोष नहीं है, हमलोगोंका पेशा ही है, कहाँरी करना। हमें जो बुलाता है, उसीके यहाँ जाते हैं। अभी आपलोग कहिये तो यह डोली आपके घर पहुँचा आते हैं।

युवकने कहा—"हमलोगोंके घर डोली पहुँचानी नहीं होगी जहाँसे ले आये हो वहीं ले चलो।"

कहार—जो हुक्म, चलिये !

मालिकके साथियोंने कहा—"हमलोग इतना समय नहीं खो सकते। हमलोग आगे चलते हैं, तुम इस औरतको इसके घर पहुँचाकर आना।"

साथियोंकी बातें सुनकर मालिकको बहुत दुःख हुआ। ऐसे साथियोंका साथ छोड़ना पड़ा; परंतु क्या करता ? स्त्रीकी रक्षा करना भी तो उसका धर्म था। इसलिये मजबूर होकर अपने साथियोंका साथ छोड़कर पालकीके साथ उसे लौटना पड़ा।

# चौथा परिच्छेद

कहारोंने जिस स्थानसे दिलजानको उठाया था, वहाँ डोलीको लेजाकर रख दिया, और मालिकसे कहा—"यहाँसे हमलोग औरतको ले गये थे।"

मालिकने दिलजानको पुकार कर कहा—"देखो तो यही तुम्हारा घर है ?"

दिलजानने डोलीसे मुख बाहर करके देखकर कहा—"हाँ, यही है।"

डोली कहारोंके कंधेसे जमीनपर उतरी ही थी, कि दिलजान उसमेंसे निकल पड़ी और मालिकको कृतज्ञता भरी दृष्टिसे देखकर कुटियाकी तरफ दौड़ चली।

उस समय सन्ध्या हो गयी थी। सूर्य्यदेवकी सुनहली किरणें पर्वत-शिखरको अरुण रागसे रंजित कर रही थी। पार्वतीय पुष्पोंका सौरभ शीतल मंद सुगंध वायुसे दिकवि-दिक प्रवाहित हो रहा था। दिलजान एकबारगी अपने कुटीर-द्वारके पास जा, मुँहफेरकर खड़ी हुई, मालिक तृषित चकोरकी तरह उस अपूर्व सुन्दरी युवतीकी रूप-सुधा पान करने लगा। सुन्दरी युवतीको देखते रह इतना तन्मय हो गया, कि हिलने डोलनेका नाम नहीं, जहाँ खड़ा था, वहीं खड़ा रह गया।

बहुत देरके बाद आपेमें आकर बोला—"यहाँ तुम्हारा कौन रहता है ?

बीणाविनिन्दित स्वरमें दिलजानने कहा—"मेरा दूसरा कोई नहीं है। एक बूढ़े दादा फकीर हैं, दोनों ही इस पहाड़पर रहते हैं।

मालिक—तुम्हारा नाम क्या है ?

दिलजान—दिलजान।

मालिक—बिल्कुल ठीक नाम है। तुम्हारे दादा कहाँ गये हैं ?

दिलजान—कई दिन हुए, वह राजदरबारमें गये हैं।

मालिक—कबतक आयेंगे ?

दिलजान—कोई, ठीक नहीं। आज ही आ सकते हैं।

मालिक—मेरा नाम मालिक है। मैं विदेशी हूं आज ही चला जाऊँगा। तुम अकेले कैसे रहोगी ?

दिलजान—पहले तो अकेले ही थी, कोई डर भय नहीं था, परंतु आज अकेले न रह सकूंगी। जैसे आज आपने डाकुओंके हाथसे मुझे बचाया है, वैसे ही दया करके दादाके आनेतक आप यहाँ रह जायँ तो बहुत अच्छा हो। आप मुझे अकेली छोड़कर न चले जायँ।

इतना कहकर दिलजानने करुणा-दृष्टिसे मालिककी तरफ देखा। मालिकके पैर तो योंही जमकर खड़े हो गये थे, तिसपर रह जानेकी करुण-प्रार्थना ! उन्होंने तुरत प्रार्थना मंजूर कर ली और कहा—"अच्छा यही होगा। तुम्हारे दादाके आनेपर ही जाऊँगा।"

अब दिलजान घरके भीतर चली गयी, और फलफूल लाकर मालिकको खानेके लिये आग्रह किया। दिलजान की यह प्रार्थना भी पूरी हुई।

रात हुई आकाशमें चांदनी छिटकी। दोनों युवक युवतियों-में कितने ही सुख दुःख और हँसी मजाक की बातें हुई। अन्तमें मालिक दिलजानको कुटियामें सोनेके लिये भेजकर स्वयं दर-वाजे पर जाकर पहरा देने लगा।

रातके पीछले पहरमें उषाकी सुनहली आभासे सारा पर्वतीय शिखर हँस रहा था, उसी समय पर्ण कुटीके दरवाजेपर एक दीर्घाकृति संन्यासी आ खड़ा हुआ। दरवाजेपर मालिकको देखते ही उसने कहा—"तुम कौन हो ?"

मालिकने तलवार निकालकर कहा—"निराश्रया रमणीका सहायक।"

जो आया था, वह कुटियाका मालिक संन्यासी था। उसने कहा—"मेरी ही यह कुटिया है। मेरे हृदयकी तारा दिलजान क्या कुटियामें है, बता सकते हो ?"

दोनोंकी बातोंसे दिलजानकी नींद टूट गयी। वह धड़धड़ा कर बाहर निकल आयी और अपने दादाके शरीरसे लिपटकर बोली—"दादा, इन्होंने ही मेरी जान बचायी है।"

इसके बाद दिलजानने एक एक करके अपनी सारी दुःख कहानी अपने दादाको कह सुनायी। संन्यासी सब सुनकर बोला —"असहायाकी रक्षा करके तुमने बड़े पुण्यका काम किया है। ईश्वर तुम्हें इसका बदला देंगे।"

इधर सवेरा हुआ। मालिक जानेके लिये तैयार हुए।

संन्यासीने पूछा—तुम्हारा नाम क्या है ?

मालिक—मेरा नाम मालिक है, देश परसिया है। गोल-कुण्डाके दरबारमें मेरे बड़े भाई अमीर मीरजुमला प्रधान कर्म-

चारी हैं। उन्हींके पास जाता हूँ, यदि वह राज-दरबारमें मेरी कोई नौकरी लगा दें।

संन्यासी—तुम भूलसे भी किसीसे मत कहना, कि तुम्हींने दिलजानको छुड़ाया है। क्योंकि नवाबके आदमी ही इसे ले जानेके लिये आये थे, यदि किसीको मालूम हो जायेगा कि तुम्हींने गोलकुण्डाके सिपाहियों को मारकर दिलजानको छीन लिया है, तो तुम्हारी जान तो जायेगी, परन्तु तुम्हारे भाईकी भी खैर नहीं होगी, जाओ तुम्हारे भाई जैसा कहें, वैसा ही करना।

मालिकके चले जाने की बात सुनकर दिलजानने कहा—"कल उन्हें बड़ा परिश्रम करना पड़ा है, आज यहाँ भोजन विश्राम करके कल जाते तो अच्छा होता।"

मालिकको इसमें कुछ भी आपत्ति नहीं थी, परन्तु संन्यासी-ने ऐसा होने नहीं दिया, बोले—"मालिक! तुम चले जाओ। यहाँ मेरी शान्ति भङ्ग हो सकती है।"

इसलिये मालिकको बाध्य होकर जानेके लिये तैयार होना पड़ा। जाते समय उन्होंने करुणा भरी दृष्टिसे दिलजानकी तरफ देखा, दिलजान भी भरी आवाजमें बोली—"मालिक! क्या फिर कभी नहीं आओगे?"

वाष्परुद्ध कण्ठसे मालिकने कहा—"एक दिन तुम्हें देखनेके लिये अऊँगा।"

"अच्छा भूलना मत" कहकर दिलजान घरमें चली गयी। बूढ़े संन्यासीने देखा कि दिलजानके आयत नेत्रोंमें आँसुओंकी नदी उमड़ी है।

—***—

# पाँचवाँ परिच्छेद

इस समय गोलकुण्डाधिपतिके चारों तरफ धधकती हुई आगकी ज्वाला है, जिसमें उनकी शान्ति, सुख, आमोद, आह्लाद सब कुछ जलकर खाक हो रहा है। मीरजुमलाकी याद पड़ते ही उनके सारे शरीरका खून खौल उठता है। इस समय यदि वह मिले तो उसे टुकड़े टुकड़े करके काट डालनेसे भी उनकी क्रोधाग्नि शान्ति नहीं हो सकती। उसीकी सलाहसे उसीके अहङ्कारसे औरङ्गजेबको कर देना बन्द किया गया था। उसीके षड़यन्त्रसे सेनापति हसनसाहब लाञ्छित और अपमानित करके पागल-खानेमें ठूस दिये गये थे। न जाने वहाँ उनको किस प्रकारसे लापता करवा डाला है।

इस समय आधेसे अधिक सेना लेकर राज्य छोड़कर भाग गया है। इस समय यदि औरङ्गजेब राज्यपर आक्रमण करे तो राज्य रक्षाका कोई भी उपाय नहीं है। यह सब तो है ही, इसके ऊपर गिरिसुन्दरीके बिना भी मन चैन नहीं लेता। उसे छल कपटसे भगानेकी चेष्टा की गई, उसमें भी मुँहकी खानी पड़ी। एक साधारण लौंडा सभी सिपाहियोंको मार पीट कर औरतको भगा ले गया।

शाह कुतुबने एक दिन अकेले मन्त्रीको मन्त्रणा-गृहमें बुलाकर कहा—"मन्त्रीवर! अमीरने तो मुझे पूरा धोखा दिया है। इस समय किला सेनासे ख़ाली है, अब रक्षाका क्या उपाय सोचते हो?

मन्त्री—जहाँपनाह ! हमलोग पहलेहीसे सब कुछ जानते थे, सेनापति हसनसाहबने एक दिन इसीका आभास किया था। जिसके कारण वह लाञ्छित अपमानित और उसीके षड़यन्त्रसे निहत भी हुए हैं।

कुतुब—अब जले पर निमक क्यों छिड़कते हो, बचनेका कोई उपाय सोचो।

मन्त्री—एक चतुर घोड़सवार दूतको दिल्ली दरबारमें भेज दिया जाय, इस समय शाहजहाँ से नई सन्धि करनेके सिवा दूसरा कोई उपाय नहीं है।

कुतुब—सो तो हुआ, भीतरी षड़यन्त्रके बारेमें क्या सोचते हो ?

मन्त्री—भीतर जो कुछ हो रहा है, भास्करतीर्थके बल भरोसे पर हो रहा है, अमीर अब चला गया है। अब प्रजापर अत्याचार उत्पीड़न न होनेकी ही सम्भावना है, अत्याचार न होने पर भास्करतीर्थ कुछ भी न बिगाड़ेगा।

कुतुब—क्या भास्करको पकड़नेका कोई उपाय नहीं है ?

मन्त्री—पहले शाहजहाँके साथ सन्धि होने दीजिये, फिर इसकी चेष्टा की जायगी।

कुतुब—मन्त्री !

मन्त्री—हुजूर !

कुतुब—वह गिरिसुन्दरी क्या नहीं मिल सकती, उसके लिये मैं अधीर हो रहा हूँ। इसके सिवा उसके लिये हमलोगों को अपमानित भी होना पड़ा है।

मन्त्री—गुप्त विभागके दारोगाको हुक्म दिया जाय, वे संन्यासी, युवती और उस लौंडेको पकड़ लायें, जिसने सिपाहियोंको मारा था।

मन्त्रीके परामर्शानुसार सभी कार्य्योंका प्रबन्ध करके उस दिनके लिये शाह कुतुबने दरबार भङ्ग किया।

# छठाँ परिच्छेद

अमीर मीरजुमलाका छोटा भाई मालिक गोलकुण्डा आ पहुँचा है, उसने बड़ी आशा लेकर गोलकुण्डामें पदार्पण किया है। उसने सोचा, उसका बड़ा भाई अच्छी नौकरी लगा देगा, परंतु जब उसने सुना कि मीरजुमला वहाँ नहीं है, और उसके नामसे सारे दरबारमें सनसनी फैली हुई है। तब वह अपना परिचय तक दे देनेका साहस न कर सका। उलटे पैर तुरत राज-दरबारसे लौट पड़ा।

गोलकुण्डाके पेशकार मीरजुमलाके अन्तरंग मित्र थे, वही किसी प्रकार मालिकका परिचय पाकर उसे अपने घर ले गये और दो तीन दिनतक अपने घर छिपाकर रखा। अन्तमें उसे यह सलाह देकर भेज दिया, कि तुम गोलकुण्डासे भाग जाओ। नवाबको यदि मालूम हो जायगा, कि तुम उसके भाईहो, तो तुम्हें भी वहीं कैद कर लेंगे। दूसरे मीरजुमलापर वह बहुत बिगड़े हुए हैं।

मालिकने भग्न हृदयसे कहा—मैं नौकरीकी आशासे यहाँ आया हुआ था, अब क्या करूँ, कहाँ जाऊँ, कुछ भी निश्चय नहीं कर पाता ?

पेशकार—मैं एक जौहरीके नाम पत्र लिख देता हूँ, तुम उस के पास जाओ, कोई काम दे देगा।

मालिक—खैर, वही दीजिये, फिर भैय्यासे मुलाकात होने पर जो कहेंगे वैसा करूँगा।

पेशकार—शीघ्रही तुम्हारे भैया गोलकुण्डाके नवाब होंगे, ऐसा ही मालूम होता है।

अमीर मीरजुमला पेशकारके पास अपने षड़यन्त्रकी बातें लिखकर भेज रहे थे। पेशकार भी गोलकुण्डाकी गुप्त बातें गुप्तचरों द्वारा मीरजुमलाके पास पहुँचा रहे थे।

पेशकारका पत्र लेकर मालिक उसी दिन उनके यहाँसे विदा हुआ और एक सरायमें खानपान करके उसने सोचा, कि नौकरी कर लेनेपर फिर छुट्टी मिलना मुश्किल हो जायगा। आज पन्द्रह दिन हो गये एकबार प्यारी दिलजानी को देख आना चाहिये।

मालिक उसी दिन पीरपाञ्चाल पहाड़के लिये रवाना हुआ और दो दिनके बाद ही वहाँ पहुँच गया, परंतु संन्यासीकी सूनी कुटिया देखते ही उसका कलेजा धक्क हो गया, क्योंकि न तो दिलजानी ही वहाँ गूँज रही थी और न संन्यासी ही समाधिमें मग्न बैठा था। मालिकने तिल तिल करके उन्हें खोजा परंतु पता न लगा। वह निराश होकर लौट ही रहा था, कि इतनेमें ही उसने देखा कि दो आदमी कुटियाके इधर उधर घूम फिर रहे हैं। जिनमें एक तो डोलीके उन कहारोंमें से है, जो दिलजानको उठा ले जानेके लिये गोलकुण्डासे आया था, मालिकने उसे पहचानकर पूछा—"क्यों भगत ? इस बार किस मतलबसे आये हो ?"

कहार कुछ कहने ही वाला था, कि उसका साथी जो गोलकुण्डाका गुप्तचर था बोला—"गोलकुण्डाके नवाबका कोई काम पूरा न कर सकनेके कारण इस बेचारेको फाँसीका हुक्म हुआ है,

फरमान निकलनेके पहले ही यह भागकर मेरी शरण आया है। मेरा घर काश्मीर है, वहीं इसको ले जा रहा हूँ। रास्तेमें सुना है, कि इस पहाड़पर एक बड़े ज्योतिषी संन्यासी रहते हैं। इसलिये आया हूँ कि उनका दर्शन करता जाऊँ; परन्तु यहाँ तो देखता हूँ कि कोई भी नहीं है।

मालिक—मैं भी उन्हींको खोज रहा हूँ। मालूम होता है, कि वे यहाँसे उठकर कहीं दूसरी जगह चले गये हैं।

दोनों आदमी थोड़ी देरतक इधर उधर देखकर चले गये, जाते समय कहारने मालिककी तरफ इशारा करके अपने साथी से कहा—"यही वह युवक है जिसने हमलोगोंसे औरतको छुड़ा लिया था।"

चरने तुरत मालिकका फोटो उतार लिया और एक तरफ को चला गया। मालिक भी निराश हृदय लेकर गोलकुण्डा लौट चला।

# सातवां परिच्छेद

दोपहरका समय था, मध्याह्नकालीन भोजनके उपरान्त दारोगा रामकृपालसिंह जनानेमें एक आराम कुरसी पर लेटे हुए विश्राम कर रहे थे। बहन लक्ष्मीबाई बगल में बैठी पंखा झल रही थी बातों ही बातों में लक्ष्मीने पूछा—"आज ही जाओगे ?"

दारोगा—हाँ, अभी।

लक्ष्मी कबतक लौटोगे ?

दारोगा—पता लगाकर ही लौटूँगा, चाहे जब भी हो।

लक्ष्मी—किसका पता, भैया ?

मालिकका फोटो लक्ष्मीके सामने रखकर दारोगा साहबने कहा—"इसी अजनबी युवकका।"

लक्ष्मीने फोटो देखकर कहा—चेहरा तो बहुत शान्त, सरल मालूम होता है। परन्तु क्या यह भी डकैती करता है ?

रामकृपालसिंहने मुस्कुराकर कहा—नहीं लक्ष्मी, डाकू नहीं है। एक स्त्रीको बादशाहके आदमी जबर्दस्ती उठा लाना चाहते थे। इस युवकने बाधा देकर औरत को बचा लिया है, यही उसका अपराध है।

लक्ष्मी—इस जवानने तो पुण्यका ही काम किया है। इसीको पकड़नेके लिए तुम इतनी सजधजके साथ जा रहे हो !

दारोगा—हाँ, और उस औरतको भी पकड़ना है। उसका एक बुजुर्ग साधु है, उसको भी पकड़ना है।

लक्ष्मी—यह तो बड़ा अत्याचार है। भैया, तुम मत जाओ। नवाब चाहें तो किसी दूसरेको भेजें।

दारोगा—नवाबके जासूसी-विभागका मैं ही सबसे बड़ा अफसर हूं। खोज ढूंढ़के सभी काम मुझे ही करवाने पड़ते हैं। मैं जब नौकरी करता हूं, तब पाप-पुण्यका विचार करके क्या होगा, जो मालिकका हुक्म मिलेगा, वह करना ही पड़ेगा।

लक्ष्मी—अच्छा इन लोगोंको पकड़कर तुमलोग क्या करोगे ?

दारोगा—फांसी देंगे और क्या करेंगे।

लक्ष्मी—भैया, मैं तुम्हारे पाँवों पड़ती हूं, तुम ऐसा घृणित काम न करो, अभी नौकरीसे इस्तीफा दे दो। हमलोग भूखों ही मरेंगे सोभी कबूल है।

रामकृपालने कुछ उत्तर न दिया मुस्कुराते हुए उठकर बाहर चले गये।

एक तरफ से वह गये, दूसरी तरफसे ताराबाईने मन्द मन्द मुस्कुराते हुए कमरेमें प्रवेश करके कहा—"अर्जी नामंजूर।"

लक्ष्मीने एक ठण्डी सांस भरकर कहा—"भौजी, क्या तू बता सकती है, कि धनी और गरीब दुर्बल और निर्बलका इतना अन्तर क्यों है ? धनी और शक्तिशाली मनुष्य यदि किसी पर अत्याचार करना चाहता है, और उसमें यदि कोई साधु पुरुष बाधा देता है तो वह तुरत ही दण्डित होता है। और यदि कोई आदमी ठीक वही अपराध करता है, जो शक्तिशाली मनुष्य नित्य करता है, तो वह दण्डका भागी समझा जाता

है। इस प्रकारके भेद भावसे धर्मका विचार बिल्कुल फजूल है। जो बलवान कर सकते हैं, वही धर्म और पुण्य है और जो निर्बल करते हैं, वही पाप और अत्याचार है।

तारा—वाह! वाह! तुम तो बड़ी दार्शनिक हो गयी हो। इस सिद्धान्तको परिवर्द्धित करके एक दर्शन शास्त्र ही लिख डालो! जिससे षट्दर्शनसे सप्त दर्शन हो जाये।

लक्ष्मी—सो तो पीछे लिखती रहूंगी, पहले यह तो बताओ कि यह सिद्धान्त करना ठीक है, या नहीं?

तारा—ठीक इसलिये नहीं है कि कूप मण्डूक वत् यह परिमित अनुभव पर अवलम्बित हो। आजकल अपने राजाके राज्यमें जो बात तुम देख रही हो उसीको चिरस्थायी और सर्वव्यापी नियम समझकर ऐसा अनुमान खड़ा कर रही हो। परन्तु वास्तवमें न तो सर्वदा ऐसी अवस्था ही रहती है, और न आज ही सर्वत्र ऐसी अवस्था है। आज भी कितने राजा हैं, जो न्याय करते समय दूधका दूध और पानीका पानी कर देते है। और कितनी ऐसी प्रजायें हैं, जो न्यायके लिये जान दे देती है, परन्तु तो भी अन्यायको प्रश्रय नहीं देती। देखो लक्ष्मी! शरीर बेचा जा सकता है, परन्तु विवेक नहीं बेचा जा सकता, क्योंकि उसके बेचने पर मनुष्य में मनुष्यत्वही नहीं रह जाता है।

लक्ष्मीबाई समझ गयी कि हमलोगोंकी बातें ताराने समझ ली है, इसलिये इस प्रसंगको अधिक दूरतक अग्रसर करके सबके मनको अशांत करना उचित नहीं। ऐसा विचार कर उसने दूसरी ही बात छेड़ दी।

—***—

# आठवां परिच्छेद

गोलकुण्डाके पुलिस दारोगा ठाकुर रामकृपालसिंह अनेकों चरों और अनुचरोंको साथ लेकर युवक संन्यासी और नवाब मोहिनी दिलजानको गिरफ्तार करने के लिये निकले हैं, गाँव, नगरी, अरण्य और पर्वतोंकी उनकी चर-वाहिनी खोजती ढूँढ़ती हुई अग्रसर हो रही है। तलाशीके साथ गिरफ्तारीका दौर दौरा भी खूब जोरोंपर है।

मालिकके फोटो के साथ जिस किसी युवकका चेहरा कुछ मिलता है, वही पकड़ा जाता है। जिसके साथ आँखका सादृश्य मिल जाता है, वह भी पकड़ा जाता। जो मालिककी तरह लम्बा, जो मालिककी तरह विदेशी है, उसका भी छुटकारा नहीं। संन्यासीकी तो कोई बात ही नहीं, लम्बा बूढ़ा संन्यासी देखते ही रामकृपालसिंह उसके हाथमें हथकड़ी बेड़ी पहनाते हैं। जिस संन्यासीकी कोई लड़की होती है, चाहे वह छोटी हो या बड़ी, सुन्दरी हो या कुरूपा, तुरत ही लड़कीके साथ वह संन्यासी पकड़ा जाता है।

इस प्रकार सप्ताहके भीतर कैदियोंकी एक बहुत बड़ी सेना लेकर रामकृपालसिंह राजधानी में लौट आये। और अपने मकानकी बगलके सरकारी हिरासतखानेमें सभी कैदियोंको ठूँस दिया। वहींसे सभी कैदी विचारके लिये दरबारमें भेजे जाते थे। जिस दिन रामकृपालसिंह विजय-गर्वके साथ घर लौट आये, उस दिन उनके मकानपर बड़े धूम-धाम के साथ विजयो-

त्सव मनाया गया। नगर के सभी आत्मीय सम्बन्धियों और इष्ट मित्रोंको निमन्त्रण देकर बुलाया गया। मकानका बहि रंग पुष्पमाला और अन्तरंग आलोक मालासे उद्भासित हो उठा।

उत्सवके दिन लक्ष्मी शकुन्तलाको भी निमन्त्रण देकर बुला लायी थी। वह सबेरेसे ही कामकाजमें व्यस्त थी। कई वार लक्ष्मी उसके पास आ आकर विश्राम ले लेनेके लिये कहती, परन्तु वह क्षणभरके लिये दम ही नहीं लेती थी। इस बार आकर लक्ष्मीने कहा—शकुन्तला बहन! तुम कुछ खालो, अब शीघ्र ही नाच शुरू होगा, देखना होगा। दिन भर तो काम करके ही मरी, क्या अब भी दम न लोगी?

शकुन्तला—सच कहती हूं, लक्ष्मी काम करनेमें ही मुझे आनन्द मिलता है। एक क्षण बिना कामके मुझसे बैठा नहीं रहा जाता। और खानेको कहती हो बहन! सो तो जानती ही हो कि रोज मेरा एकादशी व्रत ही रहता है।

लक्ष्मी—बहन! मुझे देखकर बहुत कष्ट होता है, इसी उम्रमें तुझे तपस्विनी बनना पड़ा है।

शकुन्तलाने हँसकर कहा—तुम्हें कष्ट होता है, तो मैं नहीं आया करूँगी। मुझे देख ही कर तुम्हें यदि दुःख हो तब तो यह अच्छी बात नहीं कि मैं रोज तुम्हें दुःख देने आऊँ।

लक्ष्मीने आँखोंमें आँसू भरकर कहा—"हँसीकी बात नहीं, जब मैं तुम्हारा हँसता हुआ चेहरा देखती हूं, और तुम्हारी प्रेम भरी बातें सुनती हूँ, तभी मुझे आनन्द मिलता है, परन्तु जब मैं तुम्हारी जिन्दगीकी दशा विचारने लगती हूँ, तभी मरमान्तिक दुःखसे हृदय विदीर्ण होने लगता है।'

तारा—सोतो ठीक ही है, किसीके लिये यह कामकाज और किसीके लिये यह सिरतोड़ परिश्रम बालबच्चेका मुख देखना तो दूर रहा, स्वामीका प्रेम कैसा होता है, यह भी जानना जिसे नसीब नहीं हुआ, उससे बढ़कर दुःखिनी और कौन है ! परन्तु यह दुःख सहकर भी तुम प्रसन्न रहनेकी चेष्टा करती हो, इसका कारण यह है, कि हम स्त्रियोंका हृदय सहनेके लिये ही बना है। सब सहकर भी हमें सुखी रहनेकी जरूरत होती है।

शकुन्तला—तुमलोग मुझे जैसी दुखिया समझती हो, सचमुच मैं वैसी दुखिया नहीं हूँ। जिन थोड़े समयमें मैंने अपने स्वामी का दर्शन कर पाया था, उसी समयकी मूर्त्ति अब भी मेरे हृदयमें ज्योंकी त्यों बिराज रही है। उन्हींके साथ मैं अपनी छोटीसी गृह-स्थली आनन्दके साथ चला रही हूँ। कभी मैं इनको प्रेम करती हूं, कभी पुत्रभावसे उन्हें स्नेह करती हूं, कभी पिता-भावसे भक्ति करती हूं, और कभी भाई समझकर उन्हें आदर करती हूं। इसी प्रकारके सुखानुभवमें मेरे एक एक दिन आनंन्दसे कटते जा रहे हैं।

लक्ष्मीने गंभीर परन्तु मधुर स्वरमें कहा—तुम धन्य हो ! तुम्हारा प्रेम भी धन्य है !! तुम्हारे प्रेममें कामना, वासना लालसा और अशान्तिका लवलेश भी नहीं है। परन्तु तब भी तुम्हारी बातोंमें निराशता, निराकांक्षता और कल्पनाकी उन्मत्तता इतनी अधिक है, जिसे सुनकर पत्थरका हृदय भी गलकर पानी हो जा सकता है। हिंदू-विधवाका प्रेम ही प्रेमका आदर्श है। अच्छा, अब कुछ फलफूल खालो, अब नाच आरंभ होने ही वाला है। देखने चलना होगा।

तारा—लक्ष्मीबाई, आज तुम्हारे यहाँ इतनी धूमधाम क्यों है?

लक्ष्मी--क्या गृहिणीको अभीतक मालूम हो नहीं! मन कहाँ था?

तारा—तेरे सरपर! क्या सभी बातें सभीको मालूम होनी ही चाहिये?

लक्ष्मी—चिढ़ती क्यों हो? भैयाके लिये खुशीका दिन है! वह विजयी होकर लौटे हैं।

शकुन्तला—हाँ, लक्ष्मी, मैंने किसीसे सुना है कि दारोगासाहब बहुतसे अपराधियोंको पकड़ लाये हैं, इसीलिये उत्सव मनाया जा रहा है।

लक्ष्मीने आँखोंमें आंसू भरकर कहा—कहो मत बहन, वह बात सुनकर भी दुःख होता है।

शकुन्तला—क्यों, क्या हुआ है?

लक्ष्मी—भैया आसामी पकड़ने गये थे, कुल तीन सो भी बिल्कुल निर्दोषी एक पहाड़पर कहीं एक सुन्दरी युवती नवाब बहादुरकी नेकनजरमें पड़ गयी थी। नवाबसाहबने दया करके उसे बेगम बनानेके लिये अपने आदमियोंको उसे पकड़ लानेके लिये भेजा था। कर्तव्य परायण अनुचर स्त्रीको जबर्दस्ती पकड़-उठाये लिये आ रहे थे, परन्तु रास्तेमें एक युवकने उनसे युवतीको छीनकर उसके स्थानपर पहुँचा दिया। इसी कारण युवकका सिर, युवतीका सतीत्व और उसके अभिभावक संन्यासीका आशीर्वाद लेनेके लिए नवाबसाहब बड़े व्याकुल हो उठे थे, मेरे भैयाको तुरत हुक्म दिया था, कि जिस प्रकार हो, मुझे ये तीन आदमी मिलने चाहिये। मेरे भैया क्या करते उन्होंने तो उन तीनोंमेंसे

किसीको पहचान नहीं रखा था। इसलिये उन्हें अनुमानसे अंधेरेमें ही टटोलना पड़ा है। अंधेरेमें उन्होंने जो कुछ सामने पाया है, उसीको लाकर हवालातमें भर दिया है। कितने ही युवक, कितने ही संन्यासी और कितनी ही युवती स्त्रियोंकी चिल्लाहटसे इस समय जेलखानेकी दीवारें फट रही हैं। इसीके उत्सवमें आज आनन्द मनाया जा रहा है।

शकुन्तला—इन्हें क्या दण्ड दिया जायगा, तुम जानती हो ?

लक्ष्मी—दण्ड और क्या होगा फांसी !

शकुन्तला—इतने निरपराध लोगोंको फांसी दी जायगी, इतने लोगोंकी जाने जायँगी ?

लक्ष्मी—हम तुम क्या कर सकती हैं, यदि मेरे प्राण देने से भी इतने लोगोंके प्राण बचते तो मैं अभी दे देती, परंतु ऐसा तो होनेका नहीं।

इसी समय कहींसे आवाज आई "तुम्हीं धन्य हो !"

# नवा परिच्छेद

तीनों ही युवतियोंने चौंककर चारों तरफ देखा, उसी समय उत्तरका दरवाजा खोलकर एक लम्बे डील-डौलके युवकने कमरेमें प्रवेश किया। जो आया उसका कद लम्बा, भुजा लंबी, शरीर भरा, और ललाट चौड़ा था। योद्धाका वेश कमरमें एक तरफ तलवार एक तरफ कृपाण लटक रही थी। दाहिने हाथमें पिस्तौल थी। पीठपर थैलीमें हथियार भरे हुए थे।

अन्तःपुरमें सहसा योद्धा युवकका प्रवेश, तीनों रमणियाँ एकबार भयसे कांप उठी। युवक मुस्कुराते हुए लक्ष्मीबाईके सुंदर परंतु भयविह्वल मुखकी तरफ देखकर बोला—"जिस का हृदय दूंसरेका दुःख कष्ट देखकर दुःखित हो, उसीका मनुष्य-जन्म सार्थक है। शायद आपलोग मुझे यहाँ देखकर डर रही हैं, और डरनेकी बात भी है, क्योंकि मैं भास्कर डाकू के दलका आदमी हूँ।

शकुंतला बायें हाथमें रेकावी और दाहिने हाथमें एक संदेश उठाकर मुखमें डालना ही चाहती थी, कि युवकके मुख से भास्करका नाम सुनकर हाथसे संदेश और रेकाबी छूट कर गिर पड़ी ? तारा डाकूका नाम सुनते ही आँखें मूँद, सिर पकड़कर बैठ गयी। शकुंतला हक्की बक्कीसी होकर युवकके मुखकी तरफ ताकती ही रह गयी। लक्ष्मीबाई एक बार युवक की तरफ देख रही थी, और तुरत ही भयसे आँख नीचे कर लेती थी।

डाकूने शांत स्वर में कहा—"लक्ष्मीबाई ! मेरे डाकू होनेपर भी तुम्हें कोई डरकी बात नहीं है।"

डाकूकी बातोंसे कुछ भरोसा पाकर शकुंतला पलङ्गसे उतर पड़ी और ताराका हाथ पकड़कर उसे भी उतारा। लक्ष्मी भी उतरकर कमरेसे निकली जा रही थी, परन्तु डाकूने उन्हें रोककर कहा—"जाओ मत, एक बात सुनो।"

लक्ष्मीने हिचकिचाते हुए कहा—डाकूसे भय किसे नहीं होता है ? उन्हें क्या भले बुरेका विचार रहता है ?

युवक—भास्करके दलवालोंको रहता है।

लक्ष्मी—यदि रहता ही है तो आपने एक इज्जतदार आदमी के जनाना महल में कैसे प्रवेश किया है ?

युवकने हंसकर कहा—किसी रत्नके लोभ से।

लक्ष्मी—किस रत्नका लोभ, यहां तो कोई भी रत्न नहीं है ?

युवक—तुम्हारे हृदय-रत्नका लोभ, जिसका हृदय दया और प्रेमसे भरा है, वही हृदय-रत्न संसारमें अमूल्य है। खैर तुमलोग डरो मत, मैं अपने चरकी भूलसे यहां आ पहुँचा हूँ। तुम्हारे भाई दारोगाको ही पकड़ना अभी मेरा उद्देश्य है।

लक्ष्मी—मेरे भैयाको ? क्यों उन्होंने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है?

युवक—जिसके लिये तुम अभी दुःखित हो रही थी और कह रही थी, कि यदि मैं प्राण देकर भी इन निर्दोष कैदियों को छुड़ा सकती तो मैं इसके लिये भी चेष्टा करती। मैंने उन्हीं कैदियोंको छुड़ानेके लिये दलबलके साथ तुम्हारे मकान पर छापा मारा है।

लक्ष्मी—क्यों ? कैदियोंमें तुम्हारा कोई है क्या ?

युवक—इस संसारमें कौन किसका है और सभी सबका

है, अन्यायसे इतने लोग मारे जायँ, और हमलोग बैठेबैठे चुपचाप देखते रहें ?

लक्ष्मी—आपने कितने जवानोंके साथ हमारे मकानपर छापा मारा है ?

युवक—तीस आदमियोंसे अधिक नहीं होंगे।

लक्ष्मी—मेरे मकानपर आज दो हजारसे अधिक आदमी इकट्ठे हैं, इसके अलावे जरूरत पड़नेपर पुलिस और फौज भी किलेसे आ सकती है। तुम तीस आदमी क्या करोगे ?

युवक—यदि नहीं छुड़ा सकेंगे तो यहीं मर मिटेंगे, हमारी आत्माओंको इतना तो संतोष मिलेगा कि निरपराध अनाथोंकी रक्षा करनेमें हमने जानें दी हैं।

आगंतुकसे बातें करती हुई लक्ष्मी एक बारगी भूल गई थी, कि मैं किसी डाकूसे बात कर रही हूं। उसे ऐसा ही मालूम हो रहा था मानों वह अपने बचपनके किसी साथीसे बातें कर रही हो। युवकके जान देनेकी बात सुनकर उसके मनमें एक अतर्कित पीड़ा हुई, वह बोली—"तुम अपनी जान क्यों दोगे ? तुम उन्हें छुड़ा न सकोगे, मैं मकानकी पिछली खिड़की खोल देती हूं, तुम भाग जाओ।"

युवक—डाकूपर इतनी दया क्यों ? अपने भाई साहबको बुलाकर मुझे पकड़ा ही क्यों न दो।

लक्ष्मीको इतनी देर बाद मालूम हुआ कि वह एक डाकूसे बातें कर रही है। परंतु दूसरे ही मुहूर्त युवकका मुख देखकर वह भूल गयी और बोली—"यदि जान देनेसे ही कैदियोंके छूटनेकी आशा होती तो आपलोगोंको तकलीफ करके यहाँ तक आनेकी जरूरत नहीं पड़ती, मैं ही वह काम पूरा कर दिये होती।"

लक्ष्मीके प्रफुल्ल पंकजके समान मुखकी ओर बड़े आग्रहसे देखते हुए डाकूने कहा—"मेरे लिये चिन्ता मत करो, तुम्हारे भैया और नवाबकी शक्ति नहीं है कि वे भास्करतीर्थके किसी डाकूका बाल भी बांका कर सकें।"

लक्ष्मी—क्यों ! तुम लोगोंके सभी काम ही विचित्र होते हैं, इसलिये सभी विश्वास करते हैं, कि तुमलोग मंत्र तंत्र जानते हो। परन्तु मैं तो विश्वास नहीं करती।

युवकने हँसकर कहा—"क्यों नहीं करती ?"

लक्ष्मी—मंत्रोंसे यदि सभी काम हो जाते तो इतने परिश्रमकी जरूरत ही क्या थी ? मैं तो सोचती हूं, कि भास्करतीर्थ परोपकारी है, इसलिए भगवान उनके सहायक रहते हैं।

युवककी आँखोंसे दो बूँद आँसू टपक पड़े, उसने कहा—"वास्तवमें तुम कोई देवी हो ! तुम्हारे सामने झूठ बोलना भी पाप है, तीस हजार डाकुओंने तुम्हारा मकान घेर लिया है। दो सौ वीर जवानोंके साथ मैंने तुम्हारे मकानमें प्रवेश किया है, बाहर भास्करके प्रधान शिष्य भगवान तीस हजार दस्यु बाहिनीको लेकर अपेक्षा कर रहे हैं। यदि बादशाहकी फौज दुर्गसे सहायताके लिये आवे तो उसे रोकनेके लिये स्वयं भास्करतीर्थ दस हजार सेना लेकर बड़े कमानोंको गाड़ कर ठहरे हुए हैं।"

अब लक्ष्मीका सारा शरीर काँप उठा, उसने कहा—"मेरे भैयाको पकड़कर तुमलोग क्या करोगे ?

युवक—खूब सम्भव, इतने कैदियोंके बदले उन्हींको फाँसी होगी।

लक्ष्मी रो उठी और बोली—मैं भैयाको न देखनेसे जी न सकूँगी।

युवक हँसकर बोला—"किसकी बहन अपने भाईके लिये रोती कलपती नहीं ? परन्तु क्या डाकू भी इस रोने कलपने से कभी पिछलते हैं ?

लक्ष्मी—अभी भैयाका विवाह हुआ है, कोई लड़का-बाला भी नहीं है। इसके न होनेसे तो मेरे पिताका वंश ही निर्मूल हो जायगा।

युवक—हां, हां, ताराके साथ तुम्हारे भैयाका विवाह हुआ है, यह मुझे मालूम हुआ है। ( ताराकी तरफ देखकर ) तारा, अच्छी तरह तो हो न !

ताराने सिर नीचा किये हुए रुँधे गलेसे कहा—"नहीं तुम पूछने वाले कौन होते हो।"

डाकूने शकुन्तलाकी तरफ देखकर कहा—"बहन ! अच्छी तो हो न ?

शकुन्तला—उदय ! तुम डाकू हो गये, सुनती थी कि तुम डाकुओंके दलमें मिल गये हो ; परन्तु विश्वास नहीं होता था। सचमुच तुम डाकू हो गये हो ?

उदय—हां, बहन मैं डाकू हूं।

ताराने लम्बी सांस भरकर कहा—"क्या अब यही तुम्हारा पेशा हो गया ? तुम्हें क्या दूसरा कोई भी काम नहीं मिला है ?"

उदय—यह काम बुरा ही क्या है, खूब युद्ध करना पड़ता है। अच्छा तो अब मैं बिदा होता हूं। जिस कामके लिये आया हूँ, उसे भी देखना चाहिये। इसी समय तुरहीकी आवाज हुई, साथ ही सिपाहियोंने मकानमें प्रवेश किया।

लक्ष्मी—मेरे भैयाका क्या होगा ? नहीं बतानेसे मैं नहीं जाने दूँगी।

तारा—दोनों हाथोंसे गला पकड़ रखो, परन्तु यह चिड़िया पींजड़ा तोड़कर उड़ ही जायगी।

लक्ष्मी—गला क्यों मैं पैर पकड़ती हूं। कहो, मेरे भैयाको मारोगे तो नहीं ?

उदय—अच्छा, मैं प्रतिज्ञा करता हूं, तुम्हारे भैयाको प्राणोंसे नहीं मारा जायगा। इसके लिये प्राण पात करना पड़े सो भी स्वीकार है।

उदयसिंह अब वहाँ क्षणभर भी विलम्ब न करके बिजली की तरह बाहर निकल गये। तीनों औरतें मकानकी छतपर चढ़कर नीचेका दृश्य देखने लगीं। सारा मकान बड़े २ मशालोंकी रोशनीसे जगमगा उठा है। चारों ओर चिल्लाहट, हुँकार और हड़-हड़ भड़-भड़की आवाजसे कानोंकी तिल्लियाँ फट रही हैं। बाहरसे कमानें गरज गरजकर गोले बरसा रही हैं। इतने ही में हवालातका फाटक खोलकर "जय कृष्णमुरारे मधुकैट मारे" की ध्वनिसे आकाश विदीर्ण करते, खुले हुए बाँधके सोतेकी तरह, एक हजार कैदी निकल पड़े। उनके आगे पीछे दस्यु-वाहिनी था। चारों ओर लड़ाई और मारकाट हो रही थी। परन्तु ज्योंही कैदियोंकी सेना आंखोंसे ओझल हो गयी त्योंही चारो तरफकी लड़ाई बन्द हो गयी। चारों ओर श्मशानकी तरह निस्तब्धता छा गयी; ऐसा मालूम हुआ, कोई प्रलयकारी तूफान क्षण-भरके लिये अपना ताण्डवनृत्य दिखलाकर चला गया हो जिसके बाद प्रकृतिने बिल्कुल शान्त निस्तब्ध रूप धारण किया हो।

तीनों औरतें अब नीचे उतर आयीं। लक्ष्मी एक घरसे दूसरे घरमें दौड़कर देखने लगी, परन्तु कहीं डाकुओंके छापा मारने का लक्षण न दिखलायी पड़ा। सभी असवाब पत्र अपने अपने स्थानपर ज्योंके त्यों पड़े हुए थे, और घरमें जितने मनुष्य थे वे सभी अक्षत शरीरसे जहाँके तहाँ मौजूद थे। सिर्फ डाकुओंने उन्हें जहाँका तहाँ अटका रक्खा था, सभी घर दर-बाजे एक ही साथ एक ही समय बन्द कर दिये गये थे।

यह दृश्य देखकर औरतें अपनी हँसी न रोक सकीं, लक्ष्मी परेशान होकर इधर उधर अपने भैयाको खोजने लगी। बहुत खोज ढूँढ़के बाद दारोगा साहब एक बांसकी झाड़ीमें हाथ पाँव बँधे कहरते हुए मिले।

# दशवाँ परिच्छेद

उस दिन दारोगा रामकृपालसिंहके घर कोई सुखकी नींद न सो सका। आतङ्क और भयसे नींद कोसों दूर भाग गई थी। जिस समय डाकुओंने छापा मारा था उस समय आधी रातका समय हुआ था, परन्तु उनके जाते जाते रात भी समाप्त हो गयी थी। सवेरा होनेमें बहुत विलम्ब न जानकर सबने जागकर ही रात काट दी। भोर होते ही दारोगा साहब राज-दरबारमें खबर देनेके लिए स्वयं गये, इधर शकुन्तला भी घर जानेके लिये तैयार हुई। परन्तु लक्ष्मीने उसे रोककर कहा—कल तो कुछ खाने ही न पायी, आज भी बिना खाये ही चली जाओगी।

शकुंतलाने लक्ष्मीके मुख की तरफ देखकर कहा—भास्कर के दलके डाकुओंका प्रताप देखा! एक पलमें तूफान उठाकर चले गये, सभी कैदियोंको छुड़ा ले गये हैं।

लक्ष्मी—सचमुच बड़े आश्चर्य की बात है! कहांसे आते और कहां चले जाते हैं, कुछ मालूम नहीं होता?

शकुंतला—यदि ऐसी शक्ति न होती तो क्या वे देशमें इतने प्रतापी हो सकते थे, जिससे बादशाह भी थर-थर कांपते हैं।

लक्ष्मी—अच्छा, उदयसिंह, वह भी क्या अद्भुत मनुष्य हैं, उनकी बातें कैसी मधुर हैं? चेहरामें भी तो एक ही है!

भौजीसे मैंने कितनी ही बार उनकी बातें सुनी थीं, परंतु विश्वास नहीं होता था। हां, वह एक ऐसे आदमी हैं, जो भौजीको ही क्यों बड़ी बड़ी राजकुमारियोंको भी मोह सकते हैं।

शकुंतलाने मुस्कुराकर कहा—ताराने तो मरकर दूसरा जन्म ग्रहण किया है; परंतु मैं देख रही हूं कि मेरी सखी भी अब····· ··निगलने ही वाली है।

लक्ष्मी—दत्! मैं क्या इतनी कमजोर दिलकी हूं, मैं जानती हूं कि लड़की स्वतंत्र नहीं होती, पिता, माता, भाई जिसके साथ व्याह कर देते हैं, उसीको स्वीकार कर लेना पड़ता है। परंतु हां, उदयसिंह आदमी अच्छे हैं।

शकुंतला—उदयसिंह अच्छे कैसे हैं, वह तो डाकू हैं।

लक्ष्मी—मेरी तो इच्छा होती है, कि मैं भी उनके साथ साथ डकैती करती फिरूँ। इस प्रकार सबलके अत्याचारसे दुर्बलकी सहायता करना यदि डकैती है, तो वह डकैती ही सबसे अच्छी है।

शकुंतला—चाहे कुछ भी हो इससे अपयश ही होता है।

लक्ष्मी—राजाके करनेपर यही यश कहलाता है, डाकू करते हैं, इसलिये अपयश है। खैर! देखा नहीं है, एक पैसेकी चीज घरसे चोरी नहीं गयी, इतना शोर गुल हुआ, परंतु एक आदमी न मरा और न घायल हुआ।

शकुन्तला—देखती हूं, डाकुओंने तुमपर भी अपना जादू चला दिया है, उदयसिंहने·····

लक्ष्मी—उनसे, तुम्हारा शिर, बात बातमें तुम प्रेमके ही लक्षण देखा करती हो।

शकुन्तला—सच कहती हूं, आज मेरी सखीके मनमें उलटी गङ्गा बह रही हैं।

लक्ष्मी—अच्छा ! तुम जलभुनकर मरो।

इसी समय एक दासी आकर बोली—"मांजी ! शकुन्तलादेई-को नहानेके लिये बुलाती हैं।"

लक्ष्मीने शकुन्तलाकी तरफ देखकर कहा—"अच्छा तो तुम जाओ।"

शकुन्तला—तुम अभी नहीं जाओगी।

लक्ष्मी—मैं कुछ देरके बाद नहाऊंगी, रातको तुम्हारा भोजन नहीं हुआ है, जाओ।

शकुन्तला—उससे क्या हुआ ? थोड़ा दिन उठने दो एक साथ ही नहायेगीं।

लक्ष्मी—नहीं तुम जाओ, नहीं तो मांजी रञ्ज होंगी। "अच्छा तो तुम रहो, और अपने नन्ददुलारेकी बात सोचा करो।" इतना कह कर शकुन्तला चली गयी।

लक्ष्मी बहुत देरतक वहीं बैठी हुई रास्तेका दृश्य देखती रही, परन्तु उसका मन सवेरेसे ही खाली जैसा मालूम होता था। मानों हृदयकी कोई वस्तु खो गई हो, वह कौनसी चीज, कौनसी बात, कौनसा रत्न था ? लक्ष्मी बहुत चेष्टा करके भी निश्चय नहीं कर पाती थी, वास्तवमें लक्ष्मी आज अपने हृदयका ही अन्त नहीं पाती थी। हृदयका हरण इसीको कहते हैं।

बहुत देरतक अकेले बैठना भी जब उसे अच्छा न लगा तब वह उठकर ताराके कमरेकी तरफ चली।

तारा अपने कमरेके बरामदेमें बैठी हुई उदास दृष्टिसे आका-

शकी तरफ देख रही थी और किसी चिन्तामें मग्न थी। उसके मुख और आंखपर स्याही की रेखा पड़ गई थी।

लक्ष्मीने उसके पास पहुंचकर पूछा—"भौजी! क्या कर रही हो?"

ताराने तुरत शान्त भाव धारण करके कहा—आओ!

लक्ष्मी—"क्या सोच रही थीं?"

तारा—नहीं, कुछ भी तो नहीं।

लक्ष्मी—मनुष्य अकेला रहनेपर ही सोचता है, यह मनुष्य का स्वभाव है, कुछ भी सोच नहीं रही थी, ऐसा झूठ क्यों बोलती हो?

तारा—मैं कोई विशेष बात नहीं सोचती थी।

लक्ष्मी—क्या सोचती थीं, रातकी डकैतीकी बात?

तारा—इसके लिये सोचना क्या! जो होना था, सो तो हो ही गया है।

लक्ष्मी—डाकूकी बात?

तारा—वही तो कहा है।

लक्ष्मी—वह तो डकैतीकी बात कही है, डाकूकी बात तो नहीं कही है। डाकू ऐसा सरल, उदार और धार्मिक तो मैंने नहीं सुना था।

तारा एक दृष्टिसे बहुत देरतक लक्ष्मीकी तरफ देखती रही उसे इस प्रकार देखते देखकर लक्ष्मीने मुस्कुराकर कहा—"जादू करोगी? जो इस तरहसे देख रही हो।"

तारा भी कुछ न बोली, वह शायद लक्ष्मीकी तरफ देखकर यही सोच रही थी, कि उदयकी जिस उज्ज्वल प्रभाने मुझे भस्म

किया है। जिन मीठी बातोंने मुझे पागल बनाया है, उन्हींके फेर में पड़कर शायद यह अभागिन भी भस्म होना चाहती है।

लक्ष्मी—मैंने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है। तुम मुझसे बातें क्यों नहीं करती।

तारा अबकी बार लम्बी सांस लेकर बोली—"याद है, लक्ष्मी! तुम मुझे एक दिन सीख देती थी, कि माता पिता जिसे सौप दें हिन्दू-कन्याको उसे ही देवता मानकर पूजना चाहिये।"

लक्ष्मी—याद क्यों नहीं रहेगा; क्यों क्या हुआ है?

तारा—मैं देख रही हूँ, कि तुम मृत्युके मुखमें पैर बढ़ा रही हो। लक्ष्मी! मैं तुम्हें बहुत प्यार करती हूं, देखना अपने हृदय-को श्मशान न बनाना। जिन्दगी भर चिताकी आगमें भस्म मत होना।

लक्ष्मी—धत्! मैं वैसी नहीं हूँ। वह भैया आते हैं, मैं जा रही हूँ।

लक्ष्मी चली गयी। रामकृपालसिंहने कमरेमें प्रवेश किया। तारा उठ बैठी और बोली—"कहाँ गये थे?"

रामकृपाल—दरबारमें।

तारा—क्यों?

रामकृपाल—कल रातकी खबर देने।

तारा—सुनकर उन्होंने क्या कहा?

रामकृपाल—भास्करके नामसे ही सबकी घिग्घी बंध रही है। मन्त्री, सभासद सभी यही कह रहे हैं कि इतने निर्दोष आद-मियोंको पकड़ा था, इसीलिये भास्करने आक्रमण किया है।

तारा—बादशाहने क्या कहा?

रामकृपाल—वह कह रहे थे, भास्करको बिना पकड़े मुझे चैन नहीं है। पहले दिल्लीके बादशाहसे सन्धि हो ले तो मैं खुद अपनी सारी सेना लेकर भास्करको पकड़नेके लिये निकलूँगा।

तारा—तुमपर तो कोई दोष नहीं मढ़ा ?

रामकृपाल—नहीं, परन्तु उन तीनों आदमियोंको पकड़नेके लिये मुझे फिर निकलना पड़ेगा।

तारा—कब जाओगे ?

रामकृपाल—अभी कब !

तारा—कबतक लौटोगे ?

रामकृपाल—निश्चय नहीं।

तारा—सावधान होकर काम करना।

रामकृपाल—अच्छा, तो जाता हूँ।

ताराने आगे बढ़कर चरण छूकर प्रणाम किया।

# ग्यारहवाँ परिच्छेद

जिसे पकड़नेके लिये दारोगा रामकृपालसिंह बेचैन हो रहे थे, वह मालिकहुसेन, पेश्कारका परिचय पत्र लेकर पहले दिलजानको देखनेके लिये पीरपाञ्चालके पहाड़पर चला गया था। वहाँसे निराश होकर लौटनेपर उसने पेश्कारके बताये हुए जौहरीसे मुलाकात की। जौहरीने हालही एक नयी खान ठीकेपर ली थी, उसने उसीमें मालिकको मुनीम बनाकर भेज दिया था।

वह खान पहाड़की तराईमें बिल्कुल निर्जन स्थानमें थी। मालिकके लिये अच्छा ही हुआ, वह कभी खानसे बाहर ही नहीं निकलता था। जासूस उसकी खोजमें घूम रहे हैं, यह उसको भी मालूम हो गया था। परन्तु इन जासूसोंकी चिन्ता उसे जितना सताती नहीं थी, उससे अधिक दिलजानकी चिन्ता उसे सताती थी। रात दिन वह उसीकी चिन्तामें मग्न रहता था। न हृदयमें उत्साह था, न काम करनेका हौसला। उसके सभी कामोंमें ही गफलत, सभी कामोंमें ही बेदिली पायी जाती थी।

एक दिन मालिक छुट्टीके समय खानवाली गुफामें अकेला बैठा हुआ चिन्तामें मग्न था, इतने ही में सहसा संगीतकी मधुर-ध्वनि उसके कानोंमें सुन पड़ी। संगीतका स्वर जितना ही मधुर उतना ही मर्म स्पर्शी था, परन्तु कहाँ कौन गा रहा था, कुछ भी पता नहीं। मालिकने चारोंओर दृष्टि फेरकर देखा चारोंओर पहाड़ ही पहाड़ हैं।

मालिक बड़े फेरमें पड़ गया। वह कुछ निश्चय न कर सका कि यह शब्द कहाँसे आ रहा है। बहुत सोच बिचारकर उठ खड़ा हुआ और अंधेरी गुफामें ही आगे बढ़ने लगा। वह जितना ही आगे बढ़ने लगा उतना ही स्वर स्पष्ट होने लगा। अब मालूम हुआ कि इधर ही कहींसे आवाज आ रही है। परन्तु उस अन्धकारमें आगे बढ़ना भी निरापद नहीं था। मालिक कुछ दूर जाकर खड़ा हो गया। आगे न बढ़ सका।

मालिक कुछ देर तक खड़ा रहा, गाना बन्द हुआ। चारों-ओर निस्तब्धता छागयी। मालिक लौटना ही चाहता था, कि उसने देखा कि सहसा निकट ही अत्यन्त उजेली रोशनी फैल गयी है।

मालिक कुछ देर तक उस रोशनीकी तरफ देखता रहा, उसने देखा कि दीवालके एक सूराखसे वह रोशनी आ रही है। अब मालिकने उस छेदमें मुख लगाकर देखा कि दूसरी तरफ भी एक गुहागृह है। उसमें एक सुन्दरी युवती हीरोंका दीपक जलाकर बैठी हुई है। उन्हीं हीरोंमेंसे एक की रोशनी सूराखसे बाहर फैल रही है।

रमणी मालिककी तरफ पीठ किये हुई बैठी थी, फिर एक लम्बी साँस लेकर उसने एक गायन आरम्भ किया।

गायन सुनकर मालिककी प्रत्येक हृदय तन्त्री बज उठी। स्वर मानों हृदयको स्पर्श करने लगा। गायनका प्रत्येक पद मानों उसीको लक्ष्यकर गाया जा रहा हो। मालिक कान लगाकर रमणीका गायन सुनने लगा।

धीरे धीरे गायन बन्द हुआ। रमणी थोड़ी देर चुप रहकर

लम्बी सांस लेकर अपने आप कहने लगी—"हा, मालिक ! इस जीवनमें शायद तुमसे भेट न होगी। क्यों आये और क्यों मेरा हृदय चुरा ले गये। तुम क्या फिर एक बार भी नहीं आ सकते ?"

मालिकको मालूम हुआ मानों वह कोई स्वप्न देख रहा है। नहीं तो इस पाताल पुरीमें दिलजान कहाँसे आयी ! दिलजान क्या सचमुच उसके लिये व्याकुल होकर तड़प रही है ?

सहसा रमणी उठ खड़ी हुई, और किसी कामके लिये मालिककी तरफ मुख फेरा। इस बार मालिकका स्वप्न दूर हुआ, क्योंकि उसने साफ देखा कि उसीकी दिलजान आँखोंमें आँसू भरे खड़ी है, मालिक अब चुप न रह सका। चिल्लाकर बोल उठा—"दिलजान ! दिलजान !!"

दिलजान चौंक पड़ी ! मालिकने फिर पुकारा—दिलजान ! मैं मालिक हूँ। उत्तर तरफ बढ़ आओ।

मालिकके गलेकी आवाज सुनकर दिलजानका हृदय नाच उठा। वह धीरे धीरे आकर छेदके पास खड़ी हुई। दोनोंने जब एक दूसरेको पहचान लिया, तब उनकी आँखोंसे प्रेमके आँसूओं-का तूफान उमड़ पड़ा।

बहुत देर तक मन भरकर रोनेके बाद दिलजानने कहा—मालिक ! तुम मेरे हृदयकी सभी बातें सुन चुके हो अधिक मैं क्या कहूं ?

मालिक—तुम मेरे हृदयकी नूर हो।

दिलजान—तुम फिर नहीं आये ?

मालिक—पीरपांचाल पहाड़पर गया था। वहाँ तुमलोगोंसे भेट नहीं हुई। मुझे क्या मालूम था, कि तुमलोग यहाँ आये हो।

दिलजान—हाँ, फिर बादशाहके आदमियोंके आनेके भयसे दादा मुझे लेकर यहाँ चले आये। सुनती हूं, आजकल हम लोग की बड़ी खोज हो रही है।

मालिक—तुम्हारे दादा कहाँ है ?

दिलजान—बाहर गये हैं। रातको आवेंगे।

मालिक—मैं क्या अभी तुम्हारे कमरेमें नहीं आ सकता ?

दिलजान—दादा इस गुफेकी चाभी बाहरसे बन्दकर गये हैं। वह रातको आकर खोलेंगे। यहाँ जो सबसे ऊँचा पहाड़ है, उसीकी चोटीपर एक मन्दिरका खण्डहर है। वहीं शामको जानेसे दादासे भेंट हो सकती है। वह तुम्हें बहुत प्यार करते हैं उनसे भेंट करके उन्हींके साथ आना। अभी एक काम करो।

मालिक—कहो, क्या कहती हो ?

दिलजान—तुम जहाँ हो वहाँ से उत्तर तरफ कुछ दूर बढ़ जाओ। वहाँ एक खुली दीवार है, उसपर मैं चढ़ सकती हूँ, वहींसे हमलोग आरामसे बातचीत कर सकते हैं।

मालिकने वैसा ही किया। दिलजान तुरत ही दीवारपर आकर बैठ गयी। अब दोनों प्रेमिक और प्रेमिका बड़े उमंगसे मिले, और घुल घुलकर बातें करने लगे।

मालिकने कहा—दिलजान ! इस बार तुम्हारे दादासे भेंट होते ही तुमसे व्याह करनेका प्रस्ताव करूँगा। क्यों तुम्हारी क्या राय है ?

दिलजान—मेरे मालिक ! तुम तो मेरे मनकी बात जान ही चुके हो, परन्तु लाचारी है। हमलोगोंका विवाह नहीं हो सकता।

मालिक—क्यों दिलजान ?

दिलजान—मेरे दादाकी इच्छा नहीं है।

मालिक—क्या तुमने उनसे कुछ कहा था ?

दिलजान—दुत्! मैं कहने क्यों जाती ? मेरे मनकी बात-जानकर एक दिन उन्होंने बातों ही बातोंमें कहा था, उपकारसे सहानुभूति होती है। वह सहानुभूति प्रेमके अङ्कुरमें परिवर्त्तित हो जाती है, परन्तु इस अङ्कुरको हर हालतमें बढ़ने देना अच्छा नहीं है। क्योंकि सभीके साथ सभीके विवाह होनेकी संभावना नहीं रहती, इसीसे मैंने समझा था कि मुझे ही लक्ष्य करके उन्होंने ये बातें कही थी।

मालिक—परन्तु यह तो मेरे लिये बड़े दुखःकी बात है, मैं तुम्हें पाये बिना जी ही नहीं सकता।

दिलजान—अच्छा, तुम भी एक बार उनसे पूछना।

मालिक—यदि वह न स्वीकार करें ?

दिलजान—तब तो लाचारी है, मैं क्या कर सकती हूँ। वही मेरे लिये सब कुछ हैं, उनकी आज्ञाके बिना मैं कुछ भी नहीं कर सकती। परन्तु इतना याद रक्खो कि जिन्दगी भर तुम्हारे नामकी ही माला जपती रहूँगी।

इसके बाद दोनों प्रेमिक और प्रेमिका एक दूसरेसे अलग हुए।

# बारहवाँ परिच्छेद

दिलजानके निर्देशानुसार उसी दिन सन्ध्या समय मालिक पर्वत शिखरपर चला गया, और पुरानी मस्जिदके पास बैठकर संन्यासीकी प्रतीक्षा करने लगा। धीरे धीरे सन्ध्या व्यतीत हुई, रात्रिके भीषण अन्धकारमें पहाड़का सारा दृश्य लुप्त हो गया। विकट अन्धकारमें देखना कठिन हो गया।

परन्तु मालिक अन्धकारकी विकटता और स्थानकी निर्जनतासे तनिक भी विचलित नहीं हुआ। वह सन्यासीकी प्रतीक्षामें चुपचाप बैठा ही रहा, बहुत देरतक इसी प्रकार बैठे रहनेके बाद सहसा उसे मालूम हुआ, कोई आदमी उसकी बगलमें घूम फिर रहा है। उसने अनुमान किया कि संन्यासी ही होगा, परन्तु कुछ सोचकर वह चुपचाप बैठा ही रहा।

इसी समय एक आदमीकी धीमी आवाज सुन पड़ी, कोई किसीसे बोला—"मैंने अपनी आँखों यहाँ आते देखा है।"

दूसरा—तो गया कहाँ? मैं तो उसे सन्ध्या समयसे ही खोजते खोजते हार गया।

पहला—चलो, अब लौट चलें, यह दारोगा है, या शैतान? हमें दौड़ा-दौड़ाकर परेशान कर डालता है। अपने तो चुपचाप तम्बूमें बैठा रहता है, और जहाँ कहीं तनिक सूराग पाता है, वहीं हमें दौड़ाता है। खुफियाकी नौकरी हरामकी नौकरी है।

दूसरा—अब अधिक हैरानी नहीं सहनी होगी, इस बार

अवश्य ही वह युवक पकड़ा जायगा। इस बार जिस आदमीने उसकी खबर दी है, वह अच्छी तरह उसे जानता है।

पहला—वह कौन आदमी है।

दूसरा—ठीक मालूम नहीं, परन्तु दारोगा साहब ऐसा ही क.ते थे।

पहला—देखो, अब चाँद उगने ही वाला है, यदि वह युवक हमें देख लेगा तो सावधान हो जायगा।

दूसरा—हाँ, चलो, उस संन्यासीका क्या हुआ? जानते हो।

पहला—कैसे सुनता, दारोगासाहब क्या किसीको कुछ बतलाते हैं, जिससे जो काम लेना चाहते हैं, उसीको वह काम बतलाते हैं। बड़े ही घाघ आदमी हैं!

आपसमें बातचीत करते हुए दोनों जासूस चले गये। मालिक ने मनही मन ईश्वरको धन्यवाद दिया कि आज किसी प्रकार इनकी नजरसे बच गये, परंतु साथ ही यह आशंका भी होने लगी कि साधू बाबा कहीं इनके सामने न पड़ जायें।

परंतु मालिकको अधिक देरतक यह आशङ्का न करनी पड़ी, थोड़ी देरके बाद ही उसने देखा, कि वह मस्जिदके पास आ पहुँचे हैं।

मालिकने आगे बढ़कर उन्हें सलाम किया और संन्यासीने उसे आदरसे गले लगाकर कुशल मङ्गल पूछा, मालिकने अपना सब हाल कह सुनाया। दिलजानसे भेंट होनेकी बात भी कही।

सभी बातें सुनकर संन्यासीने जरा विरक्त होकर कहा—"मालिक! तुमने हमारा बहुत उपकार किया है, इसलिये मैंने तुम्हें सावधान कर दिया था। अभी दो आदमी तुम्हें खोजनेके लिये यहाँ आये थे, देखा?"

मालिक—देखा है, और उनकी बातें भी सुनी हैं।

संन्यासी—तब भी यहाँ खड़े हो। अभी अपने देशको लौट जाओ। पहले जान बचाओ, फिर नौकरी करोगे।

मालिक—एकबार दिलजानको देख कर ही चला जाऊँगा।

संन्यासी—बिलकुल फिजूल! जान लेकर भागो, अपने देशका रास्ता लो।

मालिक—एकबार दिलजानको देखकर जानेसे ही मैं देशमें सुखसे रह सकता हूँ।

"अच्छा तो आओ" कहकर संन्यासी आगे बढ़े, और मालिक उनके पीछे पीछे चलने लगा।

मस्जिदमें प्रवेश करके संन्यासीने एक पत्थर हटा दिया जिसके सामने एक सुरङ्गका रास्ता दिखलायी पड़ने लगा। वह सुरङ्ग ठीक नीचेकी तरफ गयी थी, संन्यासीने कहा—"कूद पड़ो!"

मालिक—यह खोह कितनी गहरी है, चोट तो नहीं लगेगी।

संन्यासी—कूद पड़ो! चोट नहीं लगेगी।

मालिक कूद पड़ा, नीचे बहुत ही कोमल पदार्थ रखा हुआ था, संन्यासीने ऊपरसे पुकार कर कहा—"हटो, मैं कूदता हूँ।"

मालिकके हटते ही संन्यासी भी कूदकर नीचे चले आये।

कितने ही टेढ़े-मेढ़े रास्तेसे होता हुआ संन्यासी आगे बढ़ने लगा, कितनेही दरवाजोंको खोलता और बन्द करता हुआ अंत में वह एक गुफा द्वारके सामने जाकर खड़ा हो गया, और अपनी जेबसे एक चाभी निकालकर ताला खोल डाला। फिर सांकल उतारकर उसने पुकारा—"दिलजान!"

# तेरहवाँ परिच्छेद

दिलजानने बैठनेके लिये दो आसन लाकर रख दिये, एकपर संन्यासी बैठा और दूसरेपर मालिकको बैठने का इशारा किया।

दिलजानने पूछा—"रोटी कुछ और पका दूँ ?"

संन्यासी—नहीं, जो है उसीसे काम चल जायगा, हमें अभी यहाँसे उठ चलना होगा।

मालिकने संन्यासीकी तरफ देखते हुए उत्सुकता पूर्वक पूछा—क्यों ! अभी क्यों उठेंगे ?

संन्यासी- यहाँ रहकर पुलिसके हाथसे बचना अब कठिन है, मालिक ! तुम आजही अपने देशके लिये यात्रा करो। चाहे कैसे ही गुप्त वेशमें रहो, जासूस पुलिसकी नजरसे अब तुम बच नहीं सकते। तुम्हारे सम्बन्धमें उन्हें पूरा पता मिल गया है, तुमने तो अपने कानों सब सुना है, तुम अभी अपने देशको लौट जाओ।

मालिक—मुझे ऐसा कड़ा हुक्म मत दीजिये, मैं दिलजानको छोड़कर कहीं भी नहीं जा सकता।

संन्यासी—तुम क्या आशा करते हो कि दिलजानसे तुम्हारा विवाह हो सकता है ?

मालिक—आप यदि चाहें तो हो सकता है, हम दोनों ही एक जाति, एक धर्मावलम्बी हैं। मेरे पिता यद्यपि धनी नहीं हैं परन्तु उन्हें भोजन वस्त्रका अभाव नहीं है। वंश भी उनका बहुत बड़ा है।

संन्यासी—मालिक ! ऐसे दुस्समयमें क्या विवाहकी बात करनी उचित है ?

मालिक—चलिये हम तीनों परसिया चले चलें, वहाँ कुतुबुद्दीनका कि ा कुछ न होगा।

संन्यासी—मालिक ! तुम हमलोगोंके उपकारी हो, इसीलिये तुमसे अनुरोध करता हूं, कि दिलजानसे विवाह करनेकी आशा त्याग दो।

मालिक—क्यों ?

संन्यासी—दिलजान शाहजादी है, किसी शाहजादेसे उसका विवाह होगा।

मालिकके हृदयपर मानो हठात् आगका गोला गिर पड़ा, उसने अत्यन्त व्यथित स्वरमें कहा—"दिलजान, शाहजादी है ! कहाँ की शाहजादी है ?"

संन्यासी—दिलजान विसियापुर के बादशाह मुरकरकी कन्या है।

मालिक—विसियापुर तो आजकल गोलकुण्डाके अधीन है।

संन्यासी—हाँ, आज सोलह वर्ष हुआ, शाहकुतुबने विश्वासघात करके वह राज्य छीन लिया था।

मालिक—दिलजानके पिता महामान्य मुरकर इस समय कहाँ हैं ?

संन्यासी—अब वह इस संसारमें नहीं है, मैं एक दिन विसियापुरका बादशाह था। मुरकर मेरा उपयुक्त पुत्र था, संसारसे बिराग होनेके कारण मैंने राज्यभार अपने पुत्रको सौंपकर फकीरी ली थी, मुरकर ही राज्यकार्य्य चला रहा था। गोलकुण्डाके नवाब

कुतुबशाहसे उसकी बड़ी मित्रता थी,उन दोनोंके बीच राजनीतिक सन्धि भी हुई थी। एक समय किसी राज्यपर आक्रमण करनेके लिये कुतुबने मेरे पुत्रको उत्साहित करके ससैन्य भेज दिया। जब मेरा पुत्र उस राज्य पर आक्रमण करनेके लिये सेना सहित विसियापुरसे बाहर निकला तब कुतुबने विश्वासघात करके मेरे पुत्रकी राजधानी हड़प कर ली। मेरा पुत्र राज्य जीत कर लौटने पर कुतुबसे लड़ा सही, परन्तु उसी युद्धमें वह खेत रहा। उस समय दिलजान सिर्फ छः महीनेकी बच्ची थी, उसकी माता किसी प्रकार इस लड़कीको लेकर मेरे पास भाग आयी। तभीसे उसकी रक्षाके लिये मैं मारा मारा फिर रहा हूं।

मालिक—दिलजानकी माँ कहां हैं।

संन्यासी—वह बेचारी राजरानी, वन-जङ्गलका दुस्सह क्लेश बहुत दिनतक न सह सकी, मेरे पास आनेके दोही वर्ष बाद मर गयी!

मालिक—अभी आप कहते थे, कि किसी शाहजादेके साथ दिलजानका विवाह करेंगे। वह सौभाग्यवान युवक कौन है?

संन्यासी—युवक! तुमपर मुझे किसी प्रकारका अविश्वास नहीं है, सुनो—काबुलके शाहजादे मिर्जाके साथ दिलजानके विवाहकी बात पक्की हो गई है। मिर्जाके साथ विवाह होनेसे दिलजान विसियापुरकी राजगद्दीपर बैठ सकती है। क्योंकि विसियापुरकी राजगद्दीपर इस ससय काबुलका ही अधिकार है। डेकानके नवाब और काबुलके सुलतानसे औरङ्गजेबकी बातचीत चल रही है, औरङ्गजेब शीघ्र ही गोलकुण्डापर आक्रमण करेगा, उसमें कुतुबुद्दीनकी हार होगी। यह जानी हुई बात है, डेकानके

नवाबकी सहायतासे काबुलके नवाबही विसियापुरकी गद्दीपर बैठेंगे। यह सब झंझट एक महीनेके भीतर मिट जानेपर ही दिलजानके साथ शाहजादे मिर्जाका विवाह होगा।

मालिक एक लम्बी सांस भरकर दिलजानकी तरफ देखने लगा, दिलजान भी ध्यान देकर अपने दादाकी बातें सुन रही थी, और मन ही मन कह रही थी—दादा! मैं रानी होना नहीं चाहती, मैं जङ्गल जङ्गल मारी मारी फिरूंगी, तुम मालिकके साथ ही विवाह कर दो। मैं उसीमें सुखीसे रहूँगी। परन्तु बूढ़ेने उसके मनकी बात न समझी और न समझनेकी चेष्टा ही की।

मालिकने कहा—यदि कुतुब आपलोगोंका इतना बड़ा शत्रु है, तो आपलोग उसके राज्यमें क्यों रहते हैं।

संन्यासी—कहाँ जायें? सोचा था कि किसी निर्जन दुर्गम वन या पहाड़में जाकर छिप रहेंगे, परन्तु इधर परिवर्त्तन का समय भी आ गया है। मुझे एकबार विसियापुर जाना होगा, आज ही वहाँ दिलजानको लेकर जानेका विचार कर रहा हूं, तुम देशको लौट जाओ।

मालिक—यदि रास्तेमें विपद आपद आये?

संन्यासी—ईश्वरका भरोसा है।

मालिक—दिलजानको मैं प्राणोंसे भी अधिक प्यार करता हूँ। मैं उसको इस विपदावस्थामें छोड़कर नहीं जा सकता। कहिये, तो मैं विसियापुर तक आपलोगोंको पहुँचाकर लौटा आऊंगा।

संन्यासीने प्रेम पूर्ण शान्ति दृष्टिसे मालिककी तरफ देखकर कहा—"अच्छा, यहीं सही। चलो, खा पीलें, अभी यात्रा करनी होगी।"

# चौदहवाँ परिच्छेद

प्रभात अरुणकी किरणें देशदेशान्तरमें फैल गयी हैं। दिनकर भगवानके कर्म चक्रके साथ संसारके यावतीय कार्य आरम्भ हो गये हैं। संन्यासी भी युवक युवतीको साथ लिये हुए, विसियापुरकी ओर चल पड़ा। ये विषम भय मूर्त्ति यात्री अभी अधिक दूर नहीं गये थे, कि उन्होंने पीछेसे घोड़ोंकी टापें सुनी। कई एक अश्वारोही सिपाही उन्हींकी ओर दौड़े आ रहे थे। ये तीन निर्बल असहाय आदमी क्या करते? वहीं चुपचाप हाथ बाँध कर खड़े हो गये!

सिपाहियोंने निकट आते ही ललकारकर कहा—"पकड़ो! पकड़ो! इतनी हैरानीके बाद आज तीनों एक साथ ही मिल गये।"

मालिकने पहले तलवार खींचकर लड़ाई ठाननेका जोम बाँधा, परन्तु वह अकेला क्या कर सकता था? कई एक सिपाहियोंने उसे पकड़कर हथकड़ी बेड़ी पहना दी। दिलजान भी पकड़कर एक पालकी में बैठा दी गयी। संन्यासीको पकड़नेके लिये दारोगासाहबने मना कर दिया था, इसलिये उसके साथ किसीने छेड़छाड़ नहीं की, परन्तु वह बूढ़ा अपनी हृदय मणि दिलजानके लिये तड़प तड़पकर रोता हुआ डोलीके पीछे पीछे दौड़ने लगा। जब सिपाहियोंने उसकी पीठपर कितने ही चाबुक लगाये तब न जाने क्या सोचकर वह एक तरफ को चला गया।

इधर ठाकुर रामकृपालसिंह अपने दोनों आसामियों को

पकड़कर राजदरबार में ले चले। एकबार उन्हें अच्छी तरह धोया खाना पड़ा था, इसीलिये उन्हें हिरासतमें न रखकर उन्होंने एक बार ही खास दरबारमें हाजिर कर दिया।

दिलजानको इतने दिनके बाद देखकर कुतुबशाहके आनंद की सीमा न रही। उन्होंने तुरत हुक्म दिया कि दिलजान बीबी को अंदर महलमें सबसे सुरक्षित स्थानमें रखा जाय, उसके सुख आरामका सब बन्दोबस्त कर दिया जाय।

परन्तु अभागा मालिक इस दयाका एक कण मात्र भी भागी न हुआ, क्योंकि वही सब अनर्थों का मूल था, नहीं तो दिलजान कभीकी उनकी हो गयी होती। नवाबने तुरत हुक्म दिया कि "इसको शूलीपर चढ़ाकर मार डाला जाय।"

मालिकको फाँसीकी सजा मिली परन्तु अभी उसको कड़े पहरेमें हिरासतमें ही रखा गया। हथकड़ीमें जकड़कर पहरेदार उसको हिरासतमें ले गये।

—***—

# पन्द्रहवाँ परिच्छेद

पहले भिखमंगेने कहा—ओफ ! क्या विपद ! किस कामके लिये आये हो, क्या याद है ?

दूसरा—यहाँ भी कोई काम है । सभी जगह देखना होता है ।

अब दोनों भिखमंगोंने लौटकर नौकरके सुरमें सुर मिलाया, नौकर प्रसन्न होकर उठ खड़ा हुआ और उन्हें चबूतरेपर बैठाकर भीतर खबर देने गया ।

नौकरके मुखसे गायक भिखमंगोंकी प्रशंसा सुन लक्ष्मी तारा और गाँवकी और भी दो चार युवतियाँ वहाँ आ इकट्ठी हुई और भिक्षुकोंका गाना सुनने लगीं । पहले युवकका गला उतना मीठा नहीं था, परन्तु बजा वह अच्छा सकता था । दूसरे युवकका गला बहुत ही सरस और मधुर था । दोनों गाने लगे, गानेकी झंकारसे प्रत्येक सुननेवालेकी हृदय तन्त्री बज उठी, इसलिये गाने की स्वर लहरी जब निस्तब्ध हुई तब भी सुननेहारियोंके कान सुननेके लिये खड़े ही रहे, एक और भी गाना गानेके लिये दासी ने अनुरोध किया, भिखमंगे फिर गाने लगे ।

गाना समाप्त हुआ, दासी आकर उन्हें पैसा और सीधा दे गयी, सीधा बाँधकर भिखमंगे चले गये, उनके चले जानेपर युवती मंण्डलीमें उनके गानेकी समालोचना होने लगी ; लक्ष्मीने कहा—"वाह, क्या ही मीठा गला है !"

सरस्वतीने कहा—"एकका गला अच्छा है, एकका अच्छा नहीं, गाना अच्छा था, इसीलिये अच्छा लगा है ।

शारदाने कहा—हाँ, एकका गला अच्छा है, परन्तु उसमें भी कपकंपी अधिक है।

श्यामाने कहा—गाना क्या अच्छा था ? मेरे छोटे भैया इससे बहुत अच्छा गाना गा सकते हैं। हाँ, बजाता अच्छा था।

जगदम्बाने कहा—क्या अच्छा बजाता था ? एक छोटीसी डफरी, मेरे काका जब बजाने लगते हैं, तो घर गड़गड़ा उठता है

सारांश यह कि इन तीव्र समालोचकोंकी कसौटीपर गायकों का गाना बजाना खरा न उतर सका, अब उन भिखारियोंकी व्यक्तिगत समालोचना आरम्भ हुई।

जगियाने कहा—"इतने बड़े जवान मर्द भीखमाँगने निकले हैं, इन्हें शरम भी नहीं आती !"

दूसरीने कहा—"क्योंजी ! उनकी उमर अभी क्या हुई है, छोटा अभी छोकड़ा ही मालूम होता था, देखा उसके चेहरेका रंग ?"

एक दूसरीने प्रतिवाद करते हुए कहा—"दुर ! उनमें देखने का क्या था ? अगर कहो तो हमलोगोंके छोटे जमाईको देखकर आँखें अवश्य ठंडी हो जाती है।

सुन्दरतामें भी दोनों युवक महिला मंडलके दृष्टिसे गिर गये। समालोचना करके जब सभी युवतियाँ अपने अपने घर चली गयीं तब ताराने लक्ष्मीसे कहा—"पहचान सकी हो ?"

लक्ष्मी—किसे पहचानती ?

तारा—छोटे भिखमंगेको।

लक्ष्मी—नहीं, वह कौन है ?

तारा—उस रातका डाकू—उदयसिंह !

लक्ष्मी—दत्, वह भिखारी होने क्यों जायेंगे ? परन्तु मुख उनके जैसा ही था, और आँखके नीचे तिल्ली भी वैसी ही थी।

तारा आखें फाड़ फाड़कर लक्ष्मीकी तरफ देखने लगी, लक्ष्मी बोली—"इस तरह मेरी तरफ क्या देखती हो ?"

ताराने मुस्कुराकर कहा—"उदयसिंहकी आँखके नीचे तिल्ली है, यह उस रातके थोड़े समयमें तुमने किस प्रकार देखा ?"

लक्ष्मी—यह देखना क्या बड़ी बात है ? आँख रहनेसे एक ही बार देखनेसे देखा जा सकता है। परन्तु मैं कहती हूँ, वह उदयसिंह नहीं थे। क्या उनकी इतनी बड़ी दाढ़ी और इतने बड़े-बड़े बाल हैं ?

तारा—मालूम होता है, ये लोग नगरमें किसी कार्य्यवश गुप्त वेशमें आये हैं। और इसीलिये रास्ते रास्ते भीख मांगते फिर रहे हैं।

लक्ष्मी—मैंने सुना था, कि वे भास्करतीर्थके सेनापति हैं। वह चरका काम क्यों करने जायँगे ?

तारा—जो बुद्धिमान होते हैं, वे जिस आदमीसे जो काम होनेवाला होता है, उसीको उस कामका भार देते हैं, सेनापतिके लायक ही कोई कठिन काम पड़ा होगा, इसलिये भास्करतीर्थने उन्हें ही भेजा होगा, उनके साथका आदमी कौन है, मालूम नहीं हुआ।

लक्ष्मी—उस दिन उदयसिंह कहते थे, कि भास्करके प्रधान शिष्य भगवान नामके कोई मनुष्य हैं, वही दस्यु, सेनाके प्रधान सेनापति है। ये वही तो नहीं थे ?

तारा—हो सकते हैं, हमने तो उन्हें देखा नहीं है।

लक्ष्मी—तो मालूम नहीं हुआ कि किस कामसे ये लोग इस प्रकार रास्ते रास्ते घूम रहे हैं, ये लोग सारे शहरको लूट तो नहीं लेंगे ?

तारा—नहीं, भाल्कर प्रजाको दुःख नहीं देता, कोई गूढ़ उद्देश्य होगा, हम अबूझ औरतें क्या जाने।

"चलो माँ बुलाती हैं।"

# सोलहवाँ परिच्छेद

बादशाहके अन्तःपुरने आज अपूर्व शोभा धारणकी है, रंग बिरंगे शीशोंके भीतर रखे हुए चिरागोंकी रोशनीसे सारा महल जग मगा रहा है।

महलके प्रत्येक गृह बहुमूल्य रत्नों, रंग-बिरंगे चित्रों और नाना प्रकारके सामानोंसे सुसज्जित हो रहे हैं। प्रत्येक घर ही कामिनी कुलसे मुखरित हो रहे हैं, कहीं नाच गान हो रहा है, कहीं प्यालेपर प्याले पिये जा रहे हैं, कहीं रत्नालंकारकी निक्वण ध्वनिसे बेगमें अपने ऐश्वर्य्यकी महिमा घोषितकर रही हैं।

इसी अन्तःपुरके एक सुसज्जित कमरेमें मुर्झाई हुई लताकी तरह दिलजान एक शुभ्र कोमल शय्यापर बैठकर अपने भाग्यकी बात सोच रही थी। चारों ओर कितनी ही सुन्दरी परिचारिकायें उसे चारों तरफसे घेरकर रिझानेकी चेष्टा कर रही थीं, परन्तु दिलजानका उनके हास्य कौतुक और नाच गानपर कुछ भी ध्यान न था, वह अपने चिन्तामें ही मग्न हो रही थीं। इतनेमें एक बाँदीने आकर खबर दी—"बादशाह नामदार आ रहे हैं।"

सहचरियाँ सभ्रमके साथ उठ खड़ी हुईं, कुछ देरके बाद ही कुतुबशाहने कमरेमें प्रवेश किया। सहचरियाँ बार बार कोर्निश करके एक किनारे हटकर खड़ी हो गयीं। कुतुबशाह दिलजानके बिछौनेपर बैठे। उन्हें देखते ही दिलजानका ध्यान टूट गया, वह फड़फड़ाकर पलंगसे उतरकर नीचे बैठ गयी।

कुतुबने मुस्कुराकर कहा—"सुंदरी! तुम डरती क्यों हो? मैं तुम्हें बेगम बनाऊँगा। तुम गोलकुण्डाकी प्रधान महिषी होगी तुमसे मैं धर्मानुसार व्याह करूँगा।"

दिलजान सिसक सिसककर रोने लगी। रोती हुई बोली—"मैं बेगम होना नहीं चाहती आप मुझे छोड़ दीजिये। आप बादशाह हैं, प्रजाके माँ बाप हैं, आप यदि अन्याय करंगे तो न्याय कौन करेगा? मुझसे आपका व्याह नहीं हो सकता। मैं दूसरे की हो चुकी हूँ। उसके सिवा मैं दूसरे किसीके साथ भी व्याह नहीं कर सकती।"

कुतुब—क्या मालिककी बात कहती हो, मैंने तो कलही तुमसे कह दिया था, कि शीघ्र ही उसे शूलीपर चढ़ना होगा।

दिलजान—मैं आपके पैरों पड़ती हूं, उस बेचारेको छोड़ दीजिये वह अपने देशको चला जाय।

कुतुब—मैं उसको तभी छोड़ सकता हूँ, जब तुम मेरी इच्छा पूरी करो। मेरे प्रस्तावको स्वीकार करलो।

दिलजान—अगर मैं न स्वीकार करूँ?

कुतुब—तो तुम्हारे सामने खड़ा करके मैं तुम्हारे प्रेमिक मालिकको आरेसे चिरवाऊँगा। और उसीके खूनसे तुम्हें नहला कर मैं जबर्दस्ती अपनी इच्छा पूरी करूँगा।

दिलजानका हृदय काँप उठा, थोड़ी देरतक निस्तब्ध रहकर उसने एक लम्बी सांस लेकर कहा—"देखिये, मेरा मन बहुत खराब हो रहा है, मुझे एक महीनेका समय दीजिये इसके बाद मैं आपकी इच्छा पूरी करूँगी। परन्तु इतने दिन तक आप मालिकको हिफाजतसे रखनेका प्रबन्धकर दीजिये।

कुतुब—अच्छा, यही सही, मैं एक महीनेका समय देता हूँ, तीसवें दिन तुम मेरी बेगम बनोगी तो अच्छा ही है, नहीं तो एक-तीसवें दिन मालिककी हत्या भी होगी, और मेरी इच्छा भी बिना पूरी हुए न रहेगी। चाहे जैसे हो।

इतना कहकर कुतुबशाह दिलजानके घरसे निकलकर बेगम नूरमहलके कमरेकी तरफ चले गये। थोड़ी ही देर में बेगम नूर-महलका प्रकोष्ठ कामिनी कुलके मधुर संगीतसे ध्वनित प्रति ध्वनित होकर दिलजानके अशान्त मनको अधिक तर उद्वेलित करने लगा। वह सोचने लगी, हाय! मैंने एक महीनेका समय लिया है परन्तु एक महीनेके बाद क्या होगा? दादा कहते थे, कि एक महीनेके भीतर ही कोई बड़ा परिवर्तन होगा, उस समय मेरी दशा क्या होगी। न मालूम दादा इस समय कहाँ हैं, कैसे हैं, क्या उनसे एकबार फिर भेंट न होगी।

जिस समय नूरमहल बेगमका प्रकोष्ठ आमोद तरंगों और दिलजानका प्रकोष्ठ चिन्ता तरंगोंका आवास हो रहा था, उस समय मार्जिना बेगमका प्रकोष्ठ निरानन्दमय और विषादका आवास हो रहा था। आज न वह आलोकमालाके प्रकाशोंकी जगमगाहट है और न परिचारिका कुलकी वह मधुर गुंजार ध्वनि! ताखपर एक किरासनका चिराग टिमटिमा रहा है पासमें एक बाँदी भी नहीं मार्जिना एक तकियेके सहारे लेटी हुई अपने अतीत जीवनकी आलोचना कर रही है।

इतनेमें एक दासी आकर बोली—शाहजादी, मुझे बुलाया है?

मार्जिनाने कुछ देरतक दासीकी तरफ शून्य दृष्टिसे देख कर कहा—हाँ बुलाया है, लाओ एक ग्लास और शराब दो। इस चिन्तासे अपना जी छुड़ाऊँ, नहीं तो मेरा शिर खराब हो जायगा।

दासी यह कहती हुई चली गयी—"हाय ! शाहजादी ! तुम समझती हो, कि मैं अभी पागल नहीं हुई हूं, परन्तु तुम कभी की पागल हो गयी हो, तुम क्या जानो। इतने दिनतक तुमने जो पाप किया है, अब उसका अनुताप ही करके क्या करोगी ?

थोड़ी देरमें दासीने एक प्यालेमें शराब लाकर मार्जिनाके हाथमें दा। मार्जिना अपने काँपते हुए हाथसे प्याला पकड़कर एक साँसमें पी गई।

पहलेके पिये हुए शराबका नशा तो चढ़ ही रहा था, इस प्यालेने उसे एक बारगी बेसुध कर दिया, और वह पीड़ितकी तरह गम्भीर होकर बकने लगी—सुख, सुख, कहाँ है ? विलासमें, कभी नहीं ? मैं शाहजादी होकर भी सुखी नहीं हूँ, सुख कहाँ है, कोई बता दो, सुख कहाँ है ? मैं सुख चाहती हूं, ओह ! ओह ! पीड़ासे सारा बदन फटा जाता है, विषकी ज्वालासे सारा शरीर भस्म हो रहा है। अब मैं नहीं बच सकती। मरी, मरी, बचाओ कहकर मार्जिना बेगम गिरकर मूर्च्छित हो गयी।

मार्जिना आज अपनी दशासे संसारको दिखला रही है, कि पापका अनुताप मनुष्यको किस प्रकार दग्ध करता है।

---

जिसके लिये सैकड़ोंही पत्र हमारे यहाँ आये वही—

## उपन्यास-जगतका चमकता हुआ हीरा

# प्रायश्चित्त

अपनी अपूर्व सज-धज और अनूठे ठाठ बाठसे प्रकाशित हो धड़ाधड़ बिक रहा है। यह ऊँचे दर्जेका गार्हस्थ्य उपन्यास बङ्ग-भाषाके सुप्रसिद्ध विद्वान् श्रीयुत पं० क्षीरोदप्रसाद 'विद्याविनोद' एम० ए० के साहित्य-कौशलका उत्कृष्ट नमूना है, इसे अवश्य पढ़िये क्योंकि—

## यह शिक्षाका भंडार और साहित्यका शृङ्गार है

इसमें धन पाकर मनुष्यकी चित्तवृत्ति कैसे बदल जाती है। सच्चे और स्वाभिमानी मनुष्य किस तरह उसके धन वैभवमें लात मारकर उससे अलग हो जाते हैं। सती, पतिव्रता स्त्री किस तरह अपने भ्रष्ट परिवारके भ्रष्ट कार्य्योंके लिये स्वयं प्रायश्चित्त आदि करती हुई बलिदान हो जाती है। अगर आपको उच्च कोटिके सामाजिक उपन्यास पढ़नेका कुछ भी शौक हो तो इसे अवश्य मँगाइये, मूल्य ४५० पेजके बड़े पोथे का केवल ३) रेशमी जिल्द ३।।।)

मिलनेका पता—

## हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय

पो० बा० नं० ७०, ज्ञानवापी, बनारस सीटी।

# अन्यायका प्रतिकार

## चतुर्थ खण्ड

## पहला परिच्छेद

प्रातःकालीन निर्मल आकाशके पूर्व क्षितिजमें अग्निका एक अपरिमित गोला धधकता हुआ उठ रहा है। जिसकी ज्योतिसे सारा संसार उद्भासित हो रहा है, चिड़ियाँ जो रातमें अन्धेरेसे बैठी थीं प्रकाश देखकर चहचहाती हुईं घोंसले छोड़कर दल बाँधकर आहार अन्वेषणके लिये जा रही हैं। पशु जंगल-झाड़ियों घरों और खोहोंसे निकलकर चरनेके लिये मैदानमें जा रहे हैं, सभ्यताभिमानी मनुष्य भी शय्यासे उठकर आहार-चिन्तामें ही लगा है। सूर्य्योदयके साथ ही सभी चञ्चल और व्यस्त हो गये हैं।

इसी समय गोलकुण्डासे तीन कोसकी दूरीपर एक झाड़ीदार रास्ते होकर दो मनुष्य बातचीत करते हुए जा रहे हैं। रास्ता कंकड़ पत्थरों और खतरेकी झाड़ियोंसे भरा हुआ है। जिससे चलनेमें बड़ी असुविधा होती है, परन्तु उन असुविधाओंसे वे इतने अभ्यस्त मालूम होते हैं, कि अपने वार्तालापका सिलसिला तोड़कर एकबार उसपर ध्यान देना नहीं चाहते। इसी प्रकार बहुत दूरतक बातचीत करते हुए जानेके पश्चात् वे एक विशाल वट-वृक्षके नीचे जाकर बैठ गये। वट-वृक्षके निकट ही एक बहुत दिनका पुराना कुँआँ था।

दोनों पथिक वृक्षके नीचे बैठकर बातें करने लगे, धीरे धीरे दिन चढ़ने लगा, परन्तु उधर उनका तनिक भी ध्यान न था, उनके हाव भावसे मालूम होता था, कि वे अपने निर्दिष्ट स्थानपर आ पहुँचे हैं, अब उन्हें आगे नहीं जाना है।

धीरे-धीरे मध्यान्ह हुआ मध्यगगनावलम्बी सूर्य्य भगवान की प्रखर किरणोंसे संसार तपने लगा। आतपतापसे तपी हुई वायु भी लूककी तरह तपने लगी, परन्तु मुसाफिर इससे भी विचलित न हो, अन्य मन एक भावसे बैठे हुए बातें ही करते रहे।

सहसा वहाँ एक भव्य पुरुषने आकर पुकारा—'उदयसिंह!"

अब दोनों पथिकोंने उठकर आगन्तुकको प्रणाम किया, और कहा—"हमलोग बहुत देरसे यहाँ आकर बैठे हैं।

जो आये वह भास्करतीर्थ थे और जो दोनों पथिक सवेरेसे बैठे थे, उनमें एक उदयसिंह और दूसरा कृपानाथ नामका एक डाकू था।

भास्कर—पाँच सौ बन्दूकें और बीस कमान तैयार हैं।

उदय—बहुत हैं! गोला बारूद?

भास्कर—काफी हैं, इन कमानोंको पहलेहीसे ले जाकर ठीक ठीक स्थानपर रखना होगा।

उदय—जर्मनीसे जो मिकेनिक्स आया था, वह कहता था, कि एक प्रकारका ऐसा कमान तैयार किया जा सकता है, जिसे मट्टीमें गाड़ रखनेपर भी शत्रुओंके आनेपर उसमें आग लगाते ही उसके मसालेसे शत्रुकी सेना उड़ जा सकती है। क्या आपने वैसा गोला भी तैयार करवाया है?

भास्कर—नहीं।

उदय—क्यों ?

भास्कर—मनुष्य को मारनेका ऐसा गुप्त उद्योग करना अच्छा नहीं है। हाँ, उस मिस्त्रीसे मैंने कितने ही कमान और बन्दूकें बनवा ली हैं।

उदय—कुछ कमान क्या गोलकुण्डा भी भेजे जायँगे ?

भास्कर—तुमलोग वहाँके सभी नाके अच्छी तरह देख आये हो।

उदय—हाँ, भगवानके साथ मैं सात आठ दिनतक भिखमंगे के भेषमें गोलकुण्डाकी गली गलीमें घूम घूमकर सब स्थान तजबीज आया हूँ।

भास्कर—बहुत अच्छा, कुछ कमान पहाड़ी घाटीके मुहाने पर बैठाने चाहिये। कुछ नगरके बहिर्द्वारपर और कुछ नगरके भीतर, इसके लिये मैंने तुम्हें जिस प्रकार नकशा बतलाया है, उसी प्रकार कार्य्य आरम्भ करना।

उदय—आज्ञा शिरोधार्य्य।

जिस स्थानपर बैठकर भास्कर अपने शिष्योंके साथ बातचीत कर रहे थे, वहाँ से आध कोसकी दूरीपर एक पुराने राजभवन का खण्डहर था, वह खण्डहर चारों तरफसे भीषण जङ्गलसे ढका हुआ था। इस लिये वह स्थान बहुत निर्जन और निस्तब्ध था। स्थानकी निर्जनताके सिवा भूत, प्रेतके उपद्रवसे वह स्थान और भी परित्यक्त हो गया था। वहाँ दिन दहाड़े भी कोई जाने का साहस नहीं करता था, चार पाँच महीनेसे वहां भौतिक उपद्रव और भी बढ़ गया था। आजकल रातके समय अकसर

हड़-हड़ भड़-भड़ और "टन-टन" की आवाज सुन पड़ती थी। मानो कोई आदमी पत्थरपर हथौड़ी की चोट कर रहा हो ! ये भूत और कोई नहीं, भास्करीय डाकू थे; वहाँ जमीनके अन्दर अस्त्र शस्त्र तैयार करते थे।

# दूसरा परिच्छेद

उदयसिंह पूछा—"हसनसाहब कहाँ हैं ?"

भास्कर—पाँचबीबीके पहाड़पर नजरबन्दी हैं।

उदयसिंह—यह बहुत बहादुर आदमी है। क्या इसे काममें नहीं लगाया जा सकता ?

भास्कर—सारा आकाश मेघोंसे ढक गया है। बिजलीकी चमक भी मुहुर्मुहुः हो रही है। तूफान उठनेमें अब अधिक विलम्ब नहीं है ! इस समय छोटीसे छोटी शक्ति भी काम दे सकती है; हसनसाहब जैसे वीर योद्धासे बहुत बड़ा काम हो सकता है, इसमें सन्देह नहीं, परन्तु उनपर मेरा विश्वास नहीं होता।

उदय—क्यों ?

भास्कर—एक बार वह हमलोगोंसे अपमानित हो चुका है।

उदय—आज तक क्या उसे वह बात याद है ? यदि होती तो क्या वह हमलोगोंके दलमें आकर मिलता ?

भास्कर—इसीलिये तो सन्देह होता है।

उदय—इसमें सन्देहकी क्या बात है। वह कुतुबशाहसे अपमानित और लाञ्छित होकर हमलोगोंके पास आया है।

भास्कर—जो आदमी स्वजातीय और स्वधर्मीसे लाञ्छित और अपमानित होकर विजातियका आश्रय लेता है, उसका क्या ठिकाना ? उसपर विश्वास नहीं किया जा सकता ! जो अपने

स्वार्थके लिये स्वदेश और स्वजातिका शत्रु होता है; उसपर मैं विश्वास नहीं कर सकता।

उदय—उसने प्रतिज्ञा की है।

भास्कर—कैसे प्रतिज्ञा की है ?

उदय—कुरान छूकर।

भास्कर—इससे क्या हुआ ?

उदय—प्रतिज्ञा भंग करेगा, तो नरक भोगेगा।

भास्कर—और प्रतिज्ञा पालन करके क्या वह स्वर्गमें जायगा ? देश द्रोहीसे बढ़कर नारकी और कौन है ?

उदय—अपनी इच्छासे उसने यह काम नहीं किया है।

किसी रमणीने उसे आसन्न मृत्युसे बचाकर आपके चरणोंमें भेज दिया है।

भास्कर—जो स्त्रियोंके कहनेपर मरता, जीता और कर्त्तव्यसे विमुख होता है, वह भी क्या पुरुष है ? भास्करतीर्थ वैसे कादर मनुष्योंकी सहायता नहीं चाहता।

उदय—क्षमा करेंगे। स्त्रियाँ मनुष्य नहीं हैं, उनके विषयमें आप जब तब, ऐसा विचार क्यों प्रकट करते हैं ?

भास्कर—इससे तुम्हें क्रोध होता है क्या ?

उदय—नहीं, नहीं क्यों आप ऐसा कहा करते हैं, यही जानना चाहता हूं।

भास्कर—स्त्रियाँ जब पुरुषोंकी संगिनी हैं, तो वे मनुष्य तो अवश्य ही हैं। पुरुष-हृदयमें जो विराट-चैतन्य है, स्त्री-हृदयमें भी वही चैतन्य है। पुरुषमें जो आत्मा है, स्त्रीमें भी वही है। अन्तर सिर्फ आकारका है।

उदय—अच्छा, तो वे तुच्छ क्यों समझी जाती हैं?

भास्कर—कौन तुच्छ समझता है। जिनकी अमृत धाराके बिना हम एक दिन भी जी नहीं सकते, उन्हें तुच्छ कौन कह सकता है?

उदय—परन्तु?

भास्कर—परन्तु यही है, कि स्त्री और पुरुषका शरीर और जीवन दो प्रकारके आधारोंसे गठित है। दोनोंमें ही शक्तियोंका विकास है। रमणी, स्नेह, दया, माया, सन्तान पालन और गृह कर्म करेगी और पुरुष ज्ञानशिक्षा, ज्ञान प्रचार, अर्थोपार्जन, युद्ध विग्रह और स्वदेश रक्षा आदि कार्य्य करेगा। पुरुषके कार्य्यमें स्त्री हस्तक्षेप करेगी, यह नहीं हो सकता। और जो पुरुष स्त्रियोंके कहनेके अनुसार कार्य्य करता है, वह भी क्या मनुष्य है?

उदय—मैं समझ नहीं सका। जिसे प्यार करता हूं, उसकी बात क्यों नहीं सुनूंगा?

भास्कर—प्यार क्या चीज है?

उदय—जिसे प्रेम कहते हैं।

भास्कर—( हँसकर ) प्रेम किसे कहते हैं?

उदय—प्रेम क्या है, क्या यह आपको समझाना होगा?

भास्कर—शास्त्रोंमें प्रेम और कामके भिन्न भिन्न लक्षण विषद रूपसे वर्णित हैं, जिससे कृष्णेन्द्रियकी परितृप्ति होती है, वही प्रेम है। और जिससे आत्मेन्द्रियकी परितृप्ति होती है, उसे काम कहते हैं। तुम स्त्री पुरुषके जिस प्रेमकी बात कहते हो, वह काम है, प्रेम नहीं।

उदय—एक एक करके समझने दीजिये। कृष्णेन्द्रिय परितृप्ति क्या है? और वह कैसे होती है?

भास्कर— पहले बताओ, कृष्ण किसे कहते हैं?

उदय—आपहीका सीखाया कहता हूँ, कृष्ण पूर्णावतार भगवान—परब्रह्म हैं।

भास्कर—जो परमेश्वर या परब्रह्म है, उसे इन्द्रिय कहा है, और इन्द्रिय न होनेसे उसको परितृप्ति क्या होगी?

उदय—आप जानें।

भास्कर—हाँ देखनेमें तो यह बात बिल्कुल सामञ्जस्य हीन मालूम होती है, परन्तु असल बात यह है, कि भगवान विश्वरूप हैं, सारा विश्व उन्हींमें है, और वे सभी विश्वमें हैं। इसलिये उनकी इन्द्रियकी परितृप्ति करनेके लिये विश्वकी इन्द्रिय परितृप्ति करनी पड़ती है।

उदयसिंहने नीचा मुँह करके मुस्कुरा दिया। भास्करने वक्र दृष्टिसे उनकी तरफ देखकर मुस्कुराते हुए कहा—"पाजी! तुम्हारी इस आपत्तिका खण्डन भी अपने आप हो जाता है। आत्मेन्द्रियकी परितृप्तिका नाम काम है। इसलिये काम-वर्जित (विहीन) होकर संसारकी सेवा करना ही कृष्णेन्द्रियकी परितृप्ति है। इसीका दूसरा नाम प्रेम है।

उदय—स्त्री पुरुषमें जो प्रणय होता है, क्या वह प्रेम नहीं है?

भास्कर—नहीं।

उदय—वह क्या है?

भास्कर—काम।

उदय—बात अच्छी तरह समझमें नहीं आयी, स्त्री-पुरुषका पवित्र और धार्मिक प्रणय क्या प्रेम नहीं है?

भास्कर—इस संसारमें कौन किसकी स्त्री है? तुम जिसे अपनी स्त्री समझते हो वह सम्भवतः मन ही मन किसी दूसरे हो को पति माने बैठी है। आज जो तुम्हारी स्त्री है, सम्भवतः वह पहले जन्ममें किसी दूसरेकी अंकशायिनी थी। हिन्दू समाजकी बात यदि छोड़ दो तो एक ही जन्ममें कल जो स्त्री एक मनुष्यकी थी, वही आज दूसरेकी हो सकती है।

उदय—यदि हृदय भरकर कोई स्त्री एक ही पुरुषको प्यार करे?

भास्कर—यदि करे तो वह मूर्ख है। यदि ऐसी कोई निश्चिता होती कि मरनेके बाद भी वही प्रेमिक उसका पति होता, तो मैं उसके प्रेमको सार्थक समझता। हाँ, मरनेपर भी पूर्व जन्मकी कोई वस्तु मिल सकती है, तो केवल धर्म है।

उदय—तब तो हिन्दू शास्त्रोंमें पुनर्विवाहकी व्यवस्था न होना अनुचित है?

भास्कर—ईश्वर अनन्त है—परन्तु मनुष्य उसका परमाणु-विकास है, इसलिये शान्त है।

स्त्रियाँ अल्प बुद्धि होती हैं, विश्वरूपके अनन्तरूपको वे हृदयमें धारण नहीं कर सकती हैं। इसलिये स्वामीरूप शान्त-ईश्वरकी आराधना करनेके लिये उन्हें व्यवस्था दी गई है, धीरे धीरे वे इसी शान्तके अनुभवसे अनन्तका अनुभव कर सकती हैं। जो तमोगुणावलम्बी होते हैं, उन्हें एक ऐसे मनुष्यकी नितान्त आवश्यकता पड़ती है।

उदय—कुछ समझमें नहीं आता, आपके मनमें जो आता है, वही कहते जा रहे हैं। आपने अभी कहा है, कि प्रणय मात्र

ही काम है और अब कह रहे हैं, कि स्त्री स्वामीको प्यार करती है और पूजा करती है। वह भी धर्मका ही अङ्ग है, स्वामी स्त्रीका मनुष्य रूपमें देवता है, क्या यह भी काम सम्भूत नहीं है ?

भास्कर—उपासना भी क्या दो प्रकारकी नहीं है ? एक सकाम उपसना, और दूसरी निष्काम। स्त्री जब स्वामीके साथ गृहस्थी चलाती है, जब इष्ट देवता मानकर उसकी पूजा करती है, जब सन्तान सन्ततिका पिता मानकर उसकी भक्ति करती है, जब अन्न दाता, वस्त्र दाता और प्रतिपालक समझकर उसका भय करती है, तब वह अपने इष्टदेवताकी सकाम उपासना करती है। जब स्वामी वियोग विधुरा रमणी अपने हृदयमें सर्वदा अपने मृतस्वामीको अनुभव करके आत्मीय स्वजनोंकी सेवा, गृहस्थीकी परिचर्य्या, जीव दया आर्त्त-शुश्रूषा आदि महत् कार्य्य करती है, तब उसे निष्काम उपासना कहते है।

उदय—तो आपके मतानुसार विवाह न करना ही अच्छा है, परन्तु विवाह न करनेसे सृष्टिका कार्य्य कैसे चलेगा।

भास्कर—विवाह करना, सन्तान पालन करना, गृहस्थि का काम करना, कर्त्तव्य है। इसलिये ये कार्य्य करने चाहिये, सिर्फ एक स्त्रीके लिये घटनास्रोतमें डूबकर गोते लगाना भी अच्छा नहीं है।

कहीं एक दिन कोई सुन्दरी युवती देखी, कहीं वङ्किम कटाक्ष-से मोहित हुए, कहीं आदर अभ्यर्थनासे गलकर पानी पानी हो गये और उसके लिये विरह-सङ्गीत गाते हुए अघटन घटानेका धुनिमें लगे, यह मूखताके सिवा और कुछ भी नहीं है। विवाह एक धार्मिक बन्धन है, उसे कर्त्तव्य समझ कर ही करना चाहिये।

उदय—क्या कर्त्तव्य है और क्या कर्त्तव्य नहीं है, इसका निर्णय कैसे हो सकता है ?

भास्कर—प्रत्येक जातिके धर्मोंमें ही कर्त्तव्याकर्त्तव्यका निर्देश है।

उदय—अच्छा एक और भी बात पूछनी है ?

भास्कर—पूछो।

उदय—आप कहा करते हैं कि अशरीरी, अव्यय, परब्रह्मी हमलोगोंको कर्मका आदर्श दिखलानेके लिये जन्म ग्रहण करते हैं। कारण मनुष्य शान्त है, वह परब्रह्मके अनन्तरूपका आदर्श नहीं ग्रहण कर सकता, भगवान श्रीकृष्ण पूर्ण अवतार हैं, वह कर्मका आदर्श दिखला गये हैं।

भास्कर—हाँ !

उदय—उन्होंने जिस प्रकार कार्य्य किया है, क्या हम भी उसी प्रकार करें ?

भास्कर—वस्त्र हरण, कुञ्जकेलि, दधिचोरी और मटकी फोड़नेकी इच्छा है क्या ?

उदय—इसमें दोष क्या है, वह तो रास्ता दिखलाही गये हैं।

भास्कर—उन्होंने कानी उंगलीपर गोवर्धनको उठाया था, पूतना राक्षसीका वध किया था, जहरीले कालीको दमन किया था, क्या तुम भी ऐसा कर सकते हो ?

उदय—उनकी शक्ति बड़ी थी, इसलिये उन्होंने बड़े बड़े काम किये थे, हमारी शक्ति छोटी है, परिमित है, इसलिये हम लोग उसीके अनुसार परिमित योग्यताके कार्य्य करेंगे। उन्होंने गोवर्धन धारण किया था, मैं एक शिला ही उठा सकता हूं। परन्तु परोपकारके लिये क्या मुझे यह छोटा काम करना ही उचित नहीं

है ? उन्होंने माधुर्य रसके विकास और आस्वादनके लिये परस्त्री-से प्रेम किया था, सोलह सौ गोपियोंसे विहार किया था, और यदि आजकल कोई एकहीसे करे तो क्या दोष है ? उन्होंने विवाह किया था, असंख्यों पुत्र उत्पन्न किये थे, मनुष्य भी यदि उन्हींका आदर्श-अनुशरण करे तो क्या हानि हो सकती है ?

भास्कर—उन्होंने क्या किया है, यही देख रहे हो, क्यों किया है ? यह भी साथ साथ क्यों नहीं देखते, मनुष्य मोहित होकर स्त्रीके प्रति आसक्त हो जाता है, जरा तिरछी चितवन गोलगाल मुँह देखकर और दो चार प्रेम और भूलने भूलानेकी बातें सुनकर ही कर्त्तव्य और विवेकको चूल्हेमें डाल देता है। भगवानने यहां दिखलाया है, कि सोलह सौ सुन्दरी युवती गोपिकायें "तुमहि गति मोर" कहती हुई व्याकुल भावसे पुकार रही हैं, परन्तु उन्हें तनिक भी मोह नहीं है, ज्योंही कर्त्तव्यकी पुकार हुई, वह मथुरा चले गये। एकबार वृन्द्रावनकी तरफ फिरकर देखा भी नहीं ! विवाह आदि करके वहाँ उन्होंने छप्पन कोटी यदुवंशियोंको उत्पन्न किया और स्वयं ही षड़यन्त्र करके सबका ध्वंस भी करवा डाला। इस प्रकार उन्होंने संसारके सामने यह आदर्श रखा कि धन, ऐश्वर्य्य और शक्तिका अभिमान करना मूर्खता है ! देखो ! मैं ही सबकी सृष्टि करता हूं, और मैं ही सबका ध्वंस भी करता हूं, इसलिये तुमलोग कर्त्तव्यसे च्युत मत होओ।

उदयसिंहने पुलक पूरित नेत्रोंसे अपने गुरुदेवके मुखक तरफ देखकर उनका पदाम्बुजरज ग्रहण किया। इसके बाद कोई बातचीत नहीं हुई, थोड़ी देरतक बैठे रहकर तीनों आदमी वहासे उठकर चले गये।

# तीसरा परिच्छेद

रूपमें जैसे तृष्णा है, वैसे मादकता भी है, और वैसे ही दाहिका-शक्ति भी है। तृष्णा है, इसलिये रूप देखनेकी व्याकुलता होती है। देखनेमें एक प्रकारका नशासा हो आता है, जिससे मनुष्य उन्मत्त होकर भले बुरेका ज्ञान खो बैठता है। और इसके बाद ही रूपकी आगमें उसे जलकर भस्म होना पड़ता है।

दिलजान अपूर्व सुन्दरी है, उसकी सुन्दरताने शाहकुतुबको पागल बना दिया है। यही नहीं उसने नवाबका सर्वनाश कर डाला है, जो आगे पढ़नेसे ही मालूम होगा।

शाहकुतुबका एक एकलौता जवान बेटा था, जिसका नाम उमराज था, उमराज एक दिन दिलजानको देखकर उसके भुवन-मोहन रूप पर मुग्ध हो गया था, अब पिता पुत्र दोनों एक ही रमणीकी रूप-अग्निमें दग्ध होने लगे। उमराजके हृदयमें भी दिलजानको प्राप्त करनेकी ही चिन्ता लगी। एक दिन उसने एक दासीके द्वारा दिलजानसे भेंट करनेकी प्रार्थना की परन्तु पहले तो दिलजानने भेंट करना अस्वीकार कर दिया, परन्तु दूसरी बार उमराजने दासीसे कहला भेजा कि—दिलजानके दादासे भेंट हुई थी, उन्होंने बहुत कुछ कहनेको कहा है। यदि वह (दिल-जान) मुझपर कृपा करें तो मैं अपने पितासे भी शत्रुता कर सकता हूँ, यहाँ तक कि संन्यासीके साथ षड़यन्त्र करके अपने पिताको मारकर स्वयं राजगद्दीपर बैठ सकता हूँ और तुम्हें ही

बड़ी बेगम बना सकता हूँ, मैं दिलजानकी इच्छाके अनुसार ही काम करूँगा, अपने पिताकी तरह जोर जबर्दस्ती न करूँगा। मैं पहले उसका उद्धार करके उसके दादाको सौंप दूँगा, यदि वह मेरे साथ उसका विवाह कर देंगे तभी मैं उसको ग्रहण करके कृतार्थ होऊँगा।

दासीके मुखसे उमराजकी बातें सुनकर दिलजानने कहला भेजा—"दादाकी खबर वह क्या जानते हैं, जल्द कह जायँ। और मेरे सम्बन्धमें जो बन्दोबस्त करना चाहते हैं जल्दी करें; परन्तु यदि वह मेरे साथ अभी किसी प्रकारका दुर्व्यवहार करने की चेष्टा करेंगे तो मैं बादशाहसे सब बातें कह दूँगी।"

दासीने जाकर उमराजसे ये बातें कहीं, इससे उसके आनन्दकी सीमा न रही।

इधर मालिक हिरासतमें रहकर अपने भाग्यको कोस रहा है, नित्य ही वह जल्लादके आनेकी प्रतीक्षा करता है, परन्तु जल्लाद तो आना दूर रहा, रोज अच्छेसे अच्छा खाना आता है। मालिककी समझमें कुछ भी नहीं आता, कि मामला क्या है। एक दिन संध्या समय मालिक जेलखानेमें बैठा हुआ अपने उद्धारके विषयमें संकल्प विकल्प कर रहा था, वह सोच रहा था, कि किसी प्रकार मैं छुटकारा पाऊँ तो तुरन्त अपने भैयाके पास दौड़ जाऊँ और उनकी सहायतासे दिलजानको भी छुड़ानेकी चेष्टा करूँ। परन्तु इस प्रहरी परिवेष्टित काराप्राचीरसे निकल कैसे सकता हूँ?

इसी समय काराध्यक्षने आकर पूछा—"क्यों महाशय! बैठे बैठे क्या सोच रहे हैं?"

मालिक—अपने भाग्यकी बात।

काराध्यक्ष—सो तो सभी सोचते हैं।

मालिक—चारों तरफ देखकर सहसा बोल उठा—"महाशय! आप मुझे बहुत प्यार करते हैं, इसलिये एक बात....."

काराध्यक्ष—क्या बात?

मालिक—यदि आप भरोसा दें!

काराध्यक्ष—मुझे फायदा?

मालिक—मेरे पास कुछ अशर्फियाँ हैं।

काराध्यक्ष—हैं, तो क्या होगा?

मालिक—मैं उन्हें आपको देना चाहता हूं।

काराध्यक्ष—क्यों! क्या आप कोई काम कराना चाहते हैं?

मालिक—जी हाँ, यदि आप मेरा एक काम करदें तो एक सौ अशर्फियाँ पा सकते हैं।

गरीब काराध्यक्षकी आँखें चमक उठीं, उसने कहा—"मैं आपके लिये सब कर सकता हूँ, परन्तु आपको जेलसे बाहर नहीं कर सकता।

मालिक—अमीर मीरजुमलाको तो आप जानते हैं।

काराध्यक्ष—हाँ।

मालिक—उन्हें मैं एक पत्र दूँगा। उनके पास पहुँचा देना होगा।

काराध्यक्ष—अच्छा, अशर्फियोंके साथ उसे दीजिये।

मालिकने तुरत सैकड़ों अशर्फियोंके साथ मीरजुमलाके नाम का एक पत्र दे दिया। पत्रमें इस प्रकार लिखा था।

"भैया! मैं विपदमें फँसा हूँ। एक असहाय स्त्रीकी रक्षा

करनेके अपराधमें नवाबने मुझे फाँसीका हुक्म दिया है। महीनों से मैं जेलमें हूं, फाँसी क्यों नहीं होती समझमें नहीं आता! अनुमानसे मालूम हो रहा है कि गोलकुण्डाके राजनीतिक आकाशमें बादल घिर आये हैं, शीघ्र ही तूफान उठेगा। आप मेरे सहोदर हैं—शक्तिशाली हैं—मेरा उद्धार कीजियेगा।

काराध्यक्षके हाथमें पत्र देकर मालिकने कह दिया—"इस पत्रपर मेरा जीवन मरण निर्भर है। किसीको दिखलाइयेगा नहीं।"

परन्तु मालिकको क्या मालूम था, कि विश्वासघात करनेके लिये ही काराध्यक्षने यह ढोंग रचा है। काराध्यक्षका काम ही है, अपने कैदियोंके पेटकी बात जान लेना, और कौन किससे षड़यन्त्र कर रहा है, इसकी खोज खबर रखना।

मालिकका पत्र पढ़कर काराध्यक्ष स्तम्भित हो गया। राजनीतिक षड़यन्त्र! मीरजुमलासे षड़यन्त्र!! वह उलटे पैर राजदरबारमें पहुँचा और उस पत्रको पेशकारके दफ्तरमें पहुँचा आया।

दूसरे दिन पहरभर दिन चढ़नेपर कुतुबशाह जब दरबारेखासमें आ विराजे तब पेश्कारने अन्यान्य पत्रोंके साथ मालिकका पत्र भी पेश किया। पत्र पढ़ते पढ़ते पेशकार स्वयं काँपने लगा—और शायद मन ही मन सोचने लगा; यदि पहले यह पत्र पढ़ लिया होता, तो बेचारा गरीब बच सकता था।

पत्र सुनकर बादशाह एक साथ ही क्रोध और विस्मयसे अभिभूत हो गये। एक तो मीरजुमला पर वह यों ही जले भुने हुए थे। दूसरे यह उसका भाई है, और उन्हींके साथ षड़यन्त्र

कर रहा है। और शीघ्र ही तूफान उठेगा। इसका क्या माने है ? कोई मेरे विरुद्ध षड़यन्त्र तो नहीं कर रहा है ? अच्छा, इसका अनुसंधान भी करना चाहिये और आज दिलजानकी मुहलतका तीसवाँ दिन है, और एक दिन भी मैं अपेक्षा नहीं करूँगा। आज ही अभी दिलजानके पास चलता हूं। यदि वह मेरी बात माने तो अच्छा ही है, नहीं तो बल प्रयोग करूँगा। और मालिकको तो किसी प्रकार जीता छोड़ा ही नहीं जाता।

बादशाहकी आँखें क्रोधसे धधक उठीं। उन्होंने कहा—जिसके पास जैसा लिखनेकी जरूरत हो लिख दो मेरी तबीयत अच्छी नहीं है। अन्दर महलमें जाता हूं।

पेशकारने तुरत ही बहुतसे कोरे कागज लाकर बादशाहसे दस्तखत और मुहर करवा लिया। बादशाहके चले जानेपर पेशकारकी खुशीका ठिकाना नहीं रहा। उसने मनही मन कहा—"ईश्वर तुम्हें धन्यवाद !"

अब मैं मीरजुमलाका कुछ उपकार कर सकता हूँ।

# चौथा परिच्छेद

क्रोधोन्मत्त नवाब बहादुर बिना खबर दिये ही दिलजानके दरबाजेपर जा पहुँचे। परन्तु बिना हुक्मके भीतर न प्रवेश कर सके क्योंकि बेगम महलका ऐसा ही नियम था।

बाँदी बाहरहीसे पुकारकर खबर दे गयी, दिलजानका हृदय काँप उठा। क्योंकि सामने ही एक सुन्दर युवक भयविह्वल दृष्टि से उसकी तरफ ताक रहा था ?

युवकने धीरेसे कहा—"मुझे हौजमें बन्द करके ढकनेसे ढाँक दो।"

इतना कहकर युवक तुरत हौजमें कूद पड़ा, दिलजानने ढकना बन्द करके दरवाजेके सामनेका पर्दा उठा दिया।

बादशाहने अत्यन्त स्पष्टरूपसे अनुभव किया था, कि इस कमरेमें दो आदमी हैं। इसलिये भीतर प्रवेश करके उन्होंने ध्यान देकर चारों ओर देखा, परन्तु कहीं कुछ भी दिखलाई न पड़ा। दिलजानके मुखकी तरफ देखा, वह भी पीला पड़ गया था।

जलती हुई आगमें घड़ेका घी पड़ा, कुतुबने सोचा—ये सभी षड़यन्त्री हैं, मेरे विरुद्ध षड़यन्त्र कर रहे हैं। पहले इसके गुण प्रणयीका खात्मा करूँ फिर मालिकको इसके सामने मरवाऊँ, तब इससे बातचीत होगी। इसी प्रकारकी जल्पना कल्पना करते हुए वह तुरत कमरेसे बाहर निकल एक खोजाको बुलाकर बोले–

गरम जलका पाइप खोल दो। दिलजान बेगमके कमरेमें गरम पानीकी जरूरत है।

बेगमोंके स्नान करनेके लिये घर-घरमें पीतलोंके हौज रखे रहते थे, और उसमें पाइप लगे होते थे। जब पानीकी जरूरत होती थी तब खौलते हुए एक बड़े हौजसे सभी हौज मिनटोंमें भर दिये जाते थे! इस प्रकारके बन्दोबस्तसे भृत्योंको घर-घर जल गरम करनेकी और पहुँचानेकी जरूरत नहीं पड़ती थी।

खोजाको हुक्म देकर कुतुबशाह दिलजानके कमरेमें लौट आये, और आतेही शय्यापर बैठकर बोले—"मेरी बात माननेको तैयार हो न?"

दिलजान कुछ जवाब न दे सकी, वह चुपचाप खड़ी ही रही, कुतुबने फिर कड़ककर कहा—"बोलती क्यों नहीं?"

इस बार दिलजानने उनकी तरफ देखकर कहा—"अभी मुहलतका दिन तो पूरा नहीं हुआ है।"

बादशाह—बहुत समय दे चुका हूँ, अधिक नहीं, आज जो करना होगा करूँगा।

दिलजान—क्या करेंगे?

बादशाह—योंही राजी न होओगी तो बल प्रयोग करूँगी।

दिलजान—डरसे काँप उठी, और बादशाहके मुखकी तरफ देखती हुई बोली—"ऐं! यह क्या? हौजमें यह सों सोंकी आवाज कैसी हो रही है?"

बादशाह—गरम जल आया है, ढकना खोल दो।

दिलजान थर-थर करके काँपने लगी, रुंधे गलेसे बोली—इस समय गरम जल क्यों आया?

बादशाह—मालूम होता है, किसी बेगमको गरम जलकी जरूरत पड़ी है, एक ही पाइपसे सभी घरोंमें जल आता है, इसलिये यहाँ भी आ गया है।

दिलजान तिसपर भी उठी नहीं, वह हौजकी तरफ देखती हुई थर-थर काँपने लगी।

बादशाहने भीषण गर्जन करके कहा—"शैतानकी खाला! मैंने समझा था, कि साधु संन्यासीके पास रहकर तूने अच्छी शिक्षा पाई है। अब मालूम हुआ कि पुष्पमें भी कीर होता है। दोही चार दिनोंमें तूने इस महलके अन्दर अपना प्रेमिक भी जुटा लिया, और मेरे सामने तू सती बन जाती है। अच्छा रहो आज तुम्हें मजा चखाता हूं, अभी ढकना खोलकर देखो, तुम्हारे प्रेमिक प्रवरकी क्या दशा हो रही है।"

इतना कहकर उन्होंने खोजाको बुलवाकर एक आदेश पत्र लिखकर काराध्यक्षको देनेको कहा। उसमें लिखा था—"अभी मालिककी हत्या करके उसका सिर दिलजानबेगमके महलमें भेज दो।"

आदेश पत्र लेकर खोजा चला गया। दिलजान हतबुद्धि होकर बादशाहके मुँहकी ओर देखती ही रह गयी। बादशाहने एक दूसरे खोजेको बुलाकर हुक्म दिया—"हौजका ढकना खोल दो।"

ढकना खोलते ही खौलता हुआ गरम जल हौजमें भक भक करके गिरने लगा। और क्षण ही भरमें सारा जल खूनसे लाल हो उठा। बादशाह चौंककर उठ खड़े हुए और बोले—ठीक ही तो अनुमान किया था, खोजा! ऊपरका पेंच घुमाकर देख तो मोरीमें क्या गिरा है?

खोजाने वैसा ही किया और मोरीमें झाँककर काँप उठा। काँपते हुए ही उसने कहा—"खुदाबन्द इसमें एक लाश है।"

बादशाह—बाहर निकाल।

खोजा—अकेले नहीं निकाल सकूँगा।

बादशाह—एक और खोजेको बुला ला।

अब दो खोजोंने मिलकर लाशको बाहर निकालकर फर्श-पर रखा।

काले नागके काटनेसे जैसे आदमी दश हाथ दूर जाकर गिरता है, वैसे बादशाह भी उस लाशको देखते ही कूदकर गिर पड़े। और चिल्लाकर रो उठे—"हाय! क्या हुआ? हमारे प्राणोंसे प्यारे उमराजकी यह लाश है।"

गोलकुण्डाधिपति बादशाह शाहकुतुब दीन-हीनकी तरह धरती पीट-पीटकर रोते हुए फर्शपर पछाड़ खाने लगे, अपने हाथों अपने एकलौते पुत्रकी हत्याकी। शैतानी दिलजानके लिये उन्होंने अपने वंशकी बत्ती बुझाई।

इसी समय खोजा दौड़ा आकर हाँफता हुआ बोला—जहाँपनाह! अभी दो मिनट हुआ, मालिक कारागारसे चला गया है, आपहीका हुक्मनामा देखकर पहरेदारोंने उसे छोड़ दिया है।

पुत्र शोकातुर बादशाह स्तम्भित हो गये, दुःखपर दुःख शैतानीपर शैतानी। उन्होंने सोचा, दिलजानने ही उमराजसे गुप्त षड़-यन्त्र करके मालिकको छुड़वा दिया है, ऐसा सोचते ही उनका सारा क्रोध दिलजानके ऊपर आकर पड़ा। दाँत पीसते हुए उन्होंने कहा—"हाय, पिशाचिनी दिलजान! तूने मेरा सर्वनाश कर डाला। आ तुझे अभी इसका मजा चखाऊँ।"

इतना कहकर उन्होंने दिलजानको पलंगसे खींचकर नीचे उतार लिया और कमरसे पैनी तलवार खींचकर उसके कोमल वक्षस्थलमें तलवारको जड़तक भोंक दिया। दिलजान एक शब्द भी कहनेका समय न पा सकी। भगवानसे अन्तिम प्रार्थना भी न कर सकी।

# पाँचवाँ परिच्छेद

सिरमें कीड़ा पड़नेपर कुत्ता जैसे एक जगह स्थिर न रहकर चारों ओर भौंकता फिरता है, उसी प्रकार पुत्रशोकातुर कुतुबशाह पागलोंकी तरह चारों ओर दौड़ दौड़कर विलाप करने लगे ! एक मात्र सुशील पुत्र-राज्यका उत्तराधिकारी उसको बाप एक औरत-के लिये अपने हाथों मार डाले इससे बढ़कर उसके लिये अनु-ताप और शोककी बात क्या हो सकती है। भीतर सभी महलोंमें दौड़ आनेपर जब कहीं भी उन्हें शान्ति न मिल सकी तब वह पागलोंकी तरह दौड़ते हुए दरबारमें चले आये।

मन्त्रिमण्डल और दरबारी भी इस अप्रत्याशित शोकसे दुःखित हो रहे थे। बादशाहके आनेपर सभी उन्हें प्रबोध देनेकी चेष्टा करने लगे। परन्तु सूखे हुए वृक्षमें पानी डालनेसे क्या हो सकता था।

प्रधान अमात्य इतनी देर तक उपस्थित नहीं थे। वह विशेष काममें इतनी देरतक कहीं व्यस्त थे। दरबारमें आते ही वह हाथ जोड़कर खड़े हुए कुतुबशाह उन्हें देखते ही चिल्लाकर रो उठे—मन्त्रीवर ! आज मेरा सर्वनाश हो गया। मेरा प्राणाधार उमराज अब नहीं रहा।

मंत्री भी रो पड़े और आँखें पोंछते हुए बोले—जहाँपनाह ! ऐसे दुस्समयमें एक बात कहते भय भी होता है, और लज्जा भी होती है, परन्तु खबर बहुत भयानक है।

बादशाह—कहो, मेरे उमराजकी मृत्युसे बढ़कर भयानक खबर क्या हो सकती है ?

मंत्री—हुजूर, खबर अशुभ नहीं है, परन्तु समयके अनुसार खराब ही है, दिल्लीके बादशाह शाहजहाँके जो वकील यहाँ आनेवाले थे, वह डेकानसे लौटकर दिल्ली जा रहे हैं। यहाँ सीमाने पर बहुत बड़ी सेनाके साथ ठहरे हुए हैं।

बादशाह—उनका मतलब क्या है ?

मन्त्री—आपसे एकबार भेंट करना चाहते हैं, आपहीसे बातचीत करके सन्धिकी कोई शर्त तैयार करेंगे।

बादशाह—मैं जाऊँगा, रोनेसे क्या होगा ? काममें लगे रहनेसे शोकसे तो छुट्टी मिलेगी।

मन्त्री—आज ही भेंट करनेका उनका अनुरोध है, क्योंकि कलही वह दिल्ली लौट जाना चाहते हैं।

बादशाहने तुरत सेनापतिको समरसज्जा करनेका हुक्म दिया। मन्त्रिमंडल भी सज-धजके नवाबके साथ चलने को तैयार हुआ, बड़ी धूम-धाम और लाव-लश्करके साथ कुतुबशाह मुगल शिविरके पास जा पहुँचे, जो नगरसे सिर्फ एकही कोसकी दूरीपर था।

शिविरके सामनेके मैदानमें कुतुबशाह अपनी फौज लेकर पहुँचे ही थे, कि उनके प्रधान सेनापतिने दौड़ते हुए कहा—"जहाँपनाह ! लक्षण तो अच्छे नहीं दीखते। देखिये, मुगलसेना व्यूह बनाकर हमें चारों ओरसे घेरना चाहती है।"

बादशाह काँपते हुए चारों ओर देखने लगे, सचमुच सेनापतिकी ही बात ठीक थी। बादशाहके मनमें आशंका उत्पन्न हुई, राजदूतसे मिलनेके लिये जैसी तैयारीके साथ आना चाहिये

वैसीही तैयारीके साथ वह आये थे। समरसज्जा गोला बारूद आदि सामानोंको वह अपने साथ नहीं ला सके थे। इधर शत्रु की सेना चारों ओरसे उमड़ी हुई चली आ रही है। इसी समय कुतुबशाहके एक दूतने हाँफते हुए आकर कहा—"जहाँपनाह! दगा हुआ। जो आये हैं, वह वकील नहीं है, स्वयं औरङ्गजेब है। मीरजुमला और डेकानके नवाब भी उनके साथ हैं, आपको मारकर मीरजुमलाको गोलकुण्डाकी राजगद्दीपर बैठानेकी शाहजादेकी इच्छा है। आप यदि जान बचाना चाहें तो गुप्तवेशमें भाग जायँ।"

इस अतर्कित विपदसे कुतुबशाह एक बारगी हतबुद्धि हो गये! अब सोचने विचारनेके लिये एक क्षणका भी समय न रहा, मन्त्रीगण भी किंकर्त्तव्य विमूढ़ हो गये। अन्तमें भागना ही निश्चित हुआ, कुतुबशाहने हाथीसे उतरकर अपना सारा लिबास खोल डाला और एक सैनिकका भेष धारण करके सेनासे निकलकर घोड़ा दौड़ाकर भाग चले।

बेगममहल, राजप्रासाद, गोलकुण्डाका सिंहासन और अतुल ऐश्वर्य्य पीछे पड़ा ही रह गया।

# छठा परिच्छेद

कुतुबशाह अपनी जान लेकर भाग तो गये, परन्तु उनकी मुट्ठीभर सेना औरंगजेबकी विपुल वाहिनी (सेना) से क्षण ही भरमें घिर गई, और शीघ्रही भीषण कामान गर्जनके साथ युद्ध शुरू हो गया।

गोलकुण्डाके सेनापतिने देखा, कि व्यर्थ लोकक्षय करनेकी क्या जरूरत, हमलोगोंकी विजय होनेकी तो कोई सम्भावना ही नहीं है। आत्मसमर्पण कर देना ही अच्छा है, इसलिये उसने सफेद झण्डा उड़वा दिया!

औरंगजेबने कहला भेजा—"अस्त्र त्याग करो।"

गोलकुण्डाकी सेनाने अस्त्र भी त्याग दिया।

एक सेनाके अधीन उन्हें कैद रखकर औरंगजेब मीरजुमला और डेकानके नवाबके साथ नगर लूटनेके लिये आगे बढ़ चले।

सन्ध्या हो गई थी, सूर्य्यकी आखिरी किरणें संसारसे विदा ले रही थीं। पक्षीगण बिदायसंगीत गाते हुए अपने अपने घोंसलों-की ओर जा रहे थे। दिनभरके परिश्रमके बाद गृहस्थ विश्रामके लिये घरकी ओर जा रहे थे, स्त्रियाँ चिराग बत्ती करनेकी तय्यारी कर रही थीं और युवतियाँ हृदय-रञ्जनके रञ्जनार्थ केश विन्यास कर रही थीं। ऐसे समयमें गोलकुण्डामें खबर पहुँची, कि बाद-शाह भाग गये हैं, उनकी सारी सेना बन्दी हो गई है और औरं-गजेब अनगिनत सेनाके साथ नगर लूटनेके लिये आ रहे हैं!

यह खबर सुनते ही सारे नगरमें आतङ्क छा गया, सभी लोग अपनी-अपनी सबसे प्रिय और बहुमूल्य वस्तुको छिपानेके लिये व्यस्त हो पड़े। स्त्री, पुत्र और प्रियजनोंको साथ लेकर सभी लोग नगर छोड़कर भागने लगे।

राजमहलमें जब यह दुस्संबाद पहुँचा, तब बेगमोंके हाहाकारसे सारा महल गूँज उठा। इस समय उनके समान अनाथ और कोई नहीं था, सभी अपनी-अपनी जान बचानेके लिये व्याकुल हो उठीं। इस समय धन-रत्नकी ओर कौन ध्यान देता था, सभीके लिये अपनी जानें बचाना ही मुहाल हो रहा था। इस कारण नौकरोंकी खूब बन आई थी, वे अपनी-अपनी इच्छानुसार धन-रत्न लेकर नौ दो ग्यारह होने लगे।

तात्पर्य्य यह कि इस समय नगरमें कितने ही प्रकारके गुल खिलने लगे! कोई धन-रत्न कोई रमणी, कोई मालमत्ता ही लेकर चम्पत होने लगा, इस प्रकारके ऊधम और उत्पातसे एक घण्टेमें ही सारी दूकानें बन्द हो गईं। सारा नगर जनशून्य भयावह हो उठा।

इधर अमीर मीरजुमलाने औरंगजेबसे कहा—'इन दोनों पहाड़ोंके बीचमें यह जो रास्ता देखते हैं, सिर्फ इसीसे होकर नगरमें प्रवेश किया जा सकता है।

औरंगजेबने उसकी ओर देखकर कहा—रास्ता बहुत दुर्गम है, शत्रु यदि चाहें तो अनायास हमें काबू कर सकते हैं?

मीरजुमला—मुझे मालूम है।

औरंगजेब—दूसरा कोई रास्ता नहीं है?

मीरजुमला—एक है, परन्तु वह और भी दुर्गम है। इस

पहाड़पर चढ़कर आप जा सकते हैं, परन्तु यह बहुत ढालुआँ और पगडंडी रास्ता है।

डेकानके नवाब वहीं थे। उन्होंने कहा—शाहकुतुब तो भाग ही गया है। और उसकी सेना भी गिरफ्तार हो चुकी है। हमें बाधा कौन दे सकता है ?

मीरजुमला—नगर रक्षाके लिये क्या नागरिक गण चेष्टा नहीं करेंगे ? विशेष करके गोलकुण्डाके दुर्गमें अब भी सेना है। यदि कोई अच्छा सेनापति उन्हें परिचालित करके ले आवे तो वे बहुत काम कर सकते हैं। इसके सिवा एक और भी आपद है ! भास्कर डाकूका दल है।

दक्षिणके नवाब ठहाका मारकर हँसते हुए बोले—"डाकूका दल क्या करेगा ? हमलोग तो बनिया बकाल नहीं हैं, कि वे हमें लूटपाट ले जायँगे।"

मीरजुमलाने कुछ सकुचाकर कहा—"नहीं महाशय ! ये डाकू बहुत ही निर्बल नहीं हैं, सम्भवतः हमें उनके बलका परिचय अवश्य ही मिल जायगा।"

औरङ्गजेबने कहा—"सावधान होकर रहना ही अच्छा है, पहाड़ोंके भीतरसे चलनेमें विपदकी अधिक सम्भावना है, इसलिये ऊपरवाले रास्तेसे ही सेनाको बढ़ाओ।"

अब असंख्य मुगलसेना चीटियोंकी तरह कतार बांधकर पहाड़पर चढ़ने लगी। सबसे आगे अश्वारोही सेना है, उसके पीछे पदातिक सेना है, जिसके असंख्यों नरमुण्डोंसे प्रशान्त महासागरका भ्रम होता है। पदातिक सेनाके पीछे कामान आ रहे हैं, और उनके पीछे पीछे गोलन्दाज सेना है।

इधर रात्रिके भीषण सूचिभेद्य अन्धकारने संसारको ढक

लिया है। सभी सैनिकोंके हाथमें एक-एक मशाल है, जिसके आलोकसे सारा पर्वत जगमगा उठा है। पहाड़के ऊपर एक बहुत बड़ा गढ़ा था। वह गढ़ा पर्वतको भेदकर पातालमें चला गया था। औरङ्गजेबकी सेना जैसे ही उस गढ़ेको बगलमें छोड़कर आगे बढ़नेकी चेष्टा करने लगी त्योंही उस तिमिरान्धकार मय गह्वरसे भयङ्कर तोपें गर्जने लगीं। और उसके भीतर से इस प्रकार बड़े बड़े आगके गोले निकलने लगे मानों किसी आग्नेय गिरिका .....उन बड़े-बड़े गोलोंकी आगमें भस्म होकर औरङ्गजेबकी सेना मरने लगी। इस लिये औरङ्गजेबने तुरही बजा, सेनाको पीछे हटाकर खड़ाकर दिया। परन्तु खड़े रहनेसे भी रक्षा नहीं। तोप अपना मुंह फेरकर सेनाका ध्वंस करने लगीं।

पीछे हटनेसे भी विपद, आगे बढ़नेसे भी विपद और बायें तरफ तो वह खोह ही है। इसलिये सेना खड़ी-खड़ी जान देने लगी। रक्षाका कोई दूसरा उपाय न देखकर औरङ्गजेबने फिर आगे बढ़नेका ही हुक्म दिया।

धीरे-धीरे सेना आगे बढ़ने लगी और तोपोंके भीषण अग्नि-वर्षासे जलकर भस्म होने लगी। बहुत देरके परिश्रमके बाद जब आधीसे भी कम सेना पहाड़से उतरकर नगरकी ओर अग्रसर हुई तब पहाड़के दोनों बगलसे तोपें भीषण रूपसे गर्ज उठीं। मानों चारों ओर कालानल प्रज्ज्वलित हो उठा। परन्तु वह भी सहजही हार माननेवाला मनुष्य नहीं था। उसने तुरत अपने सैनिकोंको ललकार कर कहा—"खड़े-खड़े मरनेसे आगे बढ़कर विजयी होनेकी चेष्टा करना अच्छा है, अब हम लोग मैदानमें पहुँचा ही चाहते हैं। फिर हमलोगोंका कोई भी सामना न कर सकेगा।

अब दीन दीन करती हुई, औरङ्गजेबकी सेना आगे बढ़ने लगी। थोड़ी देरके बाद ही आगेकी तोपें शायद अपनी ही विपद समझकर बन्द हो गयीं। अब सेना बिना विघ्नके मैदानमें उतर आयी। परन्तु औरङ्गजेबने मैदानमें अपनी सेनाकी तरफ देखा तो उसे मालूम हुआ कि जितनी सेनाके साथ उसने पहाड़ पर चढ़ना शुरू किया था पहाड़से उतरते उतरते उसकी चौथाई सेना रह गई है। इसके सिवा गोला बारूद और तोपें एक भी नहीं आ सके हैं। शत्रुओंने उन्हे छीन लिया है, अब उसके (औरङ्गजेबको) यह भी अच्छी तरह समझमें आ गया कि गोलकुण्डाको लूटना उसने जितना सहज समझा था, वास्तवमें वह उतना सहज नहीं है।

चारों ओर गाढ़ा अन्धकार छा रहा है। पासके चिरागसे बहुत दूरतक दिखलायी नहीं पड़ता। किधरसे रास्ता है, यह भी मालूम नहीं होता। बहुत चिन्तित होकर औरङ्गजेबने मीरजुमला को बुलाकर पूछा—"तुम रास्ता जानते हो? किधरसे जाना होगा? सेनाको परिचालित करके लेचलो।"

मीरजुमला—मालूम होता है, यह भास्करकी करामात है। यहाँका रास्ता-घाट मुझे अच्छी तरह मालूम नहीं है, एक गोलकुण्डाका आदमी है, परन्तु क्या उसका विश्वास किया जा सकता है?

औरङ्गजेब—कभी नहीं। अच्छा जो हो, आगे ही को सेना बढ़ाओ, यहाँ खड़ा रहना भी तो अच्छा नहीं है। सामने जो बत्तियाँ दिख रहीं हैं। शायद वे ही राजप्रासादकी हैं।

मीरजुमला—नहीं! वह स्थान बाजार मालूम पड़ता है,

परन्तु फिर भी मुझे दिगभ्रम हो रहा है। बाजार उतनी दूर कैसे गया। अगर वह शत्रुओंका अड्डा होगा तो भी मुश्किल होगी।

औरंगजेब—उसके लिये मैं नहीं डरता, सेना बढ़ाओ, उन रोशनियोंको लक्ष्य करके चलो।

शाहजादेका हुक्म कौन टाल सकता था? सेना आगेसे आलोक मालाको लक्ष्य करके आगे बढ़ने लगी। कोई आध कोसका रास्ता तय करके सेना जब आलोकोंके निकट पहुँची तब औरंगजेबने देखा कि वे कृष्णा नदीके किनारे आ पहुँचे हैं। शत्रुओंने उन्हें पथभ्रष्ट करनेके लिये बालुका भूमिमें चिराग जला रखे थे।

मुगलसेनाके वहाँ पहुँचते ही फिर गोली गोलोंकी बौछारें उनपर आने लगीं। अब औरंगजेबकी सेना पीछे हटनेकी चेष्टा करने लगी; परन्तु वह चेष्टा एकबारगी निष्फल हुई। क्योंकि बायीं ओर ऊँचा पहाड़ था। पीछेसे प्रलयान्तकारी गोले बरस रहे थे, आगे फेनिलवती कृष्णा नदी बह रही थी। अब एक रास्ता था, कृष्णाके किनारे किनारे दाहिनी तरफ चलना। परन्तु उधरसे होकर वे कहाँ जा सकते थे, इसका भी कोई कोर किनारा न था। मीरजुमलाने औरंगजेबके पास जाकर कहा—"हमलोग भास्कर डाकूके जालमें फँस गये हैं। किसी प्रकार नदीके किनारे किनारे नगरकी तरफ ही बढ़नेकी चेष्टा करनी चाहिये। यह रास्ता मुझे अच्छी तरह मालूम है।"

औरंगजेब—परन्तु सेना तो आगे बढ़ ही नहीं सकती।

मीरजुमला—तब खड़े खड़े मरनेसे क्या होगा?

औरंगजेब—इसके सिवा चारा ही क्या है?

मीरजुमला—अच्छा मैं सेनाको आगे बढ़ाता हूँ। आज पीछे हटनेसे काम न चलेगा।

मीरजुमला—सेना को हुक्म दीजिये।

औरंगजेबने पुकारकर कहा—"बहादुर सिपाहियो! खड़े खड़े क्यों मरोगे? आगे बढ़ो और शत्रुओंके खूनसे तलवारोंको नहलाओ।"

कई सिपाही चिल्ला उठे—"शत्रु हैं कहाँ? हमारे सारे साथी तो मर गये, शत्रुओंका कहीं पता ही न लगा।"

औरंगजेबने फिर पुकार कर कहा—"आगे बढ़ना ही होगा बढ़ो!"

इसके बाद निरुत्साह और निरुद्यम भावसे धीरे धीरे सेना आगे बढ़ी। थोड़ी दूर चलते ही सेना समतलभूमिमें आ पहुँची। अब चारोंओर सन्नाटा छागया, कहीं गोली गोलेका एक शब्द भी नहीं सुनाई पड़ता था। रात खतम हो आयी पूर्व आकाशमें उषाकी लालिमा छा गयी थी। यह देखकर औरंगजेबको बहुत आनन्द हुआ, उसने मीरजुमलाको पुकारकर कहा—अब हमलोग समतलभूमिमें आ पहुँचे हैं। सवेरा भी अब हो गया, नगर भी निकट ही दिखलायी पड़ता है। मालूम होता है, डाकू डरकर भाग गये।

मीरजुमला—अभी कोई निश्चय नहीं है। हाँ, देर करना उचित नहीं है। जहाँतक हो जल्दी ही नगरमें प्रवेश करना चाहिये।

मुगलसेना फुल मार्चसे दौड़ने लगी। परन्तु कुछ ही दूर

जाकर मीरजुमलाने देखा कि कमसे कम पाँच हजार सेना नाके नाकेपर मय तोपोंके खड़ी हुई है।

मीरजुमलाने कहा—शाहजादा साहब ! यह देखिये, सामने एक बड़ी सेना हमारा रास्ता रोककर खड़ी है।

औरंगजेब—वे क्या भास्करके दलके डाकू हैं ?

मीरजुमला—लिबाससे यह गोलकुण्डाकी सेना मालूम होती है।

औरंगजेब—नवाबके बिना उनका परिचालन कौन करता है ?

मीरजुमला—मालूम होता है, भास्कर ही कर रहा है।

औरंगजेब—एक डाकूके कहनेसे सेना दुर्गसे कैसे निकल सकती है, मैं नहीं समझता।

मीरजुमला—उसमें कोई दैवी शक्ति है, वह शत्रुको भी मित्र बना सकता है।

औरंगजेब—हमलोग इसी रास्तेसे आयेंगे यह इनको मालूम कैसे हुआ ?

मीरजुमलाने मुस्कराकर कहा—आप इस रास्तेसे आये हैं, या उनकी इच्छासे लाये गये हैं। उन्होंने जो जो रास्ता दिखला दिया है, उसीसे होकर आप चले आ रहे हैं।

अब औरंगजेबने अपनी सेनाको उत्साहित करनेके लिये जलद गंभीर स्वरमें कहा—"मेरे बहादुर सिपाहियो ! तुमलोग बहुत कष्ट सहकर अब समतलभूमिपर आगये हो। सामने ही धनरत्नसे भरा हुआ हीरेका नगर है परन्तु थोड़ीसी सेना तुम्हारा रास्ता रोके खड़ी है। इन्हें पैरों तले रौंदकर हमें नगरमें

पहुँचना होगा। वहाँ तुमलोग अपनी इच्छानुसार धनरत्न लूट सकते हो।"

मुगलसेना अपने शाहजादेके उत्साह-पूर्ण वाक्य सुन और रत्नलाभकी आशा देख कर—"दीन दीन" के भीषण रवके साथ सामनेकी खड़ी हुई सेनापर टूट पड़ी। साथही भीषण वेग के साथ रणवाद्य भी बजने लगे।

# सातवाँ परिच्छेद

इधर गोलकुण्डाकी खड़ी हुई सेनामें वज्र निनादके साथ युद्धके दमामें बजने लगे और साथ ही तोपें गर्ज उठीं।

औरंगजेबकी सेना प्रबल वेगसे विपक्षी सेनापर टूट पड़ी और उद्यमसे युद्ध करने लगी। परन्तु बहुत देरतक युद्ध नहीं होने पाया था, कि सहसा पीछेकी सेनाके पैर उखड़ गये। वे व्यूह तोड़कर इस प्रकार इधर-उधर तितर-बितर होने लगी कि औरंगजेबको उसे सम्हाल रखना कठिन हो गया।

मुगल सेनाके पिछले हिस्सेका इस प्रकार छत्रभंग होनेका कारण यह था, कि सेना जब आगेकी सेनापर आक्रमण करनेमें लगी हुई थी, उसी समय बायें और दाहिने बाजुओंसे डाकुओं-की दो बड़ी बड़ी सेनायें "हर हर बंम बंम" के शब्दके साथ उनपर टूट पड़ी थीं। यह अतर्कित वेग उन्हें सम्हाल सकना कठिन हो गया था, इसलिये वे भागने लगे थे। मीरजुमलाने जब चारों तरफ विपद ही विपद देखी तब उसने अपना मुँह चारों ओरको फेर दिया और वे लोग युद्ध करते करते अग्रसर होने लगे। परन्तु थकी माँदी मुगलसेना तरीताजी सेनाके साथ कबतक मोर्चा ले सकती थी, थोड़ी ही देरमें मुगलसेना भागनेका रास्ता ढूंढ़ने लगी।

अपनी सेनाकी यह अवस्था देखकर औरंगजेबने मीरजु-मलाको बुलाकर कहा—"विजयकी आशा नहीं है। आत्मसमर्पण करना ही पड़ेगा।"

मीरजुमलाने उदास मुँखसे कहा—अच्छा, वही कीजिये।

औरंगजेबकी सेनाकी तरफसे सफेद झण्डा उड़ा दिया गया।

कुछ दूरीपर एक संन्यासी चुपचाप घोड़ेपर बैठे हुए सेनाओं-का रण-कौशल देख रहे थे, और इस प्रकारकी भीषण नरहत्यासे आँसू बहा रहे थे। उन्होंने दोनों हाथ उठाकर कहा—"रास्ता छोड़ दो।"

पीछेका सेनापति अपनी सेना लेकर हट गया। दिशाओंकी सेनाओंने भी अस्त्र चलाना बन्दकर दिया। दिनकी रोशनीमें औरंगजेबने देखा कि पहाड़से उतरकर उन्हें जिस रास्तेको तय करनेमें इतनी दिक्कत और लाञ्छना सहनी पड़ी है, वह बहुत थोड़ा ही है। पहाड़ बहुत कम फासलेपर ही खड़ा है।

संन्यासी और कोइ नहीं भास्करतीर्थ थे उन्होंने उदयसिंहको बुलाकर कहा—"गोलकुण्डाकी कैद सेनाको छुड़ाना चाहिये।"

उदयसिंह पीछेकी सेनाके सेनापति थे। उन्होंने अपनी सेना के कुछ आगे बढ़ाकर फिर औरंगजेबकी सेनामें बाधा दी। जोरसे पुकार कर कहा—"जिस सेनाको आप कैद कर आये हैं, उसे छोड़ देना होगा।"

औरंगजेबने स्वीकार कर लिया। उदयसिंहने भी कड़ी शर्ति-बन्दी कराकर चले जाने दिया।

मुगलसेना चली गयी। और दस्यु-वाहिनी अब अपने सर-दारकी आज्ञासे खेत आये सैनिकोंका तत्त्वावधान करने लगी, मरे हुओंका अन्तिम संस्कार, घायलोंकी शुश्रूषाका प्रबन्ध करनेमें सारी सेना व्यस्त हो उठी। थोड़ी देर पहले ही जिनके खूनके वे प्यासे हो रहे थे, उन्हींके कण्ठमें अब वे पानी देने लगे! उन्हींको

उठवाकर अब वे औषधालयमें पहुँचाने लगे और उन्हींको उठाकर अब वे दफनानेके लिये ले जाने लगे।

भास्करतीर्थने अपने चरित्र-बल और शिक्षाके प्रभावसे अपने अनुयायियोंको कर्त्तव्य और हृदयकी महानताके कितने ऊँचे आदर्शपर पहुँचा दिया था, यह उस तत्त्वाधान कार्य्यसेही पता लग सकता था।

औरंगजेब गोलकुण्डासे जो क्षति,अपमान और लाञ्छना सह कर लौटे थे उसे वह जिन्दगी भर न भूल सके थे, गोलकुण्डासे लौटते ही शाहजहाँकी खबर पाकर वह आगरा लौट गये और वहाँ किस प्रकार अपने भाइयोंको छल, बल, कौशलसे मार जीतकर शाही तख्तपर बैठे थे, यह इतिहासक मात्रको ही मालूम है, राजगद्दी पर बैठनेपर उनका सबसे पहला समर अभिवादन गोलकुण्डापर हुआ था, परन्तु उसबार भी उन्हें हार खाकर ही लौटना पड़ा था। सारा जीवन उन्होंने गोलकुण्डापर ताक लगाये ही बिता दिया था, परन्तु उनकी इच्छा पूरी नहीं हुई थी।

# आठवाँ परिच्छेद

जिसके राज्यमें घोर संग्राम और अवाञ्छनीय परिवर्त्तन हो रहा था, वह गोलकुण्डाके अधीश्वर कुतुबशाह ज्ञानशून्य हो घोड़ा दौड़ाये भागे जा रहे थे। पीछे पत्तेकी खड़खड़ाहट और जंगली पशुओंके इधर-उधर भागनेके शब्दसे भी उन्हें आशंका हो रही थी, कि कोई उन्हें पकड़नेके लिये आ पहुँचा। सारा दिन अविराम गतिसे घोड़ा दौड़ानेके बाद कुतुबशाह अन्तमें एक पहाड़के पास आ पहुँचा, सारे दिनके अविश्रान्त परिश्रमके कारण घोड़ा निःशक्ति हो गया था, इसलिये उसको नीचे ही छोड़कर कुतुबशाह आगे बढ़नेके लिये पहाड़पर चढ़े। दोनों तरफ पहाड़ की बड़ी बड़ी चोटियाँ थीं, बीचसे एक सकरी गली गयी थी, कुतुबशाह अवसन्न भावसे धीरे धीरे उसी रास्तेसे आगे बढ़ रहे थे, कि सहसा उन्होंने देखा कि एक वृद्ध योगी गलेपर हाथ रखे शिर नीचा किये रास्तेमें बैठा है। भय से काँपते हुए कुतुबशाहने कहा—"आप कौन हैं! रास्ता छोड़िये, मैं ऊपर जाऊँगा।"

योगीने शिर उठाया, दोनोंकी आँखें सामना सामनी होने पर दोनों ही काँप उठे।

यह योगी और कोई नहीं, दिलजानके दादा ही थे। दिलजानके छुटकारेका कोई प्रबन्ध न कर सकनेके कारण वह उसकी खबर लेनेके लिये गोलकुण्डा गये थे। वहींसे वह दिलजानकी मृत्युका हृदयविदारक समाचार सुनकर रोते पीटते चले आ रहे

थे। पहाड़पर पहुँचते पहुँचते सन्ध्या हो गयी थी, इसलिये रात बितानेके लिये वह वहीं बैठ गये थे। वहाँ बैठे बैठे वह अपनी प्राण पुत्तलिका दिलजानकी ही स्मृति में आँसू बहा रहे थे; कि कुतुबशाहने पीछेसे आकर पुकारा—"कौन है, रास्ता छोड़ो।"

एक दूसरेको पहचान लेनेके बाद थोड़ी देरतक दोनों ही एक दूसरेको निस्तब्ध होकर देखते रहे। अन्तमें योगीने लम्बी साँस लेकर व्यथित स्वरमें कहा—"कुतुब! आज इस वेशमें तुम कहाँ चले हो? आज तुम्हारा वह अहंकार कहाँ है? वह नादिरशाही कहाँ है? वह काम-लिप्सा कहाँ है, जिसने मेरी कुसुम कोमल दिलजानको भस्म कर दिया है? आज सवेरे ही तुमने मेरे प्राणोंसे प्यारी दिलजानकी हत्याकी है! परन्तु क्या तुम्हें खबर है, कि घड़ी भर बाद ही तुम्हारे बेगममहलकी क्या दुर्दशा होने वाली है। इतनी देरमें सम्भवतः तुम्हारी बेगमें और बहू बेटियाँ औरङ्गजेबके सिपाहियोंकी विलास सामग्री हो रही होंगी। कुतुबशाह! पापका दण्ड हाथोंहाथ मिलता है, तुमने संसारको इसका अच्छा दृष्टान्त दिखलाया है।

इस समय कुतुबशाह शोक, मोह, भय और व्याकुलतासे मृतप्राय वाक्शून्य हो रहे थे। उन्होंने बड़ी चेष्टा करके रुँधे गलेसे कहा—"रास्ता छोड़ो, मैं ऊपर जाऊँगा।"

अपनी छाती पीटकर योगीने कहा—"जरा ठहरो, मेरी एक बात सुन लो, रास्ता छोड़ देता हूँ। तुम्हें पकड़नेके लिये मुगल सैनिक पीछा कर रहे हैं, मैं तुम्हें रोककर बदला लेनेकी चेष्टा न करूँगा।

कुतुबने घबड़ाकर कहा—"रास्ता छोड़ो, जाने दो।"

संन्यासी—कुतुब ! तुम्हारी वह तलवार कहाँ है, जिससे तुमने मेरी दिलजानका वक्षविदीर्ण किया है मैं दिलजानका शोक नहीं सहन कर सकता हूँ, उस तलवारको उठाओ और उससे मेरी भी छाती छेदकर चले जाओ, उस तलवारमें अब भी दिलजानके खूनकी भाप लगी होगी।

अन्तिम वाक्यसे योगीका गला भर आया और आँखोंसे आँसुओंकी धारा गिरने लगी। आवेशके साथ अब वह "दिलजान ! दिलजान" कहकर पुकारने लगा।

कुतुबने फिर व्यग्रभावसे कहा—"रास्ता छोड़ो।"

संन्यासी—पापी ! शैतान ! मुझे पहचानता नहीं ? मैं विसियापुरका नवाब हूँ। जिस बालिकाकी तैने हत्या की है, वह मुबारककी कन्या थी।

कुतुब—रास्ता छोड़िये।

"जा पापी, कुक्कुर, अपने पापका फल भोग" इतना कहकर जोगी उठकर दूसरी ओर चला गया, कुतुबशाह पहाड़पर चढ़कर आगे बढ़े। इस समय रात हो गयी थी, पहाड़पर विकट अन्धकार छा गया था, यहाँके पथसे बिल्कुल अपरिचित नवाबके लिये एक एक डेग भी आगे बढ़ना अब कठिन हो रहा था। इसलिये कुतुबशाहको अब एक आश्रय-स्थानकी आवश्यकता पड़ी। उन्होंने चारों तरफ दृष्टि दौड़ाकर देखा तो थोड़ी दूरसे एक चिरागकी रोशनी दिखलायी पड़ी। थोड़ी देरतक उस बत्तीकी तरफ चलकर उन्होंने देखा कि मुसलमानोंकी यह कोई पुरानी मसजिद है। मसजिद मिलनेसे नवाबके निरानन्द मनमें भी क्षणभरके लिये आश्रय-लाभकी आशा झलक पड़ी। परन्तु क्षणके बाद ही जब

वह मसजिदके पास पहुँचे तब भीतरसे किसीने पुकारकर पूछा—"तुम कौन हो ?"

स्वर सुनकर कुतुबका सारा शरीर कांप उठा। उन्होंने धीमी आवाजसे कहा—"एक मुशाफिर।"

भीतरके आदमीने दरवाजा खोलकर देखा और गोलकुण्डाके नवाबको पहचान गया।

शिकार सामने देखनेसे बाघ जैसे कूद पड़ता है, उसी प्रकार भीतरका आदमी भी नवाबको देखते ही कूदकर बाहर आ गया, और चिल्लाकर बोला—"शैतान ! तूने मेरी दिलजानकी हत्या की है। उस कोमल वक्षस्थलमें तलवार भोकनेमें क्या तुम्हें दया नहीं लगी थी ? तुमने एक बालिकाको चुराकर पिंजड़ेमें बन्द कर उसकी हत्या करके अपनी बहादुरीका परिचय दिया है। अब भागा कहाँ जाता है ? अब एकबार ईश्वरको याद कर ले।"

भीतरसे जो बाहर निकला था, वह मालिक था। मालिक पेशकारकी सहायतासे जेलसे छुटकारा पाकर बाहर निकला ही था, कि उसने दिलजानकी हत्याकी खबर सुनी, इस समय अपने ऊपर भी विशेष विपत्ति आनेकी सम्भावना समझकर दिलजानके शोकमें रोता कलपता हुआ, इस पहाड़पर आकर उसने मसजिद-में आश्रय लिया था। इच्छा थी, कि कल औरङ्गजेब द्वारा नगर दखल होनेपर वह गोलकुण्डामें चलकर मीरजुमलासे भेंट करेगा।

अपने प्राणोंसे प्यारी दिलजानके हत्याकारीको सामने खड़ा देखकर उसने तुरत कमरसे तलवार निकाली और उसको नवाब-के सिरके ऊपर तौलकर कहा—"नारी-हन्ता ! चोर ! बदमाश ! एकबार खुदातालाको याद कर !"

नवाबने खुदातालाको याद किया या नहीं, यह मालूम नहीं ; परन्तु उन्होंने म्यानकी मुट्ठीपर हाथ जरूर रखा। मालिकने उनके आत्मरक्षा करनेका भाव देखकर एक क्षणभरका भी बिलम्ब न किया, एक बात कहनेका भी समय न दिया, तलवार खींचकर खड़ा होने भी न दिया। गोलकुण्डाके प्रतापी नवाब कुतुबुद्दीनके शिरपर तलवारका एक ऐसा हाथ जमाया जिससे राजमुकुट वाला मस्तक धड़से अलग होकर दस हाथ दूर जा गिरा।

इस समय मालिकके हृदयमें प्रतिहिंसाकी इतनी तीव्र अग्नि प्रज्वलित हो रही थी, मसजिदका कब्रगाह निकट होने पर भी उसने उसमें नवाबको दफनानेकी चेष्टा न की गोलकुण्डाधिपति की लाशको शृगाल कुक्करोंका भक्ष्य बननेके लिये वहीं छोड़कर अन्यत्र चला गया।

दूसरे दिन मालिकको जब मालूम हुआ कि औरङ्गजेब गोलकुण्डा दखल करनेमें असमर्थ हुए हैं, तब वह उनकी लौटती हुई सेनामें ही मिल गया और मीरजुमलाके साथ आगरा चला गया।

दूसरे दिन बहुतसे लकड़हारोंने कुतुबशाहकी नोची खसोटी हुई लाश पहाड़पर देखी थी; परन्तु उन्हें क्या गरज पड़ी थी, कि वे उन्हें दफनानेका प्रबन्ध करते।

—***—

# नवाँ परिच्छेद

विगत सन्ध्याको आशंका और व्याकुलताकी जो आंधी उठी थी, आज वह एकबारगी बन्द हो गयी है, गोलकुण्डाकी अवस्था आज सन्ध्या समय आग्रह और उत्कण्ठाके साथ जुड़ी हुई है। कौन राजा होगा! गोलकुण्डा हिन्दुओंके हाथमें जायगा या मुसलमान नवाबोंके ही हाथमें रहेगा। भावी शासक न्याय परायण होगा या पहलेहीके समान अत्याचारी होगा, इसी प्रकार की जल्पना कल्पना और भावना चिन्ता सभी नागरिकोंके मनमें लगी हुई है।

सन्ध्या होते ही बहुतसे पहरेदार महल्ले महल्लेमें ढिंढोरा—पिटवाकर कह गये, आज सन्ध्या समय खास दरबारमें एक विराट सभा होगी। सभापतिका आसन स्वयं भास्करतीर्थ ग्रहण करेंगे। उसी सभामें यह निश्चित किया जायगा कि गोलकुण्डाके शून्य सिंहासनपर कौन बैठेगा। सभामें सबको जाना चाहिये, सन्ध्या होते न होते नवाबका दरबारे खास जनतासे भर गया। कहीं तिल रखनेकी जगह न रही। परन्तु भास्करका ऐसा अच्छा प्रबन्ध और शृंखला थी कि इतने मनुष्योंके आनेपर भी किसी प्रकारका गोलमाल और गुल गपाड़ा न होने पाया।

भास्करके दलके डाकू ही आज शान्ति-रक्षक सिपाहीका काम कर रहे हैं। दस्यु-सेनापति ही नागरिकों और सभ्रान्त सेठ साहुकारों तथा अमीर-उमरावोंको आदर अभ्यर्थनाके साथ यथा

योग्य आसन पर बैठा रहे हैं। आज सारे दरबारमें भास्करतीर्थ तथा उनके डाकुओंकी ही जय जयकार हो रही है।

जब सभी गण्यमान्य नागरिक सभामें पधारकर यथास्थान बैठ चुके तब भास्करतीर्थ मधुर परन्तु ओजस्विनीभाषामें कहने लगे—"गोलकुण्डाके सम्मानीय नागरिकों! भगवान श्रीकृष्णकी कृपासे औरङ्गजेबके भीषण आक्रमणसे गोलकुण्डाकी रक्षा हुई है! विश्वासघातक मीरजुमला और डेकानके नवाबकी भी दाल नहीं गलने पायी है, इसके लिये सबसे पहले आपलोग ईश्वरको धन्यवाद दें।"

वक्ताकी बात पूरी होते न होते सारा दरबार "भगवान श्रीकृष्णकी जय!" "और महात्मा भास्करकी जय" के तुमुल स्वरसे गूँज उठा।

महात्मा कहने लगे—"नवाब कुतुबशाह मारे गये हैं। किसने मारा है, ठीक मालूम नहीं, इस समय गोलकुण्डाका सिंहासन खाली है। राजाके बिना राज्य चल नहीं सकता। इसलिये हमने आपलोगोंको एकत्र किया है, आपलोग ही उपयुक्त मनुष्यको अपना राजा चुन लें।"

नवाबके सभी अमात्यगण वहाँ उपस्थित थे,सबसे पहले उन्होंने ही कहा—"इस सम्बन्धमें बोलनेका सबसे पहले हमी लोगों को अधिकार है। हम घोषणा करते हैं, कि भास्करतीर्थ ही गोलकुण्डा के सिंहासनपर बैठें। क्योंकि यह सनातन प्रथा चली आती है, कि जो बाहुबलसे राज्य जय करता है, वही राजा होता है। समवेत लोक-मण्डलीने करतलध्वनिके साथ इस घोषणाका समर्थन करते हुए जलद गंभीर स्वरसे कहा—"हम सभी की यही लालसा है,

हमलोग धर्मात्मा पुरुषकी ही छायामें रहकर शान्ति और सुखसे बास करना चाहते हैं।"

भास्करतीर्थ उठ खड़े हुए, और मंद-मंद मुस्कुराते हुए गंभीर स्वरमें बोले—"मैं दरिद्र संन्यासी हूँ। वन जंगल ही मेरा घर है। राज्यभार सम्हालनेकी मुझमें शक्ति नहीं है। मैं इसके लिये तैयार भी नहीं हूँ आप नवाबके खानदानके किसी आदमीको चुनिये।"

सारी सभा निस्तब्ध हो रही। प्रधान अमात्यने कहा—"नागरिकोंकी इच्छा है, कि धर्म और नीतिके आश्रयमें बास करें।"

भास्कर—मेरी भी यही इच्छा है, भगवान् भी इसीका विधान करते हैं। अत्याचारी राजाका पतन सर्वदासे होता आया है। कुतुबशाहके भतीजेको राजगद्दीपर बैठाया जाय, वही इसके अधिकारी हैं।"

प्रधानअमात्य—वह अभी नाबालिग है।

भास्कर—इससे क्या हुआ? आपलोग मन्त्रिमंडल संगठित कर राज चलाइयेगा।

प्रधानअमात्य—प्रबल प्रतापी औरङ्गजेब इस बार जिस प्रकार अपमानित और क्षतिग्रस्त होकर लौट गया है। उससे आशंका होती है, कि शीघ्र ही वह फिर आक्रमण करेगा, ऐसी अवस्थामें नाबालिकके ऊपर राज्यभार रखना क्या उचित है?

भास्कर—मेरे प्रधान सेनापति उदयसिंहको गोलकुण्डाके प्रधान अमात्य-पदपर नियुक्त किया जाय, और यह शर्त रहे कि राज्य-रक्षा, सैन्य संगठन दुर्ग संस्कार आदि कार्य वह स्वाधीन-भावसे कर सकेंगे! उसमें कोई हस्तक्षेप न करने पायेगा।

प्रधानअमात्य—उन्हींको राजगद्दीपर क्यों न विठाया जाय ?

भास्कर—मैं किसीका अधिकार छिनना नहीं चाहता, एक प्रकारसे उदयसिंह ही राजा होकर रहेंगे। क्योंकि उन्हींके बाहु-बलसे औरङ्गजेवपर विजय मिली है।

प्रधानअमात्य—जिससे देश का हित हो,आप वही कीजिये।

भास्कर—उदयसिंहके लिये राजकोषसे इतनी वृत्ति निश्चित कर दीजिये, जिससे उन्हें बादशाहका मुँह न ताकना पड़े और उनके निवासके लिये कृष्णानदीके किनारेका राजमहल छोड़ दिया जाय।

सभी उपस्थित प्रजा-मण्डलीने भास्करकी बातें मान ली इस-लिये उसी समय नवाबके षोड़श वर्षीय भतीजेका राज्याभिषेक किया गया, और उदयसिंहको भी सेनापति नियुक्त करके नया मन्त्री-मण्डल संगठित किया गया।

इसके बाद भास्करतीर्थ, नवीन सम्राट्, नवीन सेनापति और अनन्तभगवानको धन्यवाद देकर सभा विसर्जित हुई।

दूसरे दिन विजयोत्सव मनानेका दिन निश्चित कर दिया गया।

# दशवाँ परिच्छेद

गम्भीर रात्रिका समय है, राजप्रासादके बाहरी बैठकेमें भास्करतीर्थ, भगवान और उदयसिंह बातें कर रहे हैं। उदयसिंहने पहले कहा—"प्रभो! मैंने क्या अपराध किया है, कि आप मुझे इस झंझटमें डाल रहे हैं?"

भास्करतीर्थने मुस्कुराते हुए कहा—"क्या झंझट है? छोकड़े! बादशाहके ऊपर भी बादशाह बनकर गोलकुण्डामें रहोगे, तुम्हारे सुखके लिये ही तो मैंने ऐसा बन्दोबस्त किया है।"

उदय—मैं यह क्षणस्थायी सुख नहीं चाहता।

भास्कर—संसारमें स्थाई है ही क्या, मनुष्य ही जब स्थायी नहीं, तब स्थायी सुख क्या है?

उदय—आपके कहनेके अनुसार कामज सुख स्थाई नहीं है, निष्काम सुख ही स्थायी है।

भास्कर—काम और निष्काममें क्या अन्तर है?

उदय—आसक्ति काम है, अनासक्ति ही निष्काम है।

भास्कर—अच्छी बात है, तब किस सोचमें पड़े हो? आसक्ति शून्य होकर काम करो।

उदय—काम करनेसे ही आसक्ति उत्पन्न होती है, औरङ्गजेबको हराऊँगा, कुतुबशाहको राज्यच्युत करके धर्मराज्यकी प्रतिष्ठा करूँगा। इतने दिनतक यही वासना लगी हुई थी, यह वासना ही तो आसक्ति है।

भास्कर—भगवानकी उपासना करूँगा, आत्माको ईश्वरमें लीन करूँगा, क्या यह वासना नहीं है ?

उदय—है।

भास्कर—क्या ईश्वरासक्ति भी अनुचित है ?

उदय—शायद नहीं।

भास्कर—शायद क्यों ? निश्चय करके कहो।

उदय—वह आसक्ति है, कि अच्छी आसक्ति है ?

भास्कर—मनुष्यके हृदयमें सत्य असत्य सभी तरहकी वृत्तियाँ होती हैं। शास्त्रानुसार उनका प्रयोग न करनेपर वे बुरी हो जाती हैं, पापीको दण्ड देना शास्त्रानुमोदित है, उसे दण्ड देनेसे पाप नहीं लगता, परन्तु साधुकी पूजा करना ही शास्त्र विधि है। ऐसा न करके यदि तुम उसे दण्ड दो तो तुम पापी कहलाओगे।

उदय—मैं इतनी बातें नहीं समझता, मकड़ी जैसे अपने ही जालमें फँस जाती है, मनुष्य भी काम करते करते कामके जालमें फँस जाता है। उसके हृदयमें घोर आसक्ति उत्पन्न हो जाती है।

भास्कर—बालूके ऊपर तलवारकी धार रगड़नेसे उसकी धार तेज होती है, परन्तु बालूमें ही तलवारको छिपा रखो तो थोड़े ही दिनोंमें तलवार निकम्मी हो जाती है। उसी प्रकार ज्ञानके साथ कर्म करनेसे चित्त निर्मल होता है, परन्तु मोहमें जीवात्माको डुबा रखनेपर वह मोहका कारण होता है।

उदय—ज्ञानके साथ कर्म करना किसे कहते हैं ?

भास्कर—तत्त्वज्ञान जानना ! कहाँसे आये हैं, कहाँ जायेंगे, जीवनका उद्देश्य क्या है ? इसीको जानना तत्त्वज्ञान है। इससे अच्छी तरह अनुभव करके काम करनेको ही ज्ञानतः कर्म कहते

हैं। जन्मना और मरना, जीवनका उद्देश्य भूलकर सांसारिकतामें आसन्न हो जानाही मोहमें आत्माको डुबाना कहलाता है।

उदय—आप कहाँ जायँगे ?

भास्कर—जहाँ मन चाहेगा।

उदय—जरूरत पड़नेपर कहाँ भेंट हो सकती है ?

भास्कर—कैसी जरूरत पड़नेपर ?

उदय—यही राजसम्बन्धी !

भास्कर—मैं तुम्हें सिखा जाता हूँ, तुम काम करोगे तुम दूसरेको सिखा जाओगे, दूसरा काम करेगा। मार्कण्डेयकी तरह एक ही मनुष्यका कल्प कल्पान्तर जीना सम्भव नहीं है। नहीं तो कृष्णका अवतार तिरोहित नहीं होता।

उदय—भगवान कहाँ जायँगे ?

भास्कर—मेरे साथ !

उदय—उनके ऊपर राज्यभार देकर मुझे ही क्यों न अपने साथ ले चलते ?

भास्कर—भगवानमें सभी गुण नहीं हैं, उसमें है, प्रेम और भक्ति, जो राज्यरक्षाके अनुकूल नहीं हैं। राज्यरक्षाके लिये सारी वृत्तियोंकी उन्नति और परिणित करनेकी आवश्यकता पड़ती है, तुम्हें विवाह कर सांसारिक होना पड़ेगा।

उदय—अपना रहस्य आप ही समझें।

भास्कर—तुम यह भूल जाओ कि काम बन्धनका कारण है।

उदय—आपने कहा था न कि स्त्री पुरुषका प्रेम भी मोहज है ?

भास्कर—साधारणतः प्रणयका अर्थ लिया जाता है, वह बिल्कुल ठीक नहीं। कहीं कुछ नहीं और एक बार देखकर ही

प्रेममें गोता लगाने लगे ! यह भी क्या प्रणय है ? हाँ, स्त्री पुरुष-का प्रणय मैं अस्वीकार नहीं करता, परन्तु उसके ये लक्षण नहीं हैं, कि लम्बी लम्बी साँसे लेना, प्रेमपत्रिका लिखना, आसुओंके नीरसे क्षीर-सागर बनाना, कोकिलकी कुहुकसे मूर्छित होना, चन्द्र-किरणका ताप अनुभव करना, यह दाम्पत्य प्रेमका प्रधान लक्षण नहीं है, स्त्री सोचती, स्वामी मेरे साक्षात् देवता हैं, इहलोक पर-लोकके भाग्य-कर्त्ता हैं, उन्हींके सुखसे मेरा सुख और उन्हींके दुःखसे मेरा दुःख है, पुरुष सोचेगा, स्त्री मायाशक्ति है, उसके बिना मनुष्यकी कर्मशक्तिका पूर्णविकास नहीं हो सकता, दोनों जबतक मिलकर एक होकर काम नहीं करेंगे तबतक वे अपने जीवनके उद्देश्यमें सफलता नहीं पा सकते।

उदय—आप मुझे जालमें न फँसाइये।

भास्कर—एक अच्छी लड़की है।

उदय—इतनेहीमें आपने तजबीज भी रखा है, कहाँ है ?

भास्कर—दारोगा रामकृपालसिंहकी बहन है, उसे अच्छी शिक्षा-दीक्षा भी मिली है, मेरी इच्छा है, कि तुम उससे विवाह करो। तुमने उसे देखा है ?

उदय—हाँ, उस दिन रामकृपालसिंहके घरपर छापा मारते समय देखा था।

भगवानने मुस्कुराकर कहा—"और उस दिन भिखमङ्गके वेशमें गान गाते समय ?"

उदयने मुस्कुराकर सिर झुका लिया, भास्करने कहा,—हाँ, सोचते क्या हो ? उसीके साथ विवाह करो, वह भी तुम्हारी ही जातिकी है।

बैठकेका दरवाजा बन्द था, इसी समय बाहरसे किसीने ठेल कर खोल दिया। सबने उधर दृष्टि उठाकर देखा तो सारा अंग कपड़ेसे ढके हुए सामने एक औरत खड़ी थी।

गंभीर रात्रिमें रमणीको वहाँ देखकर सभी विस्मित हुए। भास्करने पूछा—"माँ, तुम कौन हो, इस अँधेरी रातमें यहाँ क्यों आयी हो ?"

विराग विनिन्दित मधुर स्वरमें रमणीने कहा—"दिनमें आपलोगोंका दर्शन मिलना सम्भव नहीं था, इसीलिये अभी आयी हूँ।"

भास्कर—तुम क्या चाहती हो ?

रमणी—मैंने अपने गलेका हार आपलोगोंके पास धरोहर रखा था, उसे आज मैं लेनेके लिये आयी हूँ।

भास्करतीर्थने उदयसिंहकी तरफ देखा, उदयसिंहने पूछा—आपकी बात समझमें नहीं आती, क्या आपहीने हसनसाहबको हमारे पास भेज दिया था ?

रमणीने सिर हिलाकर कहा—"हाँ।"

उदय—क्या आपहीने काराध्यक्षको मारकर हसनसाहबकी जान बचायी थी ?

रमणी—हाँ।

उदय—आप उनकी कौन हैं ?"

रमणी—बाँदी।

उदय—शायद स्त्री होगी ?

रमणीने उत्तर नहीं दिया, उदयसिंहने कहा—उनकी स्त्रीका नाम बानूबेगम था, मार्जिनाबेगमके प्रेममें पड़कर उस बेचारीको

उन्होंने घरसे बाहर निकाल दिया था। उसके शोकमें आजकल बहुत दुःखित रहते हैं। क्या आपही बानू बेगम हैं ?

रमणीने मुखसे कुछ भी न कहा, सिर हिलाकर स्वीकार किया।

उदय—आपको कैसे मालूम हुआ था, कि काराध्यक्ष उसकी हत्या करनेवाला है ?

रमणी—मैं अन्दर महलमें दासीका काम करती थी; मार्जिनाके साथ मीरजुमलाकी जो बातें होती थीं, मैं सुन लिया करती थी। उसीने एक दिन शाहजादीसे कहा था।

उदय—पहलेहीसे यदि आपको मीरजुमलाके षड़यन्त्रकी बात मालूम थी, तो आपने हसनसाहबको सावधान क्यों नहीं कर दिया था ?

रमणी—सावधान किया था, परन्तु उन्होंने मेरी बातोंपर कान न दिया था।

उदय—क्या आपहीने सभी मन्त्रियों और सामन्तोंको उत्तेजित करके हसनसाहबके प्राणदण्डका हुक्म रद्द करवाया था ?

रमणी—हाँ।

भास्करतीर्थने कहा—बेटी ! तुमने स्त्रीका कर्त्तव्य अच्छी तरह पालन किया है, तुमलोगोंका घर-द्वार अभी है तो ?"

रमणी—हाँ, है, परन्तु सरकारने जब्त कर लिया है।

भास्कर—मैं छुड़वा दूँगा। कल एक पालकी करके तुम अपने घर जाना, हसनसाहब भी कल शामतक यहाँ आ पहुँचेंगे, आते ही उन्हें मैं भेज दूँगा, तुम्हारा जैसे स्त्रीको ग्रहण

करनेमें उन्हें कोई आपत्ति नहीं होगी, यदि होगी भी तो मिलन करा दूँगा।

रमणी—और एक बात है।

भास्कर—कहो।

रमणी—उन्हें नौकरी देनी होगी, नहीं तो हमलोग मान-सम्भ्रमके साथ दिन न काट सकेंगे।

भास्कर—वह भी होगा। तुम्हारे स्वामी वीर-योद्धा हैं, वह सैनिक विभागमें ही नौकरी पायँगे।

अब भास्करतीर्थको बार बार नमस्कार करके बानूबेगम चली गयीं।

उदयसिंहकी तरफ मुख करके भास्करतीर्थने कहा—बादशाहकी विधवा बेगमों और उनकी कन्याको किसी प्रकारका कष्ट न होने पाये, इसका विशेष प्रबन्ध करना होगा, सबके लिये वृत्ति निर्दिष्ट कर देनी होगी।

उदय—आपही यह सब प्रबन्ध कर जाइये।

भास्कर—हाँ, मैं तुम्हारा विवाह भी देखकर जाऊँगा।

उदय—कहिये न कि मैं तुम्हें सीकलमें बाँधकर जाऊँगा, भगवानने मुस्कुराकर कहा—उस दिन संगीतकी मूर्छना देखकर ही मैंने समझा था, कि चिड़िया दाना चुगने ही वाली है।

उदयसिंह मुँह फेरकर मुस्कुराने लगे।

# ग्यारहवाँ परिच्छेद

सुखके बाद दुःख और दुःखके बाद सुखका आना और जाना यह संसारकी चिर प्रथा है। दो दिन पहले गोलकुण्डाके अधिवासी आशंका और आतंकसे निर्जीवसे हो रहे थे। आज सभी आनन्द और खुशहालीके नये ही उमंगमें इतरा रहे हैं। आज सन्ध्या होते ही गोलकुण्डाके धनी गरीब राजा रंक सभी के घर दीपावली जलाई गई है। सभीके तोरणद्वार पुष्प मालाओंसे सजाये गये हैं।—सभीके घर आज विजयोत्सव मनाया जा रहा है।

बड़े दारोगा रामकृपालसिंहके मकानपर भी बड़ी तैयारी हुई है। पुष्पावली और दीपावलीके सिवा उनके यहाँ, नाच गानका भी प्रबन्ध हुआ है। रामकृपालसिंह इतनी देरतक दरबारमें थे, अभी लौटकर घर आये हैं। राजदरबार में भी विजयोत्सवकी बड़ी तैयारी हुई है। और वहाँका प्रबन्ध भी पुलिस दरोगाको करवाना पड़ा है। अभी सन्ध्या समय जरा फुरसत मिली है, इसी बीचमें घरका भी हाल चाल देखनेके लिये दौड़ आये हैं।

अपने घरमें प्रवेश करते ही उन्होंने देखा, कि तारा एकाग्र चित्तसे माला गूँथ रही है। उन्होंने निकट जाकर कहा—"माला ही गूँथती रहोगी, या उत्सवका इन्तजाम करोगी। देखना अभ्यागत अतिथियोंके आदर-सत्कारमें किसी प्रकारकी त्रुटि न होने पावे, मैं अभी जा रहा हूँ।"

ताराने अपने स्वामीकी तरफ दृष्टि उठाकर आश्चर्य्यसे पूछा - "अभी क्यों जाओगे ?"

रामकृपाल—राज दरबारमें भी उत्सव है; वहाँ सभी प्रधान कर्मचारियोंको उपस्थित रहना होगा।

तारा—यहाँका काम कौन देखेगा ?

रामकृपाल—तुमलोग नौकर चाकरोंसे काम चला लेना।

तारा—यह इन्तजाम तो अच्छा नहीं हुआ है, एक दिन दरबारका उत्सव होता दूसरे दिन प्रजाके यहाँ उत्सव मनाया जाता।

रामकृपाल—ऐसी व्यवस्था होनेसे अच्छा ही होता परन्तु यह भूल सुधारनेकी नहीं है। किसी ऐसे वैसेकी यह भूल नहीं है, स्वयं उदयसिंहकी है।

"उदयसिंहकी भूल सुधारी नहीं जा सकती, सर्वत्र ही क्या उदयसिंहका यही नियम है ! क्या कोई भी उदयसिंहकी भूल सुधार नहीं सकता ?"

एकाएक ताराका मस्तक झनझनाने लगा, उसने अपना गला साफ करके पूछा—"उदयसिंह ! वह कौन है ?"

रामकृपाल—बादशाहके भी बादशाह, जिनके बाहुबलसे गोलकुण्डाकी रक्षा हुई है, वही उदयसिंह !

तारा—मैं यह नहीं पूछती, मैं पूछती हूँ, कि उनका घर कहाँ है ?

रामकृपाल—अरे राम ! राम !! जानती नहीं, इसी गोलकुण्डामें ही, तुम्हारे पिताके आधीन ही तो सैनिक थे। हसनसाहबके भाईको मारनेके अपराधमें उन्हें फाँसीका हुक्म मिला

था। परन्तु आज वही बादशाहके भी बादशाह हो गये हैं। उनकी उँगलीके संकेतसे ही बादशाहको काम करना होगा। साम्राज्यकी उन्नति और पतनका सारा भार उन्हींके ऊपर है, कृष्णानदीके किनारे विशाल राजप्रासादपर उन्हींकी विजय पताका फहरा रही है।

तारा सुन नहीं सकती थी, उसके कानोंसे होकर मानों आगकी ज्वाला हृदयमें प्रवेश करने लगी! परन्तु वह मना भी नहीं कर सकती थी, उदय सुखी हैं, सम्मानित और गौरवान्वित हो रहे हैं, परन्तु तो भी उनमें एक तीव्र ज्वाला थी। मानों चीनीमें विष मिला हो।

रामकृपालसिंह अपने आप कहने लगे, इतना मान सम्मान, इतना गौरव और इतनी पद मर्यादा है, परन्तु अहङ्कार उनमें छूकर भी नहीं है। मैं तो एक तुच्छ कर्मचारी हूँ, उनकी तुलना में मैं एक चींटीके बराबर भी नहीं हूँ, परन्तु उन्होंने मेरे साथ जिस प्रकार आलाप परिचय और बातचीत की है, उससे मैं आश्चर्यित हो गया हूँ। मेरे लिये यह कम सौभाग्यकी बात नहीं है।

ताराने कलेजेपर हाथ रखकर धीरेसे कहा—"तुम्हारी बहन पर उनकी नजर पड़ी है। उसकी भी नजर नहीं पड़ी है, सो बात नहीं है। इसीलिये शायद उन्होंने तुम्हारे साथ घनिष्ठता दिखलायी है।

रामकृपालने आश्चर्यमें पड़कर कहा—"सो क्या?"

तारा—जिस दिन वह हमारे यहाँ डकैती करने आये थे, उसी दिनसे दोनोंमें प्रेम हो गया है।

रामकृपाल—ठीक कहती हो ?

तारा—हाँ।

रामकृपाल—यदि ऐसी बात हो तब तो खुशीकी बात है। परन्तु लक्ष्मीके भाग्य क्या इतने अच्छे होंगे। अच्छा तो मैं जाता हूँ।

तारा—जल्दी लौट आना, बहनोईकी फिक्रमें ही न पड़े रह जाना।

रामकृपालसिंहने हँसकर कहा—"गाली देती हो ?"

तारा—आशीर्वाद देती हूँ।

"अच्छा, वही सही।" कहकर रामकृपालसिंह चले गये, ताराबाई बिछौनेपर गिरकर मुँह छिपाकर रोने लगी, इस समय उदयसिंह और रामकृपालसिंह उसके हृदयपर घात प्रतिघात कर रहे थे, रामकृपालसिंह अपने हृदयका प्रेम, धार्मिक और सामाजिक बन्धन आदि लेकर उसके हृदयपर अधिकार कर रहते थे, परन्तु उदयसिंह बिल्कुल उदासीन भावसे दूर खड़े हुए, अपना कर्त्तव्य करते जा रहे थे। उन्हें जरा भी गम फिकर नहीं कि कौन उन्हें किस दृष्टिसे देखता है। प्रेमकी गति भी क्या ही विलक्षण होती है। जिधर वह अग्रसर होता है, उधरसे वह लौटना नहीं चाहता। जिधर जाना नहीं चाहता उधर लाख चलानेपर भी नहीं चलता। आज उदयसिंह भलेही सम्मान और गौरवके ऊँचे शिखरपर आरूढ़ हों; परन्तु इसके पहले रामकृपालसिंह विद्या बुद्धि बल और ऐश्वर्य किसीमें भी उनकी अपेक्षा हीन नहीं थे ; परन्तु तो भी तारा लाख चेष्टा करके भी उदयसिंहको प्रेमके सिंहासनसे उतारकर रामकृपालसे वह स्थान

पूरा करनेकी चेष्टा नहीं कर सकती थी, रामकृपालसिंहको वह प्यार नहीं कर सकती थी। रोना ही उसके भाग्यमें बदा था।

जिस कमरेमें तारा बिछौनेपर लेटी हुई हृदयकी ज्वालासे भस्म हो रही थी, उसी घरमें शकुन्तलाके साथ लक्ष्मी आ पहुँची, आते ही शकुन्तलाने पुकारा—"गृहिणी सो रही है क्या ?"

तारा झटपट आँख-मुखका भाव स्वाभाविक करके उठ बैठी और गला फाड़कर बोली—प्राणनाथको बिदा करके वियोगनी बनी बैठी हूँ।"

शकुन्तला—अपने प्राणनाथको कहाँ बिदा किया है ?

तारा—वर ढूँढ़नेके लिये !

शकुन्तला—वर किसके लिये ?

लक्ष्मी—( हँसकर ) अपनी भौजीके लिये।

तारा—भौजीका भी क्या फिर विवाह होता है ? ननदके लिये।

शकुन्तला—कहीं बात चीत होती है क्या ?

तारा—शायद होगी।

शकुन्तला—कहाँ ?

तारा—शहरहीमें।

शकुन्तला—किसके साथ ?

लक्ष्मी—सूर्य्य पुत्र ( यम ) के साथ।

तारा—दुर ! उदयसिंहके साथ।

लक्ष्मी—कौन उदय ?

तारा—कौन उदय कहकर मैं उनका परिचय दूं। वही जो हमारे पड़ोसमें रहते थे।

शकुन्तला—जिसे तुम प्यार करती थी ?

तारा—वैसा ही कुछ।

शकुन्तला—वह तो डाकुओंके दलमें है। उस दिन डकैती करने आया था।

तारा—अब वह गोलकुण्डाके सर्वेसर्वा हैं।

शकुन्तला—( आश्चर्यसे ) वही उदयसिंह जिन्होंने अपने बाहुबलसे औरंगजेबको खदेड़ दिया है ?

तारा—हाँ,

शकुन्तला—वह क्या लक्ष्मीके साथ व्याह करेंगे ?

तारा—क्यों नहीं करेंगे, मेरी ननद क्या ऐसी वैसी लड़की है।

लक्ष्मी—परन्तु यदि पुराना प्रेम मेरी भौजीको भी खींच ले ?

तारा—तब बदला बदली कर ली जायगी।

लक्ष्मी—दुर हराम जादी।

शकुन्तला—कोई बातचीत हुई है क्या ?

तारा—मैंने लक्ष्मीके भैयासे कह दिया है। उधर नायक और नायिकामें कितने ही गुल खिल गये हैं। उस दिन तुम यदि गानकी बहार देखती तो हँस हँसकर लोट पोट हो जाती।

"तू यहाँ रहने नहीं देगी।" यह कहकर लक्ष्मी वहाँसे उठकर भागने लगी, परन्तु ताराने उसे पकड़कर अपनी गोदमें बिठा लिया।

इसके बाद बहुत देरतक भास्करतीर्थ और उनके प्रधान प्रधान डाकुओंके विषयकी उनमें बहुत देरतक बातें होती रहीं। जब बाजेवाले दरबाजेपर बाजे बजाने लगे तब ताराबाई फड़-

फड़ाकर उठ खड़ी हुई, और नौकर चाकरोंको कामकाजकी सुधि करा देनेके लिये कमरेसे बाहर निकल गयी।

इसी समय रामकृपालसिंहने कमरेमें प्रवेश किया। उन्हें उस कमरेमें देखकर लक्ष्मी और शकुन्तला उठकर वहाँ से जाही रही थीं, कि उन्होंने रोकर कहा—'मैं अभी दरबारमें लौट जाऊँगा; तुमलोग बैठो! माँसे एक शुभ समाचार कहना था। मालूम होता है, वह किसी काममें व्यस्त हैं। बात न हो सकी। मुझे अभी दरबारमें लौटना है।

शकुन्तलाने बड़े नम्र स्वरमें कहा—क्या खबर है, भैया?

रामकृपाल—जिसके बाहु-बलसे गोलकुण्डा स्वाधीन हुआ है, उन्हीं उदयसिंहके साथ लक्ष्मीके व्याहकी बातचीत हो रही है।

लक्ष्मी दरवाजा खोलकर भाग गयी।

शकुन्तलाने कहा—खबर तो बड़ी खुशीकी है। भगवान यदि नजर फेरकर देखें हमलोगोंकी लक्ष्मी भी साक्षात् लक्ष्मी है। यह प्रस्ताव आपसे किसने किया है?

रामकृपाल—स्वयं महात्मा भास्करतीर्थने।

शकुन्तला—परन्तु उनकी बात यदि उदयसिंह न मानें?

रामकृपाल—उदयसिंह भास्करतीर्थके चेला हैं, यदि वह कुएँमें कूद पड़नेको कहें तो उदय कूद भी पड़ेंगे।

शकुन्तला—कुल गोत्र मिला है?

रामकृपाल—हाँ, मिल गया है।

शकुन्तला—कब लग्न ठहरा।

रामकृपाल—अभी विवाह पक्का होले तब एक लग्न सोध लिया जायगा।

शकुन्तला—मुझे बड़ी खुशी हुई है। भौजीको खबर दे आऊँ।"

"हो, मैं जाता हूँ।" यह कहकर रामकृपालसिंह चले गये।

शकुन्तलाने कहा—"लक्ष्मी! इधर आ, एक अच्छी खबर है।"

तारा और लक्ष्मी साथ ही आयीं। शकुन्तलाने पूछा—"सुना है?"

तारा—हाँ, सुना है।

शकुन्तलाने लक्ष्मीकी तरफ देखकर कहा— बकसीस दो।

लक्ष्मीने एक मुक्का दिखलाया।

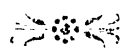

# बारहवाँ परिच्छेद

विजयोत्सवके दिन सन्ध्याके कुछ पहले ही भास्करतीर्थके बाकी साथी जो अभीतक गोलकुण्डामें नहीं पहुँच चुके थे, आने लगे। धीरे धीरे भास्करके सभी डाकुओंसे गोलकुण्डा शहर गम-गमा उठा। उन्हींके साथ हसनसाहब भी दरबारमें आ पहुँचे हैं।

दो पहरसे ही भास्करतीर्थ खास दरबारमें एक कुशासनपर बैठे हैं। दूर दूरपर पहरेदार और अर्दली हुक्म पानेकी अपेक्षामें खड़े हैं, कितने ही व्यस्त भावसे इधर उधर दौड़ धूप कर रहे हैं? भास्करतीर्थको जिसकी जरूरत होती है, उसे बुलाकर बात-चीत कर लेते हैं।

सन्ध्या समय हसनसाहबने भास्करतीर्थके कमरेमें प्रवेश करके यथा योग्य अभिवादन किया और हाथ जोड़कर सामने खड़े हुए।

भास्करतीर्थने मुस्कुराते हुए कहा—आप अब क्या करना चाहते हैं?

हसन—आप जो आदेश करें।

भास्करतीर्थ—अपनी रक्षयित्री रमणीसे आप पूछ क्यों नहीं आये हैं? कि इतने दिन तक तुम्हारे हुक्मसे मैं भास्करके आश्रममें रहा हूँ, परन्तु अब वह आश्रम तोड़कर यहाँसे चले जा रहे हैं, अब मैं कहाँ जाऊँगा।

हसन—उन्होंने जो जो कहा था, सब ठीक हो गया है,

उन्होंने कहा था कुतुबका शीघ्र ही पतन होगा। गोलकुण्डाके सिंहासनपर कोई दूसरा राजा बैठेगा तब आना, अभी महात्मा भास्करके आश्रममें जाकर रहो।

भास्कर—सो तो हुआ है, अब आप क्या करना चाहते हैं?

हसन—मैं आपकी आज्ञाके आधीन हूँ, आप जो कहेंगे मैं वही करूँगा।

भास्कर—मैं कहता हूँ, तुम अपनी गृहस्ती सम्हालो।

हसन—किससे मैं गृहस्थी सम्हालूँ?

भास्कर—क्यों रुपयेकी चिन्ता करते हो, उदयसिंहके आधीन सेना विभागमें काम करो, तुम्हारा मकान जब्त हुआ था उसे छुड़वा दिया है, उसमें जाकर रहो।

हसन—मेरा हृदय सूना है।

भास्कर—क्यों, स्त्री नहीं है? दूसरा विवाह करो।

हसन—प्रभो! ऐसी बात आप फिर न कहियेगा, अपनी प्यारी बानूको जबर्दस्ती घरसे निकाल दिया है। फिर विवाह करूँगा?

भास्कर—आप अपनी उद्धारकारिणीसे एकबार भेंट करो वह आपकी हितैषिणी है।

हसन—मैं उनके बारेमें कुछ भी नहीं जानता, कैसे पता लगा सकता हूँ?

भास्कर—मैंने उसकी खबर पाई है, आज सन्ध्याके बाद उसे तुम्हारे घरपर जानेको कह दिया है, तुम अभी घर जाओ।

हसनसाहब व्यस्त भावसे उठ खड़े हुए और भास्करतीर्थको अभिवादन करके कमरेसे निकल गये। उस समय सन्ध्या हो

गई थी, परन्तु आलोक-मालाके प्रभावसे सन्ध्याकी छाया अपना प्रभाव विस्तार न कर सकी थी।

धीर मन्थर गतिसे सोचते विचारते हसनसाहब अपने घरकी तरफ जा रहे थे। अन्तःपुरके उद्यानके सामने वह एक आलोक स्तम्भके पास पहुँचे ही थे, कि पीछेसे किसीने उनका चपकन खींचा। पीछे फिरकर उन्होंने देखा, कि एक स्त्री है।

हसनसाहबके फिरकर देखते ही वह रमणी ठहाका मारकर हँस पड़ी, हसनसाहबने चौंककर पूछा—"तुम कौन हो।"

रमणीने कुछ भी उत्तर न दिया और भी जोरसे हँसने लगी।

हसनसाहब झुंझलाकर अपने रास्ते चलने लगे, परन्तु वह रमणी भी हँसती हुई उनके पीछे आने लगी। हसनसाहब काँप उठे, यह क्या चुड़ैल है!

हसनसाहब खड़े हो गये और साहस करके बोले—"बताओ तुम कौन हो, नहीं तो मैं पहरेदारको बुलाकर अभी पकड़वा देता हूँ।"

रमणीने पहले ही की तरह हँसकर कहा—"हाँ हाँ, पकड़वा दो, बदला लो।"

हसनसाहबका सिर चक्कर खाने लगा, छाती जोर जोरसे धड़कने लगी, क्या सर्वनाश! यह तो मार्जिना बेगम है।

हसनसाहब ने थोड़ी देरमें अपनेको सम्हालकर कहा—"मार्जिना बेगम! तुम रास्ते रास्ते क्यों घूमती फिरती हो।"

मार्जिना—हाँ, हाँ, मार्जिना बेगम रास्तेमें क्यों घूमती फिरती है। अब मुझे घर है ही कहाँ? बापको खाया, भाईको खाया, अपने उस स्वामीको खाया, जो हृदयसे मुझे प्यार करता था?

हसनसाहब ! यदि मैं रास्तेमें न घूमूँगी तो दूसरी कौन घूमेगी, जाओ, जाओ, तुम मुझे यहाँ घूमने दो।

हसनसाहबने देखा कि अनुताप और चिन्ताके तापसे मार्जिना बेगमका सिर गर्म हो गया है। उन्होंने फिर कोमल स्वरमें कहा—"अन्दर महलमें जाओ रातका समय है, तुम युवती स्त्री हो।"

मार्जिना—हाः हाः ! रास्तेमें खड़ी होनेमें दोष क्या है, वेश्यायें क्या रास्तेमें खड़ी नहीं होतीं ? उनसे क्या मुझमें कोई अन्तर है, मेरे लिये रास्ता ही ठीक स्थान है।

हसन—मेरे घर चलोगी ?

मार्जिना—हाः ! हाः ! क्यों ? दवा-दारू करोगे, वैरका बदला लोगे, वह नहीं होनेका। देखो, मुझे पकड़नेके लिये कई एक बाँदियाँ और नौकर दौड़े आ रहे हैं।

हसन—अच्छा, उन्हींके साथ चली जाओ, और खुदा ताला को पुकारो, वही सब पाप ताप दूर कर देते हैं।

मार्जिना बेगम अन्दर महलसे बाहर निकल पड़ी है, यह खबर पाते ही बाँदियाँ और खोजे उन्हें पकड़ लानेके लिये चारों ओर दौड़ पड़े थे। दूसरे उन्हें पुकारकर हसनसाहबने कहा—मार्जिनाबेगम यहाँ हैं, ले जाओ। मालूम होता है दिमागमें कुछ गोलमाल हो गया है।

मार्जिनाकी दासीने कहा—"दो दिनसे शाहजादी किसीसे बातचीत नहीं करती थीं। दो दिनसे कुछ खाया भी नहीं है, आज सन्ध्याके जरा पहले बगीचेमें घूमनेके लिये निकली थी, अचानक निकल कर बाहर दौड़ आई हैं।

मार्जिनाने दासीकी तरफ आँखें तरेरकर देखते हुए कहा—"हरामजादी झूठ, बोलती है ? मैंने कुछ खाया नहीं है, अपने हाथसे भाईका मांस खाया है, बापका लोहू पिया है। खाया नहीं है, हरामजादी ?"

हसनसाहबने कहा—"पकड़कर ले जाओ, शोकसे ये पागल हो रही है, हकीमको बुलाकर चिकित्साका प्रबन्ध करने कहो।

दासियाँ मार्जिनाबेगमको लेकर अन्दर महलकी तरफ चली गयीं। हसनसाहब मार्जिनाके परिणामकी बात सोचते हुए अपने मकानपर जा पहुँचे, बहुत दिनोंके बाद आज उन्होंने स्नेह और प्रेमके निकेतनको देख पाया। उन्होंने देखा कि उनके निकेतनने भी नागरिक उत्सवमें योग दिया है, उसके भी दरवाजेपर पुष्प-माल और दीपमालाकी जगमगाहट है। हसनसाहबके दरबाजे-पर पहुँचते ही एक आदमीने पुकारा—"कौन।"

हसनसाहबने कहा—"मैं हसन इमानाली।"

एक आदमी दरबाजा खोलकर बाहर आया, और उन्हें झुक कर सलाम कर खड़ा हो गया। यह उनका पुराना नौकर था, नौकरको देखते ही हसन-साहब जोरसे रो पड़े, प्रभु और भृत्य दोनों ही बहुत देरतक वहाँ बैठकर रोते रहे, फिर वहाँसे उठकर हसनसाहब बैठकेमें आये।

नौकर तुरत चिलम भर और उसे गड़गड़ेपर रखकर चला गया। हसनसाहब तम्बाकू क्या पीते, इस समय उनके हृदयमें बिना धुँएकी जो आग दहक रही थी उससे उनका हृदय छार छार हुआ जा रहा था, आज इस घरकी रानी उनके हृदयकी रानी बानू नहीं है। उसीके साथ मकानकी सारी शोभा और शान्ति चली गई है, क्या वह फिर लौटकर नहीं आ सकती है ?

इस समय सहसा किसीने पीछेका दरवाजा खोलकर हसन-साहबके पीछेसे कमरेमें प्रवेश किया। हसनसाहब चिन्तामें इतने मग्न हो रहे थे, कि वह आगन्तुकका आना न जान सके। जो आयी थी, वह बानूबेगम ही थी। बानूबेगम सतृष्ण दृष्टिसे अपने स्वामीके चिन्तातुर मुँहकी तरफ देखने लगी।

सोचते सोचते एक मर्मभेदी दीर्घ निश्वास छोड़कर हसन-साहब अस्फुट स्वरमें कहने लगे, हाय! हाय! मेरे सुखके दिन बानूबेगमके साथ ही चले गये, मैं किसीकी भी बात नहीं सुनूंगा। भास्करकी भी नहीं कल ही इस मकानको छोड़कर मक्काकी तरफ यात्रा करूँगा। बानूके बिना एक दण्ड भी मुझसे इस घरमें नहीं रहा जायगा। बानू! बानू! क्या एकबार तू आ नहीं सकती?"

स्वामीके आवेग पूर्ण उद्गार सुनकर बानूका हृदय भर आया। वह रोती हुई आकर हसनसाहबके पैरोंपर गिर पड़ी।

हसनसाहब एकबारगी कूदकर खड़े हो गये। बानू को छातीसे लगाकर कितनी ही देरतक वह प्रेमके आँसू बहाते रहे।

बहुत देरके बाद जब दोनोंका आवेश कुछ कमा तक हसन-साहबने बानूबेगमको बगलमें बैठाकर पूछा—"तुम इतने दिन कहाँ थी?"

बानू—छाया, कायाको छोड़कर कहाँ जा सकती है! तुम्हारे ही पीछे पीछे मैं थी।

हसन—सो कैसे?

बानू—हाँ, बिल्कुल ठीक कहती हूँ।

हसन—अच्छा, समझाकर कहो।

इसके बाद बानूने एक एक करके अपनी सारी कार्य्यवाही

कह सुनाई। सब कुछ कहकर अन्तमें वह बोली—तुम्हारी नजर कैसी मोटी है, मुझे एकबार भी पहचान न सके, हसन, साहबने बानूबेगमका मुँह चूमकर कहा—"तुम्हारे जैसी स्त्री मिलना बड़े भाग्यकी बात है। तुम्हारे ही पुण्य-प्रतापसे मैं आज-तक जी रहा हूँ, तुम मुझे क्षमा करो।"

बानू—नहीं साहब, मैं क्षमा नहीं करूँगी।

हसन—क्या करोगी?

बानू—अपने हृदय कारागारका कैदी बनाऊँगी।

हसनसाहबने हँसकर कहा—"जितने दिन जीऊँगा, तुम्हारा कैदी होकर ही रहूँगा।

—***—

# तेरहवाँ परिच्छेद

भीषण घनघोर रात्रिका अन्धकार चारों ओर छा रहा है, एक निस्तब्ध निर्जनमें बैठे हुए कई एक आदमी धीरे धीरे बात-चीत कर रहे हैं। एक ने कहा—"भास्कर डाकूने अपना ही स्वार्थ सिद्ध करनेका सभी बन्दोबस्त किया है, मैं उदयके अधीन कठपुतलीकी तरह नहीं रह सकता था, इसलिये मुझे राजा न बनाकर एक नाबालिगको पकड़कर उसने राजगद्दीपर बैठाया है।"

जिसने उपरोक्त बातें कहीं थी, वह कुतुबशाहका एक दूर सम्पर्कीय भतीजा था, नाम गुलामहुसेन था।

गुलामहुसेनके पास और भी पचीसों बलवान युवक बैठे हुए थे, उनमेंसे एकने कहा—"आप क्या करना चाहते हैं ?"

गुलाम—तुम्ही लोग मेरे अवलम्ब हो, तुमलोग जैसी सलाह दो, वैसाही करूँ। परन्तु इन धूर्तोंसे बदलालिये बिना चैन नहीं! डाकू क्या मेरा राज्य एक नाबालिग को दे देगा ? शायस्ताखाँ! तुम क्या कहते हो ?

शायस्ताखाँ नामके एक वीर युवकने उठकर कहा—"आप ठीक कहते हैं, किन्तु भास्करने इस समय धर्म और स्वार्थ-त्यागका ढोंग रचकर सभीको अपने वशमें कर लिया है। उदयके हाथमें इस समय सारी शक्ति है। हमलोग क्या कर सकते हैं।

गुलाम—उपाय है, उपाय! उपायसे क्या नहीं होता ?

शायस्ता—कहिये, क्या उपाय है ? हमलोग आपके लिये जान देनेको तैयार हैं।

गुलाम—प्रकट रूपसे इस समय कुछ करना सम्भव नहीं षड़यन्त्र करना होगा।

शायस्ता—कहिये, कैसा षड़यन्त्र ?

गुलाम—रञ्जनलाल !

रञ्जनलाल एक उच्छृङ्खल हिन्दू युवक था। बहुत दिनोंसे ही गुलामहुसेनके दलमें मिलकर जाल जुआचोरी और डकैती कर रहा था। उसने आगे बढ़कर कहा—"हुजूर" !

गुलाम—तुम्हें एक काम करना पड़ेगा।

रञ्जन—मैं कमर कसे तैयार हूँ।

गुलाम—बड़े दारोगा रामकृपालसिंह तुम्हें पहचानते हैं ?

रञ्जन—उन्होंने मुझे आखोंसे देखा नहीं है, नाम सुना है।

गुलाम—अच्छा न सही तुम्हींसे काम चल जायगा।

सभी एक स्वरसे बोल उठे—आप क्या करना चाहते हैं, हमें सुननेकी बड़ी इच्छा हो रही है।

गुलाम—ऐसा काम करना होगा, जिससे सभी तरफसे हमें लाभ रहे।

शायस्ता—कैसे ?

गुलाम—रामकृपाल हमें पकड़नेके लिये कमर कसकर लग गया है।

शायस्ता—सो तो हमें मालूम है।

गुलाम—उसके घर कई एक खूबसूरत औरतें हैं। उसकी स्त्री तो खूबसूरत है ही, उसकी बहन उससे भी अधिक है,

शायस्ता आपने ठीक सोचा है उन्हें पकड़ लानेसे हमें बहुत लाभ हो सकता है। जेरिना बीबीकी सहायतासे उन्हें बेचकर हमलोग बहुत रुपये पा सकते हैं।

गुलाम—और भी एक बात है। उसकी बहनसे उदयका विवाह होनेवाला है। विवाह हो जानेपर वह यहाँ जमकर रह जायगा, परन्तु किसी प्रकार हमलोग उसकी स्त्रीको उठा लायें तो थोड़े दिन तक अफसोस करके वह अपने आप ही भाग जायगा। फिर नबालिग बादशाहको गद्दीसे उतारना बायें हाथका खेल हो जायगा।

शायस्ता—परन्तु जासूसके घर चोरी करना ही तो सबसे कठिन है।

गुलाम—अच्छा तुमलोग इधर आओ, मैं एक उपाय बताता हूँ।

इसके बाद गुलामने फिस फिस करके कुछ ऐसी बातें कहीं जिससे सभी बड़े प्रसन्न हुए। शायस्ताखाँने कहा—"इसीको कहते हैं, बादशाही दिमाग! इससे हमलोग कितनी ही चिड़ियाँ मार सकेंगे, रञ्जन! तुम यह काम कर सकोगे न?"

रञ्जन—जरूर कर सकूँगा, यह कौनसी बड़ी बात है।

गुलाम—अच्छा तो कल सबेरे ही तुम·····

रञ्जन—जरूर जाऊँगा।

गुलाम—अच्छा अभी चलो, लज्जतउन्नीसाके यहाँ चलकर मनको चङ्गा किया जाय।

"हुजूर हमारे माँ बाप हैं।" चलिये।

इतना कहकर सभी निश्चर उठ खड़े हुए।

# चौदहवाँ परिच्छेद

लक्ष्मी और शकुन्तला बरामदेमें बैठी बातें कर रही थीं, शकुन्तलाने लक्ष्मीका चिबुक पकड़कर कहा—"इस मुँहको देखकर कौन नहीं मोहित होगा ? उदयसिंह मोहित हुए तो कौन बड़ी बात हुई, मैं तो स्त्री हूँ, परन्तु मेरी भी इच्छा होती है कि मोहित हो जाऊँ।

लक्ष्मीने कुछ भी उत्तर नहीं दिया, जरा मुस्करा दिया।

शकुन्तला—अच्छा लक्ष्मी, सुनती थी, लग्नपत्रिका देखकर विवाहका दिन ठीक किया जायगा, परन्तु महीनों होनेको आये अब तो कोई बातचीत ही नहीं होती।

लक्ष्मी—तुम्हें तो और कोई काम नहीं है, हरवक्त इसी फिक्रमें रहती हो।

शकुन्तला—परन्तु अब तो दिन कटते हुए मालूम नहीं होते।

लक्ष्मी—कोई दिन रह भी तो नहीं गया है, जो लोग विवाहके लिये मरते रहते हैं, उन्हींके दिन नहीं कटते। मैं विवाहकी कुछ भी चिन्ता नहीं करती हूँ।

शकुन्तला—इसका माने यह है, कि तुम अपने जीवनकी चिन्ता नहीं करती हो। तुम्हारा जीवन लक्ष्यहीन है, जबतक विवाह नहीं होता सबकी यही अवस्था रहती है।

लक्ष्मी तुम्हारे कहनेका क्या मतलब है, वही कहो इतनी लेक्चरबाजी छोड़ो।

शकुन्तला—उदयसिंहके साथ विवाहकी जो बात हो रही थी, उसके बारेमें क्या हुआ ?

लक्ष्मी—मैं क्या जानूं ?

शकुन्तला—तो कौन जानता है।

लक्ष्मी—माजी और भैया !

शकुन्तला—वे लोग क्या कहते हैं ?

लक्ष्मी—मैं क्या पूछने गई थी ?

शकुन्तला—घरमें क्या तू कान मूंदकर रहती है ?

लक्ष्मी—माँकी इच्छा नहीं है।

शकुन्तला—माँकी इच्छा नहीं है, इतने रूपवान, गुणवान गौरवी और यशस्वी युवकसे कन्याका विवाह करनेमें माँकी इच्छा नहीं है ! वह क्या चाहती हैं ?

लक्ष्मी—माँ कहती है कि, डाकुओंका सर्दार है, तिसपर सेनापति है। सर्वदा उसकी जिन्दगी खतरेमें ही रहेगी, कभी घर रहेगा कभी नहीं रहेगा, मैं एक साधारण गृहस्थका लड़का देखकर लड़कीका विवाह करूँगी।

शकुन्तला—तुम्हारे भैयाका क्या मत है ?

लक्ष्मी—वह उदयसिंहके साथ विवाह होनेको बड़े सौभाग्य-की बात समझते हैं।

शकुन्तला—तभी तो ठीक हुआ, किसीके भाग्यमें एक भी नहीं जुटता और तुम्हें दो दो मिलते हैं।

मथुरा एक नौकर था, वह भी हाजिर हुआ, लक्ष्मीबाईने कहा—"मथुरा, दीवानजीको जाकर कह दो कि इस स्त्री और

इसके स्वामीके खाने पीने और रहनेका सब प्रबन्ध करदें। इसका स्वामी रोगी है, उनके औषधका भी प्रबन्ध करदें, परन्तु इन दोनोंमें कोई घरसे बाहर न निकलने पावे, इसका भी ध्यान रखा जाना चाहिये ?"

स्त्रीको साथ लेकर मथुरा चला गया।

# पन्द्रहवाँ परिच्छेद

महाराजिन कड़ाही के गर्म तेलमें तरकारी छोड़कर इषदुन्मीलित नेत्रोंसे कड़ाहीकी ओर देखती हुई तरकारी-कुलकी बे अदबी दमन करनेके लिये दाहिने हाथमें दर्वी दण्ड (कलछुल) नामक शासन-दण्ड लिये जरा झुककर बैठी हुई है, और बीच बीचमें तरकारी-कुलकी अवाध्यता देखकर बक्र दृष्टिसे उनकी ओर देख रही है। क्योंकि जलीय पदार्थ, तरकारियाँ तप्त तैलमें पड़कर छन छन फन फन फूस फास आदि नाना प्रकारके शब्दोंमें अपनी आपत्ति प्रकट कर रही हैं। उनके कहनेका अभिप्राय यह है, कि उन्हें तेलमें भूँजकर इतना कष्ट देनेका अधिकार और शक्ति किसी को नहीं है!—महाराजिनको भी नही है। यदि वह खाना चाहें तो कच्चेही खा सकती हैं, राजदरबारमें भी फाँसी देनेका हुक्म है; परन्तु कष्ट देकर मारनेका आज कल हुक्म नहीं है। लेकिन महाराजिनका बिल्कुल उलटा ही सिद्धान्त है। वह कहती है, कि तरकारीके पदार्थोंको इस प्रकार भूँजनेका अधिकार सदासे चला आता है। क्योंकि वे निर्बल, गूँगें और बहरे हैं मनुष्य बलवान और वाक् शक्ति सम्पन्न हैं। चिरकालसे ही कालका भोज्य होता आ रहा है।

जब महाराजिन तरकारी-युद्धमें तन्मय हो रही थीं, एक बिल्ली दरवाजेपर बैठी हुई "मेंऊँ मेंऊँ" की आवाजसे भोज्य पदार्थकी याञ्चाकर रही थी। इसी समय शकुन्तलाके साथ

लक्ष्मीने वहाँ आकर बिल्लीको अपनी गोदमें खींच लिया और महाराजिनको सम्बोधन करके कहा—"मिसराइनजी ! एक कहानी कहो।"

मिसराइन पानीसे अपने हाथ धोकर लक्ष्मीकी ओर देखती हुई बोली—"लक्ष्मी ! इतनी बड़ी हो गयी—।"

बीचहीमें टोककर लक्ष्मीने कहा—"अभी उसका विवाह नहीं हुआ, क्यों यही न मिसराइन।"

मिसराइनने हँसकर कहा—"ठीकही तो।"

लक्ष्मी—क्यों जल्दी होनेसे क्या तुम फूल सय्यापर सोती ?

मिसराइन—अरे, मैं क्यों सोने लगी। मेरा फूल तो सूख चुका है।

लक्ष्मी—अच्छा, मिसराइन, उस दिन जब पहले पहल तुम दोनोंका मिलन हुआ, क्या-क्या बातें हुई, बताओ तो सही।

मिसराइन—क्यों ? सीख रखेगी क्या ?

लक्ष्मी—हाँ, तुम कहो।

शकुन्तला—आज तक क्या वे बातें याद हैं ?

मिसराइन—अरे तुम क्या कहती हो ? उस दिनका सुख क्या कभी भूला जा सकता है।

लक्ष्मी—अच्छा, महाराजिन ! तुम अपने स्वामीको बहुत प्यार करती थी ?

मिसराइन—स्वामीको भी क्या कोई प्यार करती है, जो मैं करती।

लक्ष्मी—तो क्या स्वामीको सभी मारती हैं।

मिसराइन—प्यार किया जाता है, परायेको। दूसरेको अपना

बनानेके लिये परन्तु स्वामी इतना अभिन्न साथी है, कि उसको प्यार किया जा ही नहीं सकता।

शकुन्तलाकी आँखोंमें आँसू भर आये, उसने कहा—मिसराइन एक कहानी कहो।

मिसराइन—इसीलिये कहती थी, कि तू इतनी बड़ी हो गयी, अभी तेरा लड़कपन नहीं गया।

लक्ष्मी—( हँसकर ) बिना व्याह हुए, क्या लड़कपन जाता है ?

मिसराइन—विवाह विवाह करके तू पगली होना चाहती है।

लक्ष्मी—कौन नहीं पागल होता, तुम कहानी कहो।

मिसराइन—इसी समय जब मैं रसोई करनेमें लगूँगी, तू कहानी सुनने आयेगी ! फुरसतके समय आना कहूँगी।

लक्ष्मी—तुम्हें फुरसत कब होती है, हमें तो आज तक कभी मालूम नहीं हुआ। अच्छा मिसराइन, तुम्हारे स्वामीका चेहरा कैसा था ?

मिसराइन—दुर हो। मैं बक नहीं सकती।

लक्ष्मी—मिसराइन, अपने स्वामीका चेहरा भूल गयी हो यही बात ठीक है न ?

बुढ़िया—हाथ घुमाकर बोल उठी—"वह चेहरा क्या कभी भूलनेका है। अभी मेरे हृदयमें वह जाज्वल्यमान है।

लक्ष्मी—अच्छा तो कहो न तुम्हारे स्वामी कैसे थे ?

शकुन्तला—( हँसकर ) मिसिरजीकी बात उठते ही मिसराइनको सुध, बुध नहीं रहती। तरकारी कब जलकर खाक हो गयी, उधर इनका ध्यान ही नहीं मालूम होता है, इनके स्वामीका नाम लेनेसे हमें उपवास रहना पड़ेगा।

मिसराइन बड़ी क्रोधित हो उठी। शकुन्तलाको झिड़ककर बोली—"क्या कहती हो, मेरे स्वामीका नाम लेनेसे उपवास करना होगा। मेरे स्वमी अतिथि-अभ्यागतको बिना खिलाये मुखमें पानी भी नहीं देते थे।

लक्ष्मीने जोरसे हँसकर कहा—ठीक ही तो है, मिसिरजीके नामपर हम सभी उपवास क्यों करने जायँगी ?

इतना कहकर लक्ष्मी शकुन्तलाको खींचकर ताराबाईके कमरेकी तरफ ले चली। दरवाजेपर पहुँचकर लक्ष्मीने कहा—दरबाजा खोलो कृष्ण हाजिर हैं।

ताराने दरबाजा खोलते हुए कहा—आओ कृष्ण, इतनी देर-तक किस कुञ्जमें थे ?

लक्ष्मी—( हँसती हुई ) मिसराइनके कुञ्जमें।

तारा—अपने भैयाके कुञ्जमें नहीं ?

लक्ष्मी—वहाँ तुमलोग रहा करती हो।

तारा—हमें तो कुञ्ज है, तुम किस कुञ्जमें जाओगी यही डर होता है।

इसी समय भिखारिन उनके पास हँसती हुई आ पहुँची।

लक्ष्मी—क्या सोच रही हो ! बिछौना तो पा गयी हो न ?

भिखारिन—हाँ; आप लोगोंके प्रसादसे सब पा गयी हूँ।

लक्ष्मी—तो फिर क्या सोचकर चली है ?

भिखारिन—मेरे स्वामी जरा सोये हैं, अकेले अच्छा नहीं लगता था, इसलिये दरबाजा बन्द करके आपलोगोंके पास चली आयी हूँ।

"अच्छा, आओ, बैठो।" इतना कहकर लक्ष्मीने बारामदेमें

एक चटाई बिछा दी, जिसपर भिखारिन बैठी और चौकी-पर वे तीनों औरतें बैठी।

लक्ष्मीने पूछा—तुम्हारा नाम क्या है? बहन!

भिखारिन—मुझ गरीबिनीको बहन कहकर क्यों लजाती हो।

लक्ष्मी—मेरी इच्छा! तुम बातका जवाब दो।

भिखारिन—भिखारिनका नाम क्या होगा, धनमणि, राम-मणि, श्याममणि ऐसा ही कुछ होगा।

लक्ष्मी—अच्छा धनमणि; तुम गाना जानती हो।

भिखारिन—अच्छा, नहीं।

लक्ष्मी—तब भी काम चलाऊ?

भिखारिन—सो सभी जानती हैं।

लक्ष्मी—सबकी बात मैं नहीं पूछती। तुम यदि जानती हो तो एक गाओ।

भिखारिनने अब गाना आरम्भ किया, गाना बहुत अच्छा था जिसे सुनकर सब बड़ी खुश हुईं और लक्ष्मीने कहा—वाह! वाह!! भिखारिन,तुम तो अच्छा गाती हो,एक गाना और गाओ।

भिखारिन—अभी जाती हूँ, इतनी देरमें वह उठ पड़े होंगे। दवा खिलानी है।

भिखारिनके चले जानेपर लक्ष्मीने कहा—"सभी स्वामीके झंझटमें पड़ीं हैं।"

शकुन्तला—तुम तो उससे बरी हो।

लक्ष्मी—तुम ही क्यों नहीं हो? ज्यों ही पाया त्योंही खाया।

शकुन्तला—सो तो ठीक ही किया है। बाहर रहनेसे बेदखल होनेका डर रहता, इसलिये खा पीकर मैंने उदरस्थ कर लिया है।

लक्ष्मी—अच्छा, एक बातका उत्तर दोगी ?

शकुन्तला—कहो, क्यों न दूंगी।

लक्ष्मी—उस दिन तुम कहती थी कि मिथिलामें वह विद्याध्ययन करने गये थे, वहीं उनकी मृत्यु हो गयी थी। तुम्हें यह खबर किसने दी थी ?

शकुन्तला—जन परम्परासे सुना था।

लक्ष्मी—कोई खोजने गया था ?

शकुन्तला—वह देश क्या यहीं है, कि कोई खोज लेता ?

लक्ष्मी—अरे, वह मरे कि किसी दूसरी सुन्दरीके चन्द्रवदनपर मोहित होकर वहीं रह गये, इसकी खबर लिये बिना ही तुम विधवा बनी बैठी हो।

शकुन्तला—अपने एक जान पहचानी आदमीको मैंने पत्र लिखा था। उन्होंने वहाँ जाकर अनुसंधान किया था। कितनोंहीने कहा था, बुखारसे उनकी मृत्यु हो गयी है, और कितनोंहीने कहा—वे वहाँसे चले गये हैं।

लक्ष्मी—तब मैं कहती हूँ, वह अभी मरे नहीं हैं।

शकुन्तला—और भी सुनो, उसके बाद शास्त्रानुसार बारह वर्षतक मैंने अपने माथेका सेन्दुर नहीं उतारा था, पीछे श्राद्ध आदि क्रिया करके मैंने वैधव्य धारण किया।

लक्ष्मी—अभी शायद वह जीते हैं।

शकुन्तला—मेरे लिये वह मरे ही हैं।

लक्ष्मी—यदि तुम उन्हें एक दिन देख पाओ ?

शकुन्तला—यदि तुम आकाशमें खिले फूल देख पाओ ?

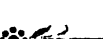

# सोलहवाँ परिच्छेद

एक सप्ताह बीत गया। भिखारिन लक्ष्मीके मकानमें रहती हुई उनके पास आवा जाही कर रही है। प्रतिदिन ही गाना गाकर, कहानी सुनाकर उसका मन लुभानेकी चेष्टा करती है। एक दिन आकर उसने कहा—"मेरे स्वामी जब अच्छे हो गये हैं, हमलोग अब चले जायेंगे।"

लक्ष्मी—कहाँ जाओगी ?

भिखारिन—देश-देश भीख माँगने। हमें क्या कोई घर द्वार है ? परन्तु आपलोगोंको छोड़कर मन कहीं जाना ही नहीं चाहता !

लक्ष्मी—तो हमलोगोंके यहाँ ही क्यों न रह जाओ।

भिखारिन—बारह महीने एक जगह बैठकर खाना भी तो अच्छा नहीं है, परन्तु आपके यहाँ नौकर चाकर बहुत रहते हैं, हम दोनोंको यदि आपलोग कोई काम दें तो।

लक्ष्मी—रहोगी ? अच्छा मैं भैयाको कहूँगी।

भिखारिन—बारह महीने भीख माँगनेसे भी पेट नहीं भरता हमें खाने पहननेको मिलनेसे ही काम चल जायगा।

लक्ष्मी—अच्छा, मैं भैयाको कहकर भर्ती करा दूँगी। अभी तुम लोग गाना गाओ।

गाना गाकर भिखारिन चली गयी। उसी दिन लक्ष्मीने दारोगासाहबसे कहकर उन्हें भर्त्ती करा दिया।

तबसे एक महीना बीत गया है। एकदिन गम्भीर रात्रिके समय भिखारिनका स्वामी जिसका नाम भंजन था, रामकृपाल-सिंहके मकानका पिछला दरबाजा खोलकर पैर दबाते हुए सामनेके घने बगीचेमें जाकर खड़ा हुआ, और एकबार धीरेसे खाँसा। बड़े बड़े दो जवान वहाँ आ पहुँचे और भञ्जनके सामने आकर एकने कहा—"क्या खबर है, रञ्जन।"

( भंजन बनावटी नाम है, रञ्जन ही असली नाम है। )

रंजन—आज तो कुछ न हो सकेगा।

शकुन्तला नामकी एक बड़ी घाघ छोकड़ी जुट गयी है। वह रोज ही लक्ष्मीके यहाँ सोती है। उसकी आँखोंमें धूल झोकना कठिन है।

गुलामहुसेनने पूछा—उसकी उमर कितनी है?

रञ्जन—वह भी युवती और सुन्दरी है, सभी एकसे एक बढ़कर हैं।

गुलाम—दोनोंहीको लाओ।

रञ्जन—शकुन्तला बड़ी घाघ है।

मैंने बीबीको किसी बहाने वहाँ सोनेको भेजा था, परन्तु वह छोकरी उसे किसी प्रकार सोने ही नहीं देती परन्तु लक्ष्मी बड़ी अच्छी लड़की है। वह जैसी ही सुन्दर है, वैसी ही गुणवती है। साक्षात् माँ लक्ष्मीका अवतार है।

गुलाम—सो तो ठीक है, अभी यह बताओ कि बीबीने काम कहाँतक क्या किया है?

रञ्जन—वही तो कह रहा हूँ। सभी ठीक ठाक है; परन्तु एक शकुन्तलाके कारण ही न तो बीबी वहाँ सोने पाती है।

और न हमारा काम ही बनता है, जिस दिन शकुन्तला नहीं आयेगी उसी दिन काम पूरा किया जायगा।

गुलाम—अच्छा, एक उपाय है। उदयसिंह राज्यकी सीमा-बन्दी करनेके लिये काश्मीर जा रहे हैं, उनके साथ राम-कृपालसिंह भी जायँगे उसी दिन हमलोग उनके तोपखानेपर छापा मारेंगे।

यही परामर्श ठीक रहा।

रञ्जन जैसे दारोगाके घरसे निकला था उसी प्रकार पैर दबाते हुए धीरेसे प्रवेश कर गया।

अपने कमरेमें प्रवेश करके रञ्जनने कहा—बीबी, जगी हो।

बीबी—हाँ, क्या हुआ ?

भंजन—होगा क्या, छापा मारनेके लिये लोग कहते हैं।

बीबी—कबतक ?

भंजन—हाल हीमें रामकृपालसिंह बाहर जानेवाले हैं, उसी दिन ! परन्तु डाकुओंके हाथमें भोली भाली लक्ष्मीको देने की तो इच्छा नहीं होती।

बीबी—तुम भी तो डाकू हो।

रञ्जन—डाकूको क्या माँ बहने नहीं होतीं ?

बीबी—सच कहते हो ! लक्ष्मी और शकुन्तलाके निकट बैठनेपर मुझे यही मालूम होता है, कि मैं नरकका कीड़ा हूँ, और वे स्वर्गकी परी हैं। उन्हें देखकर मुझे इच्छा तो नहीं होती कि फिर पाप करूँ।

रञ्जन—देखो बीबी, सतसङ्गमें रहनेसे बुरी चिन्ता मनमें आती ही नहीं, मेरी तो जरा भी इच्छा नहीं है,कि गुलामहुसेनका काम बजाऊँ।

बीबी—तब यहाँ रहते किस लिये हो ?

रञ्जन—कुछ भी निश्चय नहीं कर पाता, यदि कहीं पकड़ पायेगा तो मुझे जीता ही चबा जायगा।

बीबी—रामकृपालसिंहको कहकर उसे पकड़ा क्यों नहीं देते ?

रञ्जन—वह भी हमारा नाम बताकर हमें जेलमें ठूसवा देगा।

बीबी—मेरी एक बात सुनोगे ?

रञ्जन—कहो।

बीबी—चलो यहाँसे भागकर वृन्दावन चलें। वहाँ भीख माँगकर भी पेट पाल सकेंगे। तीर्थमें रहनेसे किसी प्रकार गति भी हो जा सकती है।

रञ्जनने स्वीकार कर लिया। उसी रातको वे दोनों उठकर चले गये। सबेरे उन्हें कोई देख न सका।

# सत्रहवाँ परिच्छेद

शान्ति तो खोजी नहीं थी, खोजा था सुख ! यही बड़ी भूल हो गई थी, उस समय सोचने समझनेका अवकाश नहीं था, देखनेका भी समय नहीं था। उस समय यौवनकी उत्सुकता बालोचित चपलता और किताबी विद्यासे हृदय भरा हुआ था ? वह हवाई महल बनानेका जमाना था,उस समय यह नहीं सोचा था, कि प्रेम दुःखका खन्दक है। अशान्तिका विकट तूफान है, उस समय यह समझनेकी शक्ति नहीं थी कि किसीके सब दिन एक समान नहीं जाते। परिवर्त्तशील संसारका कठिन नियम है, उस समय यह भी नहीं जान सका था कि प्रेममें विरह है, कार्य्यमें विफलता है। आशामें निराशाकी काली छाया है, सभी कार्य्योंका भला बुरा अंश है। पुण्यका पुरस्कार और पापका प्रायश्चित्त लगा ही रहता है, उस समय ईश्वरकी अद्भुत लीला, दुर्बोध्य जटिल और कठिन नियमसमष्टि और प्रकृतिके अभेद्य बन्धनका ज्ञान नहीं था। इसलिये सुखकी खोजको ही अपने जीवनका एक मात्र लक्ष्य बनाया था, शान्तिसे घृणा करके अशान्तिको अपनाया था, यही बड़ी भूल हुई थी।

जब मनुष्यके हृदयमें पापका अनुपात-दावानल जलता है, तब उसके अन्तस्तलसे यही उद्गार निकलते हैं। जब यह अनुतापकी आग जलती है, तब वह हृदयकी कलुषताको जला-कर खूब पवित्र कर देती है।

मार्जिना बेगमके हृदयमें भी अब यही आग जली है, अब वह न समय पर नहाती न समय पर खाती, न कोई शृंङ्गार-पटार करती, विलासिता अब उससे कोसों दूर है। अब उसके दिमागमें भी कुछ गोलमाल हो गया है। बार बार बुलाने पर भी जवाब नहीं देती, सर्वदा ही मौन भावसे बैठी रहती है।

समय दो पहरका है, मार्जिना अपने कमरेमें अकेली बैठी है, आजकल वह किसीको अपने पास रहने भी नहीं देती। मार्जिना अकेली बैठी कुछ सोच रही थी इतनेमें दासीने आकर भोजन करनेके लिये बुलाया। मार्जिना उठ ही रही थी कि कलेजे को पीड़ाने जोर किया, वह हाय मारकर जमीनपर गिर पड़ी। दासीने समझा कि ये खानेके वक्त जैसे रोज नखरे करती है, वैसे आज भी कर रही है। प्रतिदिन दासियाँ खानेके लिये कह-कर जब हट जाती थी, तब बेगम नूरमहलसे जाकर कहती थीं वही आकर किसी तरह पोट पुचकार कर मार्जिनाको खिलाती थीं, आज भी दासी दौड़ी हुई नूरमहलके पास गयी।

नूरमहल उस दिन मार्जिनाकी दशा देखकर बहुत दुःखित हुई, उन्होंने देखा कि बादशाहजादी मार्जिना जो एक दिन कुसुमकोमल शय्यापर सोती थी वही आज घरके फर्शपर लोट पोट हो रही है। दोनों हाथोंसे कलेजेको दबा रखा है, केश खुल-कर धूलमें लोट पोट हो रही हैं, आँखें उदास और मिचकती हुई हैं, उनसे आँसू गिरकर फर्शको भिगो रहे हैं।

नूरमहलने उसकी आँखें पोंछकर कहा—"मार्जिना! तू आज इतनी बेकल क्यों हुई बेटी?"

मार्जिनाने लम्बी साँस लेकर कहा—"कौन—बेगम, माँ! यहाँ आकर बैठो।"

नूरमहल—आज तेरी माँ जीती होती तो पुत्र, साम्राज्य और स्वामी खोकर जितनी विकल नहीं हुई होती, उतनी तेरी यह दशा देखकर हुई होती। बेटी, उठ थोड़ा खाले।

मार्जिनाके दोनों नेत्रोंसे फिर आँसू गिरने लगे, उसने कहा —"खाऊँ क्या माँ! पीड़ासे कलेजा चूर चूर हो रहा है, उठनेकी शक्ति नहीं है।"

नूरमहल—हकीमके देखनेसे कुछ आराम नहीं मिलता?

मार्जिना—कुछ भी नहीं, यह पापका दण्ड है, हकीम डाक्टर क्या आराम देगा, मैंने अपने स्वामीको विष खिलाया है। जिससे वह तड़प-तड़पकर मरे हैं, उसीका दण्ड भोग रही हूँ। हकीम डाक्टर इसको अच्छा नहीं कर सकते, मेरे स्वामी जिस रास्तेसे जैसे गये हैं मैं भी उसी रास्तेसे वैसे ही जाऊँगी। मुझे कोई भी न रोक सकेगा।

इतनी बातें कहते कहते उसकी पीड़ा बढ़ उठी, वह बेहोश होकर वहीं गिर पड़ी। अब दासियाँ उसके आँख मुखपर पानी छिड़कने और हवा करने लगीं, बहुत देरके बाद मार्जिना होश में आई परन्तु उस दिन उसकी बेचैनी बढ़ गई।

नूरमहलने उसकी चिकित्साकी फिर नई व्यवस्था कर दी, परन्तु वैद्यने कहा—शरीरकी वायु कुपित हो जानेसे यह व्यथा उत्पन्न हुई है, इस रोगसे रोगीकी जान बचनी कठिन है।

मार्जिनाका प्रतिदिनका यही हाल है, कभी वह होशमें आती और कभी वह दर्दकी पीड़ासे मूर्च्छित हो जाती है। मार्जिनाके सुखके दिन अब चले गये।

# अठारहवाँ परिच्छेद

रात आधीसे अधिक बीत चुकी थी, शायस्ताखाँका दल कृष्णानदीके किनारेके निविड़ जङ्गलमें ठहरा हुआ था, चारों ओर सन्नाटा छाया हुआ था। नदीकी कल-कल ध्वनि और बीच बीचमें जलचरोंकी उछल-कूदकी आवाजके सिवा और कुछ भी सुनाई नहीं पड़ता। इसी समय दलके लोगोंने कान खड़े करके सुना कि कोई आदमी जल्दीसे उन्हींकी ओर आ रहा है, दल-पतिका आगमन जानकर सभी कतार बाँधकर खड़े हुए।

परन्तु आनेवाला दलपति न था, सभीने आश्चर्य्यसे देखा कि वह रञ्जन है। वह घबड़ाया हुआ है, रञ्जनने आतेही धीरेसे शायस्ताखाँ से कहा—"देखो मामला बड़ा बेढब है, जासूस पीछे लगा है।"

शायस्ताखाँने आश्चर्य्यसे कहा—"सो कैसे ?"

रञ्जन—रामकृपालसिंहके मकानसे होकर जब हमलोग आ रहे थे, उसी समय मुझे ऐसा मालूम हुआ मानों कोई पैर दबाकर हमलोगोंके पीछे आ रहा है।

शायस्ता—ऐसा है, तब तो सचमुच डरकी बात है, फिर ?

रंजन—इसके बाद उसका पता नहीं लगा है, दलपति उसकी खोजमें गये हैं।

शायस्ता—दारोगा तो काश्मीर गया है न ?

रंजन—हाँ मकान सूना है।

शायस्ता—रङ्गलालने क्या कहा है ?

रंजन—कितनी बार तुरही बजाई, परन्तु रङ्गलाल या बीबी किसीका भी पता नहीं लगा है।

शायस्ता—तुम क्या सोचते हो ?

रंजन—मैं तो यही अनुमान करता हूँ, कि किसीने पुलिसको हमारी सारी बातें कह दी हैं।

शायस्ता—इस समय क्या करना चाहिये ?

रंजन—चलो अभी नदी, पार हो चलें, सवेरे अपने अपने घर चलेंगे, यहाँ रहनेसे अभी पुलिस पकड़ेगी। अब पुराना जमाना नहीं है, इस समय उदयसिंहका कड़ा शासन है, शराब पीकर पहर भर रातके बाद बाहर घूमनेका हुक्म नहीं है, एक वेश्याके घरमें चार पाँच आदमी शराब पीकर शोर गुल भी नहीं कर सकते। ओः ! कैसा कड़ा हुक्म है, इस काममें अधिक दिन रहनेसे एक दिन जानपर आ बीतेगी।

शायस्ता—अब उपाय क्या है ?

पीछेसे गुलामेबादने जोरसे कहा—"उपाय खुदाताला करेंगे ?"

रंजनलालने पूछा—कुछ पता लगा ?

गुलाम—कुछ भी नहीं, मालूम होता है, कोई कुत्ता-बिल्ली थी।

भञ्जन—परन्तु मेरी तो धारणा है, कि किसी आदमीके पैरकी आहट थी।

गुलाम—तुम तो झाड़ी झाड़ीमें बाघ देखते हो।

भञ्जन—आज मुझे डर हो रहा है। इतना मुझे कभी डर नहीं होता था।

गुलाम—कुछ भी हो, एकबार देखना ही होगा।

भञ्जन—क्यों इतनी कड़ी प्रतिज्ञा क्यों ?

गुलाम—उसकी सुन्दरताकी जैसी प्रशंसा सुनी है, उससे मैं उसके लिये मरनेको भी तैयार हूँ। अब देर करने की जरूरत नहीं। इसी समय चलना चाहिये।

रञ्जनलालने बहुत आनाकानी की। शायस्ताखाँ ने भी उसीका समर्थन किया, परन्तु गुलामेबादने उनकी एक न सुनी। वह अपनी प्रतिज्ञापर डटा ही रहा। इसलिये सबको लाचार होकर अपने दलपतिका हुक्म मानना ही पड़ा, अब अस्त्र शस्त्र लेकर सबलोग रामकृपालसिंहके मकानकी तरफ चल पड़े।

रामकृपालसिंहके मकानसे लगे हुए उनके बगीचेमें पहुँचकर गुलामेबादने रञ्जनलालसे कहा—"दीवालके ऊपर यह जो लाल रस्सी लटक रही है, उसीको पकड़कर तुम भीतर कूद पड़ो, और दरवाजा खोल दो।"

रञ्जनलालने तुरत आदेश पालन किया। बातकी बातमें पचासों डाकू जासूसके मकानमें घुस पड़े।

लक्ष्मी सोती है किस घरमें अब इसीकी खोज होने लगी, चारोंओर डाकुओंको छिपाकर खड़ा करके गुलामेबाद रञ्जनलालके साथ चारों तरफ घूम घूमकर कमरोंमें देखने लगा, एक कमरेके जंगलेसे उन्होंने देखा कि कमरेमें एक धुंधला प्रदीप जल रहा है, और एक सुन्दर युवती पलङ्गपर अकेली

सोई हुई है। गुलामेबाद की पाप-दृष्टि उसपर पड़ते ही उसने कहा—"दरवाजा तोड़ो।"

रञ्जनने कानमें कहा—"यदि लक्ष्मी न हो?"

गुलाम—सरस्वती भी हो तो कोई हर्ज नहीं, ऐसा रूप मैंने कभी नहीं देखा, वास्तवमें वह लक्ष्मी न थी, अभागिनी शकुन्तला थी, लक्ष्मी और शकुन्तला एक ही घरमें सोती थीं; परन्तु उस रातको लक्ष्मीकी मांकी तबीयत खराब रहनेके कारण वह अपनी माताके पास ही सोई थी।

एकाएक एक जोरका शब्द हुआ, चारों तरफ मशालें जल उठीं। शकुन्तलाकी नींद टूट गयी, उठते ही उसने देखा कि झनझनाहटके साथ दरवाजा तोड़कर तीन चार आदमी उसकी ओर लपके आ रहे हैं। यह देखते ही वह भयसे मूर्च्छित हो गई।

रञ्जनलाल बहुत ताकतवर आदमी था, उसने अकेले शकुन्तलाको पीठपर लाद लिया। शब्द और मशालकी रोशनीसे घर के सबलोग जाग पड़े थे। डाकू डाकूकी पुकार चारों तरफ होने लगी। नौकर-चाकरोंके सजग होते, सिपाहियों के आते आते डाकू शकुन्तलाको लेकर नौ दो ग्यारह हुए।

डाकुओंके चले जानेपर चारों तरफ खोज ढूँढ करने पर पता लगा, कि शकुन्तला नहीं है। तारा और लक्ष्मी अपनी यौवन योगिनी सखीके लिये ढाढ़े मार-मारकर रोने लगीं। ताराकी रुलाई किसी प्रकार रुकी, परन्तु लक्ष्मी किसी प्रकार चुप ही न होती, उसको सबसे अधिक दुःख इसी बातका था कि

उसीके कारण सखीपर यह आपद आयी है; यदि वह अपनी सखीको बुलाकर अपने घरमें न सुलाती तो यह आपद उसपर नहीं आती, सम्भवतः डाकू उसीको चुराने आये थे। भूलसे शकुन्तलाको उठा ले गये हैं।

लोगोंने जब सवेरे ही शकुन्तलाको खोजकर लौटा लाने का दिलासा दिया तब कहीं उसकी रुलाई रुकी।

—***—

# उन्नीसवाँ परिच्छेद

डाकू मूर्छित शकुन्तालाको लिये हुए कृष्णानदीके किनारे गये। वहाँ उन्होंने दो नावें पहलेहीसे तैयार रखी थीं, उसपर चढ़कर उन्होंने तुरत नावें खोल दीं। तीरवेगसे नौका दौड़ने लगी शायस्ताखाँने एकबार पीछे फिरकर देखते ही कहा—"रंजन पीछेसे दो नौका पीछा कर रहीं हैं।"

गुलामेबादने कहा—शायद मछुए मछली पकड़ने जाते हैं।

रंजन—देखो नौकापर खड़ा होकर एक आदमी हमलोगों की ओर देख रहा है।

गुलाम—सचमुच इस नौका चलानेसे आपदमें पड़ना होगा। चलो जंगलमें घुस पड़ें।

रंजन—चलो अब तो सिरको ओखलमें डाल दिया है। जो कहोगे वही करना होगा, अब फिर रंजनलालकी पीठपर मूर्छित शकुन्तला रखी गयी और सब लोग जल्दीसे जंगलमें घुस पड़े। थोड़ी दूर चलते ही रंजनने कहा—ओः छोकड़ी कितनी भारी है। क्षणभरके लिये कोई इसको लो।

रंजनलालसे मजबूत इसमें कोई नहीं था, गुलामेवादने कहा—"चलो भाई थोड़ी दूर और ले चलो, उस मसजिदके खड़हरमें इसको रखकर हमलोग छिप रहेंगे।"

निकट ही एक पुरानी मसजिद थी, उसके चारों तरफ घना

जंगल था, उसीमें शकुन्तलाको लेजाकर उन्होंने रखा, और बोला—"ऐं ! उधरके पत्ते इतने हिल क्यों रहे हैं ?"

सबोंने उधर ही देखा, देखा कि पचास सिपाही उनका पीछा कर रहे हैं।

रंजनने कहा—भागो, जान रहेगी तो बहुत छोकड़ी मिलेंगी।

गुलामेबाद—एकबार खड़ा होकर दोदो हाथ देखा जाता।

रंजन—यदि और भी दो एक नौका सिपाही पीछेसे आते हों ?

गुलाम—खड़े तो हो जाओ !

रंजन—तुम्हारा दिमाग आज खराब हो गया है, मैं नहीं ठहर सकता, इतना कहकर रंजन भाग खड़ा हुआ, रंजन भागा तो शायस्ता कब ठहर सकता था, उसने भी अनुसरण किया, इसी प्रकार एक एक करके भागने लगे, गुलामेबाद ही अकेला कैसे ठहर सकता था, वह भी भाग खड़ा हुआ। शकुन्तला ही अब खण्डहरमें अकेली पड़ी रही।

जो सिपाही आये थे, वे राजकीय सिपाही थे। उस समय चारोंओर डाकुओंका उत्पात देखकर उसका दमन करनेके लिये उदयसिंहने एक विशेष व्यवस्था की थी, उन्होंने एक दल जासूसोंको रातके समय चारों तरफ घूमघूमकर देखभाल करनेके लिये नियुक्त किया था, जहाँ कहीं चोरी डकैतीकी सम्भावना होती थी, उसको जानकर जासूस तुरत थानेमें खबर देते थे। थानेमें हरवक्त पुलिस हथियारबन्द लैस होकर तैयार रहती, खबर पाते ही वह उस स्थानपर पहुँच जाती थी। रंजन तथा

गुलामेबादने जिस आदमीके पैरकी आहट पायी थी वह जासूस ही था, उसने तुरत पुलिसको खबर दी, परन्तु पुलिसके मकान पर पहुँचते न पहुँचते डाकू डकैती करके निकल आये थे। पुलिसके सिपाही डाकुओंका पीछा करने लगे थे, जंगलमें आते आते उनसे मुठभेड़ हुई, डाकुओंको भागते देखकर उन्होंने गोली चलाना आरम्भ किया, भागकर भी बचने की सम्भावना न देखकर डाकू फिर लौटकर खड़े हो गये और लगे सिपाहियों पर वार करने, बहुत देरतक दोनों दलोंमें मुठभेड़ होती रही, इतनेमें किसी तरफसे कई एक घुड़सवार वहाँ आ पहुंचे। उन्हें देखते ही डाकुओंके पैर उखड़ गये, और वे भागने लगे, घुड़सवारने आते ही बन्दूक छोड़ना आरम्भ किया, उसकी गोलीसे कितनेही डाकू धराशायी हुए। गुलामेबादने जब देखा कि घुड़सवार सरदारसे ही उसके दलकी सबसे अधिक हानि हो रही है, तो उसने उसीको लक्ष्य करके अपनी बन्दूक चलाई, परन्तु घुड़सवारने निशाना बचा लिया। अब गुलामेबादकी बारी आयी। घुड़सवारने निशाना लगाकर एक ऐसी दोनली गोली छोड़ी कि वह गुलामेबादकी छातीमें जा लगी, उसीसे उसका काम तमाम हो गया। बाकी डाकुओंने अब बचनेका उपाय न देखकर आत्म समर्पण किया अभिवादन करके पूछा—"आप किधरसे आ निकले ?

घुड़सवारयोद्धाने हँसकर कहा—"मैं किसी कामसे इधरही से जा रहा था, विपदमें देखकर सहायताके लिये दौड़ आया हूँ।"

एक सिपाहीने कहा—"अब कहाँ जायँगे ?"

घुड़सवार—तुमलोग नगरमें जाओ मैं जिस कामके लिये जा रहा था, उसे पूरा करके लौटूँगा।

सिपाही डाकुओंको लेकर चले गये, घुड़सवार लड़ाईकी थकावट दूर करनेके लिये घोड़ेसे उतरकर वहीं बैठ गया उसके साथ जो सिपाही आये थे, वह भी वहीं बैठ गये। उनलोगोंको वहाँ बैठे बहुत देर न हुई थी कि सहसा जंगलके भीतरसे रमणीकी करुण-क्रन्दन-ध्वनि सुन पड़ी। उसको सुनतेही सहसा घुड़सवारके शरीरमें रोमांच हो आया, उन्होंने अपने साथियोंसे कहा—"तुमलोग जरा यहीं ठहरो, मैं देखूँ तो सही, इस निर्जन जंगलमें कौन रो रही है।" इतना कहकर घुड़सवार शब्दको लक्ष्य करके चल पड़ा, कुछ दूर जाते ही एक पुरानी मसजिदका खण्डहर मिला। उसे मालूम हुआ कि इसीके भीतरसे शब्द आ रहा है, वह मसजिदके सभी दालानोंको एक एक करके देखने लगा। सभी टूटे फूटे थे, वर्षों का सड़पात और जंजाल उनमें भरा था। किसीमें मनुष्यके रहनेका नामोनिशान भी न था, देखते देखते अश्वारोही एक हलके दरवाजेपर आकर खड़ा हो गया, उसीके भीतरसे रमणीकी क्रन्दनध्वनि आ रही थी। भीतर प्रवेश करके अश्वारोहीने देखा कि फर्शपर धूल में एक रमणी लोटी पड़ी है, रमणी अब भी बेहोशीमें है। बीच बीच में जोर से कराह उठती है, अश्वारोहीने तुरत कमरेकी खिड़कियां खोल दीं। प्रभातका प्रकाश घरमें पहुँचते ही रमणी का चेहरा देखकर अश्वारोही सिहर उठा।

अश्वारोही ने ध्यान देकर देखा, उसका सन्देह दूर हो गया वह वही मुख था। बांई आंखके नीचे जो तिल था, वह भी

वर्तमान था। उसका सारा शरीर कांपने लगा, एकबार सोचा चला जाऊँ। फिर मनमें आया क्या इसीको इन्द्रियदमन कहते हैं, यदि आगको देखते ही घी पिघल जाय तो उसकी कठोरता कहाँ रही, भगवान चाहे जो करें, इस रमणीकी शुश्रूषा करनी चाहिये। शायद डाकू इसे यहां उठा लाये हों, डरसे बेहोश हो गई है, परन्तु यह गोलकुण्डा कैसे आई? यहां से तो वह गांव बहुत दूर है, मैं भ्रममें तो नहीं पड़ा हूँ, परन्तु ध्यानसे देखकर उसने कहा—"नहीं, भ्रम तो नहीं, यह ठीक वही है, जरूर वही है।"

अश्वारोहीने चद्दरके खूंटसे एक थैली खोली, उसमें औषधियां भरी थीं। एक जड़ी को सुंघाते ही थोड़ी देरमें युवती ने आखें खोलीं और एक लम्बी सांस लेकर कहा—"लक्ष्मी।"

अश्वारोहीने कहा—"लक्ष्मी कौन? वह यहां नहीं है, तुम एक जंगलमें हो, डाकू तुम्हें उठा लाये हैं।"

युवतीने फिर आखें मूंद लीं, थोड़ी देरके बाद सांस लेकर फिर वह कहने लगी—हाँ, याद पड़ा। डाकू घरमें घुसे थे, दरवाजेके गिर पड़नेसे मैं मूर्छित हो गई थी इसलिये तुम लोग पकड़ कर ला सके हो, नहीं तो जीते जी मैं तुमलोगोंके हाथमें न पड़ती। अब तुम मुझे क्या करोगे, मैं अनाथिनी बाल विधवा हूँ, मेरी शरीर न छुओ, मुझे छोड़ दो चली जाऊँ।

अश्वारोहीने कुछ भी न कहा, रमणी आँख मूँदे ही मूँदे कहने लगी—मैं बालविधवा ब्रह्मचारिणी हूँ। ब्रह्मचारिणी को छूनेसे मंगल नहीं होता, मुझे छोड़ दो मैं पतिके चरणोंका ध्यान करती हुई चली जाऊँ।

अश्वारोहीके नेत्रोंमें आँसू भर आये, उसने कहा—"वे नही हैं।"

आँखें मूदे ही मूदे शकुन्तलाने पूछा—"कौन नहीं हैं ?"

अश्वारोही—डाकू।

शकुन्तला—क्या हुए ?

अश्वारोही—बादशाही फौज उन्हें पकड़ ले गई है।

शकुन्तला—मुझे क्यों नहीं ले गये हैं ?

अश्वारोही—तुम्हें वे लोग देख नहीं पाये थे।

शकुन्तला—तुम कौन हो ?

अश्वारोही—संन्यासी।

शकुन्तला—ठीक कहते हो, तुम संन्यासी हो, देवता हो, तुम्हारे चरणोंकी तरफ क्या मैं देख सकती हूँ ?

अश्वारोही—तुम्हारी इच्छा।

शकुन्तला ने आँखें खोलीं परन्तु तुरत ही सिर चक्कर खाने लगा, और उसने तुरत आँखें मूँद ली, शकुन्तला क्या मर गई है, क्या वह स्वर्गमें है कि ऐसा दृश्य देख रही है ! यह स्वप्न तो नहीं है ?

फिर धीरे धीरे उसने आँखें खोलीं, फिर वही चिराराध्य मूर्त्ति सामने बैठी मिली, इसबार वह उठ बैठी और अपने कपड़े सम्हालकर बोली—"मैं स्वप्न तो नहीं देख रही हूँ ?"

अश्वारोही—नहीं, स्वप्न नहीं देखती। ठीकही देख रही हो, अब घर चलो।

शकुन्तलाकी दोनों आँखोंसे आनन्दाश्रु गिरने लगे, अश्वा-

रोहीकी भी आँखें भर आयीं। उसने कहा—"पैदल तो जा नहीं सकोगी ?"

शकुन्तला—जा सकूँगी, परन्तु स्वप्न तो न टूटेगा।

अश्वारोही—नहीं।

शकुन्तला—अच्छा तो चलो।

अब दोनों मसजिदसे बाहर निकले, जहाँ और सिपाही बैठे थे, वहीं वे दोनों आये, अश्वारोहीने एक सिपाहीको बुलाकर कहा—"अभी खास महलमें जाओ और एक पालकी और एक दासीको लिवा लाओ।"

दो सिपाही तुरत नदी पार होकर गोलकुण्डाकी तरफ चले गये, पालकी आनेपर उसपर शकुन्तलाको चढ़ाकर अश्वारोही राजप्रासादकी तरफ चले, जहाँ जा रहे थे, वहाँका जाना अभी स्थगित रहा।

---

# बीसवाँ परिच्छेद

एक महीनेके करीब सीमान्त प्रदेशमें रहकर काश्मीराधिपतिसे राज्यकी सीमाका झगड़ा मिटाकर उदयसिंह गोलकुण्डा लौट आये हैं, रामकृपालसिंह आदि जो लोग उनके साथ गये थे, वे लोग भी लौट आये हैं।

माँ बेटेमें बातें हो रही थीं, तारा और लक्ष्मी एक दूसरे कमरेसे सुन रही थीं।

रामकृपालसिंहने कहा—माँ तुम्हारी लड़की राजराजेश्वरी होगी, उदयसिंह जैसे ही प्रतापशाली हुए हैं, वैसे ही रूप गुणके भी वह निधान ही हैं, आचार व्यवहार और शील चरित्र भी पदके लायक ही है। माँ, तुम आनाकानी न करो उन्हींके साथ लक्ष्मीका विवाह होने दो।

माता—तुम्हारा अनुरोध क्या मैं भर सक नहीं मानती? वह लड़ैता जवान है। कब किस लड़ाईमें मर जाय, इसका ठीक नहीं।

रामकृपाल—गरीबसे यदि तुम लड़कीका विवाह करो तो उसको भी तो डाकू मार सकते हैं, वह भी तो राजकर्मचारियोंसे सताया जा सकता है?

माता—सो तो ठीक है; अच्छा, तुम्हारी यही इच्छा है, तो उन्हींके साथ लड़कीका विवाह करो।

रामकृपालसिंह खुशीसे नाँच उठे, उन्होंने कहा—"हुक्म देती हो, जाकर विवाहका दिन पक्का करूँ?"

माता—हाँ, जाओ।

रामकृपालसिंह हँसते हुए बाहर चले गये, उनकी माता जो आज इतनी जल्दी राजी हो गयी, उसका कारण यही था, कि जिस दिन उदयसिंह सीमान्त प्रदेशसे लौटकर नगरमें प्रवेश कर रहे थे, उस दिन उनका जुलूस रामकृपालसिंहके घरके सामनेसे ही जा रहा था, रामकृपालसिंहकी माताने मकानकी छतसे उदयसिंहको देखा था, उन्हें ऐसा मालूम हुआ था, मानों रामकृपालसिंह अहेर खेलकर लौटा आ रहा है, उसी दिनसे उनके मनमें यह बात बैठ गयी थी, कि जैसी सुन्दर मेरी लक्ष्मी है, उसके उपयुक्त यह सुन्दर वर भी होगा। इसीको जामाता बनाना चाहिये।

ताराने लक्ष्मीका चिबुक पकड़कर कहा—सुना ?

लक्ष्मी—क्या ?

तारा—विवाह।

लक्ष्मी—तुम्हारा ?

तारा—वही सही। मेरा तुम लो, मेरा फिर नया हो।

लक्ष्मी—नयेके लिये बड़ी लालसा है।

तारा—पुराना तो दखलमें ही नहीं आता।

लक्ष्मी—तुम जो कहो, शकुन्तलाके बिना मुझे कुछ भी नहीं सुहाता, न जाने बेचारीकी कैसे जान गई है।

तारा—बेचारीकी जान गई है, या डाकुओंका भात रींधती है, कौन कह सकता है।

लक्ष्मीका मुख गुस्सेसे लाल हो गया, ताराकी तरफ एक दृष्टिसे देखती हुई वह बोली—"तुम बड़ी बज्जात हो चुल्लूभर

पानीमें डूब क्यों नहीं मरती? हिन्दूकी लड़की होकर हँसते हँसते कहती हो कि एक ब्राह्मणी ब्रह्मचारिणी डाकुओंका भात रींधती है। शकुन्तलाको क्या डूब मरनेके लिये पानी नहीं मिलेगा।"

ताराने मुस्कराते हुए कहा—"सतीशिरोमणि! तुम अपने ही समान सबको समझती हो। हिन्दूकी लड़की क्या दूसरेका भात नहीं रींधती, जितनी बाजारू वेश्यायें हैं, वे क्या सभी मुसलमानिनी हैं, हिन्दू उनमें कोई भी नहीं है। जो नहीं रींधती वह हिन्दू होकर भी नहीं रींधती और मुसलमान हो कर भी नहीं रींधती, जो रींधती हैं, वह हिन्दू होकर भी रींधती हैं, मुसलमान होकर भी रींधती हैं। घटनास्रोत मनुष्यको कब किस ओर ले जाता है, कोई कह नहीं सकता।

लक्ष्मी—मैं तुम्हारी बातें सुनना नहीं चाहती, शकुन्तला मर गई है!

तारा—ठीक वह भूत होकर पेड़की डाली डाली घूमती है।

लक्ष्मी—दत, वह भूत होने क्यों जायगी।

तारा—आत्महत्या करके यही होता है?

लक्ष्मी—सतीत्व-रक्षाके लिये आत्महत्या करना भी खराब मृत्यु नहीं है।

तारा—अच्छा भूत नहीं हुई है, स्वर्गमें गई है, उस बातको अब जाने दो। अब अपने विवाहकी बात सोचो।

लक्ष्मी—मालूम होता है, मुझसे अधिक तुम्हीं सोचती हो।

तारा—सो कैसे?

लक्ष्मी—इसीलिये कि फिर उदयसे भेंट होगी।

ताराकी छाती धड़कने लगी फिर उदयसे भेंट होगी, सचमुच मैं अपनेको कैसे सम्हाल सकूँगी। हाय, भगवान तुम्हारी कैसी मर्जी है ?

लक्ष्मीने पूछा—क्या सोचती हो।

तारा—यही सोचती हूँ, कि तुम रोज रोज ठुनहच दोगी, मनमें आयेगा तो अपने स्वामीसे कह भी दोगी कि मेरी भौजी तुमसे विवाह करनेके लिये पागल हुई थी।

लक्ष्मी—तुम्हारे पैरों पड़ती हूँ, भौजी ! फिर मैं ऐसी बात जबानपर भी न लाऊँगी।

रात्रि कोई एक घण्टे जानेपर रामकृपालसिंहने अपने सोने के घरमें प्रवेश किया, लक्ष्मी अब भी वहाँ बैठी ताराके साथ बातें कर रही थी। भैयाको देखते ही वह उठकर कमेरे से निकल भागी, ताराने रामकृपालसिंहकी ओर देखकर कहा—"बहनोईको पाकर क्या घरके सब लोग भूल गये ?"

रामकृपालसिंहने हँसकर पूछा—"कैसे ?"

तारा—अब तो दर्शन ही नहीं मिलते, भाईको जब ऐसा जादू चलाया है, तो बहनको न जाने कैसा जादू चलायेगा।

रामकृपाल—बहनको भौजीको भी तो चला सकता है।

तारा—विवाहका दिन क्या स्थिर हुआ ?

रामकृपाल—हाँ, शुक्ला द्वादशीको।

निर्दिष्ट तिथिको बड़े समारोहके साथ बारात रामकृपाल-सिंहके दरवाजेपर आ पहुँची। बड़े समारोहके साथ उसकी अगवानी भी हुई, और एक विस्तृत महलके भीतर बारात ठहराई गयी। अब दोनों तरफसे विवाहकी नियमित खातिरदारी और लेन देन होने लगे, देखते देखते विवाहका शुभ लग्न भी

आ गया। बड़े बाजे-गाजेके साथ कुमारी लक्ष्मीबाईके साथ उदयसिंह बहादुरका ग्रन्थ-बन्धन हुआ और भाँमर फिरी। वैवाहिक क्रियायें सभी सम्पन्न होनेपर दुलहा जनवासेमें भेजा गया।

जनवासेका भी विचित्र ही रङ्ग था, मुहल्लेभरकी सुन्दरी बहुएँ और लड़कियाँ हँसी ठठोली करनेके लिये जनवासेको पधारे हुई थीं। वरके पहुँचते ही चारो तरफसे नोच खसोट और हँसी मजाक होने लगी, इसी समय सहसा कमरेका दरवाजा खुला और एक सुन्दरी युवतीने भीतर प्रवेश किया। सभी रमणियाँ देखकर आश्चर्य्यित हो गईं, क्योंकि वह शकुन्तला थी। विधवा-वेशमें नहीं, सधवा-वेशमें माथेमें सिन्दूर हाथ में गहना, साड़ी पहने, सभी सुहाग बनाये।

शकुन्तलाने हँसते हुए जाकर कहा—"मैं आई हूँ।"

उदयसिंहने शकुन्तलाकी ओर देखकर मुस्कराकर सिर झुका लिया। घूँघटके भीतरसे शकुन्तलाका वेश देखकर लक्ष्मी बहुत कुपित हुई, उसने समझा यह कुल-मान खोकर यहाँ निर्लज्जता पूर्वक मुँह दिखाने आई है, वह क्रोधसे शकुन्तलाकी ओर देखने लगी।

शकुन्तला उसके मनका भाव समझ गई, उसने मुस्कराते हुए कहा—"मेरे स्वामी मिल गये हैं, अब मैं फिर सौभाग्यवती हुई हूँ।"

लक्ष्मी अब अपनेको सम्हाल न सकी, शकुन्तलाका हाथ पकड़कर दूसरे कमरेमें लेजाकर बोली—"यह क्या बात है।"

शकुन्तला—डाकू मुझे जंगलमें फेंककर भाग गये थे, मैं

बेहोश हुई रातभर वहाँ पड़ी थी। सवेरे मूर्च्छा टूटनेपर मैंने देखा कि मेरे इष्टदेव स्वामी सिरहाने बैठे हुए हैं।

लक्ष्मी—अरी! तुझे डर नहीं लगा, मरा स्वामी?

शकुन्तला—मुझे देखकर तुम्हें डर नहीं लगा है, मैं भी तो मर ही गई थी।

लक्ष्मी—आगे?

शकुन्तला—आगे पालकीपर चढ़ाकर वह राजमहलमें मुझ को ले आये।

लक्ष्मी—राजमहल! क्या राजमहलमें ही तुम्हारे स्वामी रहते थे?

शकुन्तला—राजमहलमें रहते नहीं थे, तुम्हारे ये और मेरे वह दोनों जने ही एक दिन यहाँ आये थे। मैं यहाँ थी नहीं, नहीं तो पहचान लेती, उदयसिंह और वह एक दिन भिखमंगा बनकर यहाँ गीत गा गये थे।

लक्ष्मी—सच, वही थे उनका नाम क्या है?

शकुन्तला—( हँसकर ) ईश्वरका जो दूसरा नाम है।

लक्ष्मी—ओह! भगवान! बड़ी खुशीकी बात है, पूछा नहीं इतने दिन निकट ही थे, तुम्हारी खोज खबर नहीं ली, रहेंगे या फिर भागेंगे।

शकुन्तला—बहुत बातें हैं, पीछे कहूँगी, अभी जनवासे में चलो?

लक्ष्मी—मैं सुनकर ही जाऊँगी।

शकुन्तला—उन्हें कैसे मालूम होता कि मैं यहाँ आई हूँ। वह तो जानते थे कि मैं अयोध्या में अपने मकानमें ही हूँ। मेरे

यहाँ चले आनेपर उन्होंने अयोध्यामें चुपके चुपके मेरी खोज की थी। न मिलनेपर निराश होकर लौट आये थे!

लक्ष्मी—लापता क्यों हुए, पूछा था?

शकुन्तला—पूछा था, वह कहते थे कि संसारपर विराग होनेसे ही वह चले गये थे। और जाते समय अपनी मृत्युका प्रचार भी करते गये थे।

लक्ष्मी—तुमने तो विधवा-वेश पकड़ा था फिर किस मतसे सधवाका वेश धारण करती हो?

शकुन्तला—महात्मा भास्करतीर्थने कहा है कि स्वामीसे मिलनेके लिये ही विधवा ब्रह्मचर्यव्रतका पालन करती है। इहलोकमें हो या परलोकमें हो स्वामीको पाना ही उसका उद्देश्य है। स्वामीके मिलनेके लिये स्त्रीको कोई भी बाधा नहीं है।

लक्ष्मी—तुम्हें देखे बिना मुझे कल नहीं पड़ती थी। चलो एक गाना गाओ।

शकुन्तला—सो कैसे होगा। मैं इस समय दुलहेकी दुलहिनकी मौसी बनी बैठी हूँ। मैंने तुम्हारे वरको अपने हाथों सजाकर पालकी पर बैठाया है।

लक्ष्मी—इसी लिये शायद पहले नहीं आ सकी हो।

अब दोनों कोहवरमें गयीं जहाँ युवतियाँ वरके साथ आमोद प्रमोद कर रही थीं। शकुन्तलाकी बात सुनकर वे भी खुश हुईं।

---

# इक्कीसवाँ परिच्छेद

विवाह हुए आज एक महीना हो गया है, आज उदयसिंह निमन्त्रित होकर अपनी ससुरालमें आये हैं।

गर्मीका दिन है, सन्ध्या समयकी मृदु मन्द वायु बह रही है। सन्ध्याकी मधुर किरण रामकृपालसिंहके अन्दर महलके विस्तृत उद्यानमें तरल सुनहले रङ्गकी तरह झलक रही है। उद्यानकी उत्तरी दिसामें कामिनीलताकी आड़में एक आमके पेड़की पतली डाली जमीनको छूकर सीधी चली गयी है। ऊपरसे दाहिने और बायें दो पतली डालियाँ नीचे को लटक पड़ी हैं। उसी लम्बी डालपर बैठकर और दोनों पतली डालोंको पकड़कर तारा बैठी हुई है—उसके सिरका कपड़ा खुला हुआ है। खुली हुई वेणीके केश हवामें उड़ उड़कर सारे अङ्गपर सर्पकी तरह रेंग रहे हैं। दोनों पैर लटक रहे हैं। शरीरके बोझसे शाखा कभी हिल रही है, कभी नीचे झुकती, कभी ऊपर जाती, कभी दाहिने और कभी बाँयेको हिल जाती है। ताराने अपनी रूप-ज्योतिसे उद्यानको आलोकित कर रखा है। परन्तु उसके नेत्र उदास दृष्टि मलिन चेहरा मुरझाया हुआ है। वह दो युवक-युवतियोंकी ओर आशा शून्य, सुख शून्य, अर्थ शून्य दृष्टिसे देख रही है।

युवक और युवती पुष्पोद्यानमें टहलते हुए घुल-घुलकर बातें कर रहे हैं। युवक उदयसिंह है, युवती उनकी नव विवाहिता पत्नी लक्ष्मी बाई हैं। लक्ष्मीने कहा—"घरमें चलो, शकुन्तलाके आनेकी बात है।"

उदय—शकुन्तलाकी इतनी चिन्ता क्यों ? घर चलनेपर उसके साथ ही गृहस्थी चलानी होगी ?

लक्ष्मी—क्या तुमलोगोंका एकान्त भुक्त परिवार है ?

उदय—एकान्त भुक्त न सही एक संसार भुक्त परिवार जरूर है। हमलोग एकही मकानमें रहते हैं।

लक्ष्मी—मैं उसके साथ बड़े सुखसे रहूँगी।

उदय—मैं तुम्हें पाकर बहुत सुखी हुआ हूँ।

लक्ष्मी—सुख जिसके भाग्यमें होता है, उसे सुख होता ही है। अब चलो।

# उपसंहार।

लक्ष्मीबाईके साथ विवाह करके उदयसिंह बड़े खुश हुए क्योंकि जैसे साहसी, उद्यमी, परोपकारी तथा अच्छे शासन-कर्त्ता वह थे वैसी ही रूपवती, गुणवती, मिष्टभाषिणी, परोपकारिणी तथा सुन्दर स्वभाववाली उन्हें स्त्री मिल गई। यही बात लक्ष्मीबाईके लिये भी हुई, वह जैसी थी उसी प्रकार रुचि अनुकूल उसे वर मिल गया। इस विवाहसे प्रायः सबको प्रसन्नता हुई परन्तु रामकृपालसिंहकी स्त्री ताराका हृदय मसोसा गया, उसकी पुरानी माँग उसकी ननदने छीन ली; परन्तु फौरन ही उसने हिन्दू धर्मकी महत्ताको विचार, तथा पातिव्रत-धर्मका ध्यानकर, उस बातका अधिक असर अपने हृदयपर न होने दिया।

"बोलो हिन्दू-धर्मकी जय।"